न रिष्येत्त्वावतः सखा। ऋग्वेद।

ऋषि दयानन्द जन्मशताब्दी संस्करण सं० ६

ओ३म्

भक्ति-दर्पण

अर्थात्

भक्ति मार्ग के साधन।

स्व० श्री पं० बृहस्पति आर्योपदेशक
तथा
कई प्रसिद्ध आर्य विद्वानों की सहायता से

राजपाल-मैनेजर,
आर्य पुस्तकालय लाहौर ने प्रकाशित किया।

१०वीं बार ५०००] [मूल्य ||=)

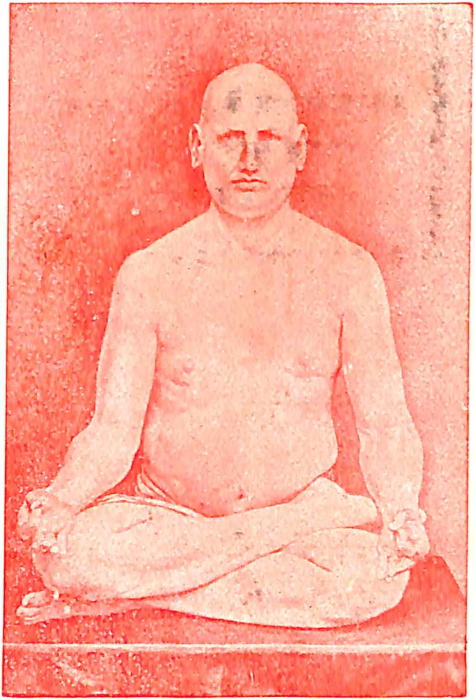
पुत्रोऽहं पृथिव्याः। अथर्व०

३० हज़ार

इस संस्करण के साथ भक्ति-दर्पण
का यह सुन्दर गुटका तीस
हज़ार छप चुका है।

मुद्रक :—पं० महावीर प्रसाद,

विद्याप्रकाश मैशीन प्रैस
चङ्गड़ मुहल्ला अनारकली, लाहौर।



महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती

ॐ

अरजुन देव धर

प्रथम अध्यापक
रानीपुर
कुलगाम

P. Arjannath Dhar
1st teacher
Ranipora.

भूमिका ।

चिरकाल से मैं इस आवश्यकता को अनुभव कर रहा था, कि कोई ऐसी पुस्तक तैयार की जाय, जो वैदिक धर्म में नये प्रविष्ट होने वाले मनुष्यों (स्त्री अथवा पुरुषों) को आत्म-प्रसाद के रूप में दी जाय, जिसके द्वारा सर्व साधारण को ज्ञात हो, कि इस महान् ईश्वरीय धर्म में कैसे २ रत्न भरे पड़े हैं, और इस दुर्लभ मनुष्य जीवन को सफल बनाने के लिए मनुष्य के क्या २ कर्तव्य हैं।

मैंने अपने मित्र (स्वर्गवासी) पं० बृहस्पति जी आर्योपदेशक के सामने इस आवश्यकता को प्रकट किया। वह मुझ से सहमत हुए, और उन्होंने मेरे साथ मिल कर इस उपयोगी पुस्तक को तैय्यार किया।

पाठकों को यह हर्ष सम्वाद सुनाते हुए मेरा हृदय प्रफुल्लित होता है, कि इस छोटी सी, परन्तु अति उपयोगी पुस्तक को आर्य्यसमाज के रत्नों तथा जनता ने इतना अपनाया है कि थोड़े ही समय में इसके ८ संस्करण निकल गए। अब यह ९वां संस्करण आप के हाथों में है। इस पुस्तक को अधिक उपयोगी बनाने में मुझे आर्य्यसमाज के प्रसिद्ध विद्वान् पं० भगवद्दत्तजी बी. ए., पं० परमानन्द जी बी०ए०, ला० नन्दलाल जी म० मदनजीत जी आर्य्य तथा पं० वेदमित्र जी वाचस्पति आदि कई विद्वानों ने जो सहायता दी है, उसके लिए मैं उनको हार्दिक धन्यवाद देता हूँ।

पण्डित वेदमित्र जी ने आठवें संस्क-

रण का संशोधन बहुत अच्छा किया था, अब भी उन्हीं को संशोधन का तथा अन्य उपयोगी बातें बढ़ाने का कार्य सौंपा गया है। मैं उन का विशेष धन्यवाद करता हूँ।

अब यह पुस्तक इतनी उपयोगी हो गई है कि साधारण मनुष्य भी इसको पढ़ कर वैदिक धर्म का अनुयायी हुए बिना नहीं रह सकता।

आशा है, कि आर्य्य समाजें अथवा आर्य्य समाज की अन्य संस्थायें दिल खोलकर इस पुस्तक का प्रचार करेंगी, और प्रत्येक नए प्रविष्ट होने वाले मेम्बर को इस की एक प्रति आत्म-प्रसाद के रूप में देंगी।

सरस्वती आश्रम, लाहौर
२. ११. १९२७

विनीत
राजपाल

विशेष कथन

प्रिय पाठक वर ! मुझे यह देख कर अत्यन्त प्रसन्नता होती है, कि संसार प्रतिदिन श्री स्वामी दयानन्द जी महाराज के बताये मार्ग की ओर बड़ी तेज़ी से आ रहा है । "भक्ति-दर्पण" इतनी संख्या में इतने थोड़े समय में लोगों की जो सेवा कर रहा है, इस उत्साह जनक बात ने मुझे भी आपकी सेवा करने की प्रेरणा की है । महाशय राजपाल जी का अत्यन्त धन्यवाद करता हूँ कि जिन्होंने इस सेवा का कार्य्य मुझे सौंपा है । इस संस्करण में निम्न लिखित बातें बढ़ा दी गई हैं— (१) सब भजनों की सूची बना दी गई है। (२) सब वेद मन्त्रों तथा श्लोकों

की आकारादि क्रम से सूची बना दी गई है। (३) प्रार्थना के मन्त्र सात से बढ़ा कर दस कर दिए गए हैं। इस भाग-समूह का नाम "ब्रह्म-स्त्रोत्र" रखा गया है। (४) हवन मन्त्रों में बहुत कठिनाई पड़ती थी, अब "संस्कार विधि" के अनुसार क्रमादि सब कुछ ठीक कर दिया है। प्रत्येक बात पृथक् २ कर के दिखला दी गई है। अब हवन के करने कराने में सुभीता होगा। (५) इस पुस्तक में चार प्रार्थनाएँ दी हुई हैं, उन से पहले अब तीन चार प्रार्थना के मन्त्र रख दिए गए हैं। (६) स्वाध्याय से पूर्व दो श्लोक इस की आवश्यकता तथा फल द्योतक रख

दिए गए हैं। (६) स्वाध्याय के पीछे वेदादि सच्छास्त्रों के ४५ सुन्दर, शिक्षा प्रद, वाक्य रख दिए गए हैं। यह वाक्य आर्य्य समाज के सिद्धान्तों पर प्रकाश डालते हैं। आज कल वेद का स्वाध्याय न रहने से उन के मन्त्रों को हम स्मरण नहीं करते और न कर सकते हैं। परन्तु यह छोटे २ वाक्य सहज में याद हो सकते हैं। आप अपनी सन्तान को भी इन्हें कण्ठाग्र करा सकते हैं। इस बात पर स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में बड़ा बल दिया है। (८) उत्तम स्वास्थ्य प्राप्त करने के लिए कुछ एक उत्तम नियम भी दे दिए गए हैं, वह भी बहुत लाभ

कारी हैं। इस प्रकार और भी यत्र तत्र उचित तथा अधिक उपयोगी परिवर्तन तथा संशोधन कर दिया है। मैं चाहता हूँ, कि आर्य्य समाज का परिचय देने के लिए यह एक छोटा सा गुटका "आदर्श" पुस्तक का रूप धारण करे। आप से भी सनम्र प्रार्थना है, कि यदि कोई अच्छी बात सूझे, तो कृपया सूचित करें॥

विनीत:—

स्यालकोट } वेद मित्र विद्यार्थी

विषय सूची

मन्त्र सूची

अ

विषय

विषय		पृष्ठ
श		
शन्न इन्द्राग्नी	...	२४१
शन्न इन्द्रो वसुभि	...	२४४
शन्नः सत्यस्य	...	२४८
शन्नः सूर्य उरु	...	२४५
शन्नः सोमो	...	२४५
शन्नो अग्निर्ज्योति	...	२४३
शन्नो अज एकपाद्	...	२४९
शन्नो अदितिर्भवतु	...	२४६
शन्नो देवा विश्वदेवा	...	२४७
शन्नो देवी०	...	१४१
शन्नो द्यावा पृथिवी	...	२४४
शन्नो धाता	...	२४२
शन्नो वातः पवता	...	२५०
शमो दमस्तपः	...	६३

(शेष मंत्र सूची ४४८ पृष्ठ पर देखो

ओ३म्

भक्ति-दर्पण

मनुष्य जीवन की सफलता के साधन ।

भक्ति मार्ग के यात्रियों, आर्य्यसमाज अथवा उसके साथ सम्बन्ध रखनेवाली अन्य संस्थाओं (आर्य्य कुमार सभाओं इत्यादि) के सभासदों, स्त्री पुरुषों तथा पाठशालाओं के विद्यार्थियों के लिये जिन बातों का जानना वा स्मरण करना

अत्यन्त आवश्यक है, उनका यहां संक्षिप्त रीति से उल्लेख किया जाता है। विस्तृत वर्णन अगले पृष्ठों में किया जायेगा ।

(१) आर्य समाज और उस के साथ सम्बन्ध रखने वाली संस्थाओं में प्रवेश करने वाले प्रत्येक सभासद् का कर्तव्य है, कि वह आर्यसमाज के नियमों को स्मरण करे, अर्थात् उसे सब नियम कण्ठ-स्थ हों । (आर्य समाज के नियम इस पुस्तक के अन्त में दिये गये हैं ।)

(२) प्रत्येक सभासद् को उस के नित्य कर्म्मों का स्मरण होना चाहिये और वह अपना ऐसा समय-विभाग बनाए कि जिस से यथासम्भव नित्य कर्मों में अनध्याय न हो सके ।

(३, आर्यसमाज के वैज्ञानिक (इल्मी)

और क्रियात्मक (अमली) सिद्धान्तों का बोध प्रत्येक सभासद् को होना चाहिए। उनका विस्तृत वर्णन सत्यार्थ प्रकाश में किया गया है, परन्तु संक्षिप्त रीति से यह सिद्धान्त अगल पृष्ठों में वर्णन किये गये हैं।

(४) यदि प्रत्येक सभासद् वेदों और शास्त्रों को पढ़ नहीं सकता, तो कम से कम उसे यह तो ज्ञात होना चाहिए, कि वेद कितने हैं, दर्शन कितने हैं, उपनिषदें कितनी हैं, वेदों के अङ्ग तथा उपाङ्ग कौन २ से हैं। संक्षिप्त रीति से वैदिक धर्म सम्बन्धी साहित्य का चित्र भी इस पुस्तक में दिया गया है।

(५) प्रत्येक सभासद् को यत्न करना चाहिए, कि वह आर्यसमाज के प्रवतक महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों को आर्य-भाषा में

पढ़ सके । महर्षि के ग्रन्थों को समझने के लये यह आवश्यक है, कि वे आर्य भाषा में पढ़े जायें । आर्य-भाषा अधिक से अधिक एक सप्ताह में सीखी जा सकती है । यदि प्रत्येक भाई बहिन के पास इतना समय नहीं, कि ऋषि के ग्रन्थों को पढ़ सके, तो कम से कम उसे यह तो अवश्य ज्ञात होना चाहिए, कि उन्होंने मेरे हित के लिए कौन २ से ग्रन्थ किस २ विषय पर रचे हैं । उन ग्रन्थों के नाम और विषय भी अगले पृष्ठों में दिये गये हैं ।

(६) प्रत्येक आर्य सभासद् को अपने और अपनी सन्तान के जीवन का समय विभाग हर समय स्मरण रहना चाहिए । अर्थात् उसे ज्ञात होना चाहिए कि किस आयु में उसे क्या काम करना उचित है ।

आर्यों के जीवन का कार्यक्रम विस्तृत रीति से महर्षि दयानन्द ने संस्कारविधि में सोलह संस्कारों के रूप में दिया है। इस पुस्तक में केवल उन संस्कारों के नाम प्रमाण और उन का समय दिया गया है, और साथ ही आर्यों के त्योहारों, यज्ञों और पर्वों का भी उल्लेख किया गया है। इस के अतिरिक्त आर्यों के सामाजिक धर्म यम नियम भी लिखे गये हैं।

(७) प्रत्येक सभासद् को सन्ध्या और हवन नित्यप्रति करना चाहिए। नित्य कर्मों में अनध्याय किसी अवस्था में भी नहीं होना चाहिए। इस पुस्तक में प्रार्थना मन्त्र सन्ध्या और हवनमन्त्र अर्थसहित दिए गए हैं।

(८) प्रत्येक सभासद् को प्रार्थना और

उपासना के कुछ मन्त्र भी कण्ठस्थ होने चाहियें, जिन को सन्ध्या तथा अग्निहोत्र के पश्चात् पढ़ कर, परमात्मा से पापों की निवृत्त और सुखों की प्राप्ति के लिए प्रार्थना की जावे।

(९) कुछ प्रार्थनाएं और ईश्वर भक्ति के भजन भी स्मरण होने चाहियें, जिस से कि अपनी सभा में किसी उपदेशक के अभाव की अवस्था में, कोई कठिनाई प्रतीत न हो, और प्रत्येक सभासद् प्रार्थना उपासना और ईश्वर का भजन कराने के लिए भी उद्यत हो सके।

(१०) जिस महान आत्मा ने हमें इस योग्य बनाया कि हम शारीरिक आत्मिक तथा सामाजिक उन्नति और अपने धर्म ग्रन्थों का स्वाध्याय क

सकें, यह बड़ी कृतघ्नता होगी, यदि आर्यसमाज के किसी सभासद् को उन के विषय में कुछ बोध न हो। इस लिए पुस्तक के अन्त में दो चार बातें उस के पवित्र चरित्र के सम्बन्ध में दी गई हैं, जिसने सारे संसार में आर्यजाति का मस्तिष्क ऊंचा किया। यदि धर्म के प्रेमी इस "भक्ति-दर्पण" को उसी श्रद्धा और प्रेम से देखेंगे (पाठ करेंगे) जिस से प्रेरित होकर यह तैयार की गई है, तो प्रतिदिन उन का जीवन उन्नत और हृदय विशाल होता जायगा तथा धर्म में उन की श्रद्धा और भक्ति बढ़ती जायगी।

अब उपर्युक्त सब बातों का उल्लेख किया जाता है:—

आर्यों के नित्य कर्म ।

ऋषि दयानन्द का कथन है, कि 'आर्य' नाम विद्वान्, धार्मिक, और आप्त पुरुष का है । अतः आर्यों के नित्य-कर्म ऐसे ही होने चाहियें, जो धार्मिक, आप्त पुरुषों के योग्य हों ।

प्रातः जागने के समय से ही नित्य कर्मों का आरम्भ हो जाता है । मनु भगवान् कहते हैं:—

"ब्राह्मे मुहूर्त्ते बुध्येत धर्मार्थौ चानुचिन्तयेत् । कायक्लेशांश्च तन्मूलान्वेदतत्त्वार्थमेव च ॥ मनु० ४ । ९२ ॥

ब्राह्ममुहूर्त अर्थात् चार घड़ी रात रहते उठ कर मनुष्य धर्म और अर्थ का

चिन्तन करें, तथा उन शारीरिक कष्टों का भी विचार करें, जो धर्म और अर्थ को उत्पन्न करने वाले हैं, तथा वेद के तत्त्वार्थ का भी विचार करें, क्योंकि उस समय बुद्धि स्वच्छ और चित्त प्रसन्न होता है। परन्तु यह तब ही हो सकता है, जब गृहस्थ लोग रात्रि के ९॥ अथवा १० बजे तक सो जाया करें, क्योंकि स्वास्थ्य के लिये ७ घण्टे शयन करना आवश्यक है। सोने के पूर्व हाथ मुंह धोवें, खाट (चारपाई) पर लेटने के पश्चात् यदि तत्काल ही नींद न आवे तो दो अथवा तीन बार प्राणायाम करके प्रणव (ओ३म्) का जाप करें, निद्रा आ जावेगी। जिस समय निद्रा खुले, उसी समय उठकर बैठ जावें और

प्रार्थना के वह मन्त्र ऊँचे स्वर से पढ़ें, जो इसी पुस्तक में "प्रातः काल की प्रार्थना" के नाम से दिये गये हैं। फिर धर्म का चिन्तन करने के प [illegible] न् उस दिन के करने योग्य कामों का विचार करें। माता पिता के चरण छूएं, उनको स्नानादि करायें। स्त्रियां चक्की पीसें अथवा दही बिलोवें। धर्म का चिन्तन करने के पश्चात् शौचादि से निवृत्त होकर अपनी धर्मपत्नी सहित वायु-सेवन के लिये जावें। लौटकर कुछ व्यायाम करें, पश्चात् स्नान कर सारा परिवार मिलकर सन्ध्या, अग्निहोत्र तथा भजन गान करें। तत्पश्चात् सब नर नारी अलग अलग स्वाध्याय में लग जावें। वृद्ध, युवा, बालक, स्त्री, पुरुष,

सबको ही प्रतिदिन स्वाध्याय करना चाहिये । शास्त्रों का कथन है कि वृद्ध अवस्था से पूर्व मनुष्यों को धर्म का अभ्यास करना चाहिये । धर्म के मर्म को जानने के लिए स्वाध्याय से बढ़कर कोई साधन नहीं । स्वाध्याय के लिए ऋषि दयानन्द कृत ग्रन्थ सब से उत्तम हैं । वेदों और शास्त्रों तक पहुंचने का यह एक मात्र साधन हैं । यदि आलस्य त्याग कर दिनचर्या करने का स्वभाव हो, तो यह सारे काम प्रातः के ७ बजे तक समाप्त हो सकते हैं ।

इनसे निवृत्त होकर सब परिवार यथा-सामर्थ्य दुग्ध अथवा कोई और चीज़ पान करे । फिर अपने २ काम में लग जावें । परन्तु यह बात ध्यान में रखनी

चाहिये, कि कोई काम धर्म के विरुद्ध न हो, भोजन का समय १०, ११ बजे के मध्य में होना चाहिये, वा जैसी अपनी अवस्था हो। भोजन का आटा मोटा. अनछना, चक्की, ख़रास या घराट का हो, मशीन का कदापि न हो। पीने के लिए दूध ख़ालिस होना चाहिए, परन्तु इस के लिए आवश्यक है, कि प्रत्येक आर्य्य के घर में एक २ गाय हो। इससे जहां दूध खालिस मिलेगा वहां गोरक्षा भी होगी। भोजन से पूर्व पितृयज्ञ और बलि-वैश्वदेव यज्ञ कर अर्थात् चूल्हे से अग्नि निकाल उस में आहुतियां डालने के पश्चात् कुत्ते, काक और पतित आदि के लिये भोजन का कुछ भाग पृथक् रक्खें। यदि कोई अतिथि

आजावे, तो सब से पूर्व उसको भोजन करावें। नौकरों को भी पहिले भोजन कराना चाहिये, फिर आप परिवार सहित भोजन करें। भोजन चबाकर करना चाहिये। तीसरा हलका सा भोजन तीसरे पहर को होना चाहिये, जिस में यथासामर्थ्य दुग्ध अथवा फल हों। रात्रि का भोजन सन्ध्या के ७ या ८ बजे तक होना चाहिये। जिस गृह में प्रातः सायं हवन से वायु की शुद्धि का उपदेश दिया गया हो उस गृह में हुक्के की दुर्गन्ध नहीं फैलनी चाहिये। वस्त्र सदा स्वच्छ, स्वदेशी और मकान हवा दार होना चाहिये। दिन भर काम कर चुकने के पश्चात् सायंसमय होते ही फिर सन्ध्या अग्निहोत्र की तैयारी करनी

चाहिये । सायंकाल का अग्निहोत्र और भोजन भी परिवार सहित होना चाहिए । इस से परिवार में प्रेम बढ़ता है । इस समय कभी २ आर्य परिवारों को निमन्त्रण देकर पारिवारिक सत्सङ्ग करने चाहियें । सन्तानों में सदाचार और धर्म के संचार का यह एक बहुत अच्छा साधन है ।

सोने से पूर्व गृहपति को चाहिये कि बच्चों को हाथ मुंह धुलाकर उनसे ईश्वर-प्रार्थना के मन्त्रों का उच्चारण करावे । आर्य सन्तानों को शिक्षा दी जावे, कि वह सोने से पहिले घर के सब बड़ों को श्रद्धा पूर्वक नमस्ते करें और सब के पीछे माता देवी के पांव छूकर नमस्ते कहें और माता आशीर्वाद देकर, उनको सुला

दे। अविवाहित लड़कों वा लड़कियों को सदैव कठोर लकड़ी के तख्ते पर सुलावें, इस से वीर्य-रक्षा में बड़ी सहायता मिलती है।

बिछौना भी स्वच्छ रहना चाहिये। चादर बदलते रहना चाहिये। बिस्तर भी प्रतिदिन धूप में सुखाना चाहिये। रज़ाई में मुंह ढांपकर कभी मत सोओ। इससे स्वास्थ्य की बहुत हानि होती है और न रोशनदान बन्द करो, फिर देखो प्रातः काल सारा परिवार कैसा आलस्यहीन जागता है। इन कामों से दीर्घ आयु, उत्तम सन्तान और बहुत सा धन प्राप्त होता है।

आर्यों की दिनचर्य्या का
समय विभाग ।

शीतऋतु में—प्रातःकाल ५ से ५॥ बजे तक धर्म, अर्थ और काम का चिन्तन प्रार्थना, मन्त्रों का उच्चारण और शौच ।

५॥ से ६॥ बजे तक वायुसेवन (सैर) व्यायाम और स्नान ।

६॥ से ७॥ बजे तक अग्निहोत्र, सन्ध्या और भजन इत्यादि ।

७॥ से ८॥ बजे तक स्वाध्याय आदि । यदि समय अधिक मिल सके तो स्वाध्याय अधिक करना चाहिये, परन्तु आध घण्ट से कम समय तो किसी अवस्था में भी नहीं देना चाहिए । इसके पश्चात् दुग्ध पान करके घर के ज़रूरी

काम कर लें। फिर यदि किसी दफ्तर में काम करते हैं, तो भोजन कर के दफ्तर चले जांय। यदि व्यापार का काम कर रह हों तो दुकान पर चले जांय। पत्र व्यवहार और व्यापार आदि आर्य भाषा द्वारा करें। सारा दिन धर्म पूर्वक काम करें।

सायंकाल को ६ बजे से ७ बजे तक सन्ध्या अग्निहोत्र और भजन आदि।

७ से १० बजे तक खान पान और परिवार सम्बन्धी आवश्यक काम।

ग्रीष्मऋतु में—प्रातःकाल ४ से ४॥बजे तक धर्म और अर्थका चिंतन और प्रार्थना मन्त्रों का उच्चारण तथा शौच।

४॥ से ५॥ बजे तक वायुसेवन व्यायाम, और स्नान।

५ ॥ से ६ ॥ बजे तक सन्ध्या अग्निहोत्र और भोजनादि ।

६ ॥ से ७ बजे तक स्वाध्याय, फिर थोड़ा सा दुग्ध या लस्सी पी कर यदि घर का कोई काम हो, तो वह कर लें, नहीं तो अपने काम पर चले जाँय ।

११ से १२ बजे तक भोजन करें और फिर अपने काम में लग जाँय ।

भोजन करने से पूर्व सारे परिवार को मिल कर यह मन्त्र पढ़ लेना चाहिये—

ओं अन्नपतेऽन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः । प्रप्रदातारं तारिष ऊर्ज्जं नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे ॥ य० ११। ८३॥

सायं ६॥ से ७॥ बजे तक अग्निहोत्रादि ।

७॥ से ९ बजे तक भोजन आदि ।

९ बजे से सारा परिवार सो जाय।

सोने से पूर्व सारा परिवार मिल कर इन मन्त्रों को याद करे।

सोते समय पढ़ने के मन्त्र।

(१)यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति। दूरंगमं ज्योतिषां ज्योतिरेकन्तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥

(य० अ० ३४ मं० १)

भावार्थ - मन जागृत स्वप्न और निद्रा में दूर दूर भागता तथा भटकता है, उस में अनोखी शक्तियां भी विद्यमान हैं। ऐसे वेगवान मन को सदा शुभ विचार वाला बनाना चाहिये। अन्यथा इसकी जो अद्भुत शक्ति है, वही मनुष्य के घात का हेतु हो सकती है।

(२) येन कर्माण्यपसो मनीषिणो, यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः । यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ य० अ० ३४ । मं २

भावार्थ—सब लोग अपने मन के द्वारा ही सब काम करते हैं, शान्ति सम्पत्ति के और अशान्ति तथा विपत्ति के समय में भी मन के द्वारा कर्म होते हैं, इस लिए सिद्ध होता है, कि मन के शुद्ध होने से कर्म भी शुद्ध होंगे और मन के अशुद्ध होने से कर्म अशुद्ध होंगे । इस लिये सदा मन को शुभ विचार और आचार से पवित्र करने का संकल्प करता रहा करे ।

(२) यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च

यज्ज्योतिरन्तर मृतं प्रजासु ॥ यस्मान्न ऋते किंचन कर्म क्रियते, तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु ॥ य ३४ । ३ ॥

भावार्थ—मन के अन्दर, ज्ञान शक्ति, चिन्तन शक्ति, धैर्य शक्ति रहती है। और यह मन प्रजाओं में अमृतमय और तेजोमय है। यह इतना शक्तिशाली है, कि इस के बिना मनुष्य कोई भी कर्म नहीं कर सकता। सब कर्म इसी की सहायता से किए जाते हैं। इस लिये इस को शुभ संकल्प वाला बनाना चाहिए।

(४) येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतमम्रृतेन सर्वम्। येन यज्ञस्तायते सप्त होता, तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु

य० अ०, ३४। मं० ४॥

भावार्थ—भूत, भविष्यत् और वर्तमान काल में जो कुछ बनता है, वह सब मन द्वारा ही ग्रहण किया जाता है। पांच ज्ञानेन्द्रिय और अहङ्कार तथा बुद्धि द्वारा जो यह जीवन-यज्ञ चलाया जा रहा है, इस प्रकार जो मन सब कार्यकारी इन्द्रियगणों का अधिष्ठाता है, वह मेरा मन सदा शुभ संकल्प वाला बने और कदापि अशुभ संकल्प न करे ॥

(५) यस्मिन्नृचः साम यजूँषि यस्मिन्प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः। यस्मिँश्चित्तँ सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥य० ३४।५॥

भावार्थ—मन के अन्दर सम्पूर्ण वेद और सब शास्त्र तथा अन्य सब ज्ञान

ओतप्रोत (भरा) रहता है, अर्थात् ज्ञानी के मन में यह सब ज्ञान रहता है। मन की शक्ति ऐसी है, कि जिसमें यह सब ज्ञान रह सके। सब प्राज्ञ लोग इसी से मनन करते हैं। इस प्रकार का यह शक्ति-शाली मन सदा शुभ विचार से युक्त हो।

(६) सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्या-न्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव ॥ हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ यजु०। ३४। ६॥

भावार्थ—रथ का सारथी जिस प्रकार घोड़ों को चलाता है, उसी प्रकार यह मद इन्द्रियों को चलाता है, इस लिए इसको शुभसंकल्प वाला होना चाहिए, अन्यथा यह इन्द्रियों को कुमार्ग में प्रवृत्त

कर शरीर रूपी रथ का नाश कर देगा और मनुष्य अपने जीवनोद्देश्य से वंचित रह जावेगा। इसलिए मनुष्यों को प्रयत्न करना चाहिए, कि उनका मन शुभ संकल्प होकर संसार में उन्नति संपादन करे।

इस समय–विभाग में अपनी अवस्था के अनुसार तबदीली भी की जा सकती है । परन्तु जो भाव इसमें दिखलाया गया है, वह नहीं बदलना चाहिए ।

प्रातःकाल पाठ के योग्य मन्त्र ।

ओं प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे, प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना। प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं, प्रातस्सोममुत रुद्रं हुवेम॥१

ऋ० मं० ७। सू० ४१। मं० १॥

अर्थ—हे स्त्री पुरुषो ! जैसे हम विद्वान् उपदेशक लोग (प्रातः) प्रभात समय में (अग्निम्) स्वप्रकाशस्वरूप (प्रातः, इन्द्रम्) परमैश्वर्य्य के दाता और परमैश्वर्य्ययुक्त (प्रातः) (मित्रावरुणा) प्राण उदान के समान प्रिय और सर्वशक्तिमान् (प्रातः) (अश्विना) सूर्य्य चन्द्र को जिसने उत्पन्न किया है, उस परमात्मा की (हवामहे) स्तुति करते हैं और (प्रातः) (भगम्) भजनीय, सेवनीय, ऐश्वर्य्ययुक्त (पूषणम) पुष्टिकर्त्ता (ब्रह्मणस्पतिम्) अपने उपासक वेद और ब्रह्माण्ड के पालन करने हारे (प्रातः) (सोमम्) अन्तर्यामी प्रेरक (उत) और (रुद्रम्) पापियों को रुलाने हारे और सर्वरोगनाशक जगदीश्वर की (हुवेम) स्तुति प्रार्थना करते हैं, वैसे प्रातः समय

तुम लोग भी किया करो ॥ १ ॥

ओं प्रातर्जितं भगमुग्रं हुवेम, वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्ता । आध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुरश्चिद्राजा चिद्यं भगं भक्षीत्याह ॥

ऋ० मं० ७ । सू० ४१ । मं० २ ॥

प्रातः पांच घड़ी रात्रि रहे (जितम) जयशील (भगम्)ऐश्वर्य के दाता (उग्रम) तेजस्वी (अदितेः) अन्तरिक्षके (पुत्रम)सूर्य की उत्पत्ति करने हारे और (यः) जोकि सूर्यादि लोकों का (विधर्त्ता) विशेष करके धारण करने हारा (आध्रः) सब ओर से धारण कर्त्ता (यं, चित्) जिस किसी का भी (मन्यमानः) जानने हारा (तुरश्चित) दुष्टों को भी दण्डदाता और (राजा) सब का प्रकाशक है (यं) जिस

(भगम्) भजनीय स्वरूप को चित्) भी (भक्षीति) इस प्रकार सेवन करता हूं और इसी प्रकार भगवान् परमेश्वर सबका (आह) उपदेश करता है, कि तुम जो मैं सूर्यादि जगत् का बनाने और धारण करने हारा हूं, उस मेरी आज्ञा में चला करो. इससे (वयम्) हम उसकी (हुवेम) स्तुति करते हैं ॥२॥

ओं भग प्रणेतर्भग सत्यराधो, भगमां धियमुद वा ददन्नः । भग प्रणो जनय गोभिरश्वैर्भग प्रनृभिर्नृवन्तः स्याम ॥३

ऋ० म० ७ । सू० ४१ । मं० ३ ॥

हे (भग) भजनीय स्वरूप ! (प्रणेतः) सबके उत्पादक सत्याचार में प्रेरक (भग) ऐश्वर्यप्रद (सत्यराधः) सत्य धन के देने

हारे (भग) धर्मात्माओं के ऐश्वर्यदाता (नः) हमको (इदम्) इस (धियम्) प्रज्ञा को (ददत्) दीजिये और उनके दान पर हमारी (उदव) रक्षा कीजिए । हे (भग) आप (गोभिः) गाय आदि (अश्वैः) घोड़े आदि उत्तम पशुओं के योग से राज्य श्री को (नः) हमारे लिए (प्रजनय) प्रकट कीजिये । हे (भग) आपकी कृपा से हम लोग (नृभिः) उत्तम मनुष्यों से (नृवन्तः) बहुत वीर मनुष्यों वाले (प्र स्याम) अच्छे प्रकार होवें ॥३॥

ओं उतेदानीं भगवन्तः स्यामोत प्रपित्व उत मध्य अन्हाम् । उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य, वयं देवानां सुमतौ स्याम ॥४॥

ऋ० मं० ७ । सू० ४१ । मं० ४ ॥

हे भगवन्। आप की कृपा (उत) और अपने पुरुषार्थ से हम लोग (इदानीम्) इसी समय (प्रपित्वे) प्रकर्षता व उत्तमता की प्राप्ति में (उत) और (अह्नाम्) इन दिनों के मध्य में (भगवन्तः) ऐश्वर्ययुक्त और शक्तिमान् (स्याम्) होवें (उत) और हे ! (भगवन्) परम पूजित असंख्य धन देने हारे (सूर्यस्य) सूर्य लोक के (उदिता) उदय में (देवानां) पूर्ण विद्वान् धार्मिक आप लोगों की (सुमतौ) अच्छी उत्तम प्रज्ञा (उत) और सुमति में (वयम्) हम लोग (स्याम) सदा प्रवृत्त रहें ॥४॥

ओं भग एव भगवां अस्तु, देवास्तेन वयं भगवन्तः स्याम। तं त्वा भग सर्व इज्जोहवीति, स नो भग पुर एता भवेह ५।

ऋ० मं० ७। सू० ४१। मं० ५।

हे (भग) सकलैश्वर्यसम्पन्न जगदीश्वर जिससे (तम्) उस (त्वा) आप की (सर्व:) सब सज्जन (इज्जोहवीति) निश्चय करके प्रशंसा करते हैं (स:) सो आप हे (भग) ऐश्वर्यप्रद (इह) संसार और (न:) हमार गृहाश्रम में (पुर एता) अग्रगामी, आगे २ सत्य कर्मों में बढ़ाने हारे (भव) हूजिए और जिससे (भगएव) सम्पूर्ण ऐश्वर्ययुक्त और समस्त ऐश्वर्य के दाता होने से आप ही हमारे (भगवन्) पूजनीय देव (अस्तु) हूजिए, (तेन) इसी हेतु से (देव: वयम) हम विद्वान् लोग (भगवन्त:) सकलैश्वर्य सम्पन्न होके सब संसार के उपकार में तन, मन, धन, से प्रवृत्त (स्याम) होवें।५।

इन मन्त्रों के उच्चारण के पश्चात्

नगर से बाहर जङ्गल में अथवा घर में शौच जाएं। शौच होकर व्यायाम करें अथवा सैर के लिए चले जांय। व्यायाम से कई रोगों की निवृत्ति होती है। पश्चात् स्नान कर एकान्त स्थान में शुद्ध आसन पर बैठकर सन्ध्या करें। जिसकी विधि आगे लिखी गई है।

ब्राह्मण स्वरूप लक्षणम्

अध्यापनमध्ययनं, यजनं याजनं तथा
दानं प्रतिग्रहश्चैव, ब्राह्मणानामकल्पयत
॥१॥ मनुः १।८८ ॥

शमो दमस्तपः शौचं, क्षान्तिरार्जमेवच।
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम् ॥ गीता १८। ४२॥

अर्थः—पढ़ना, पढ़ाना, यज्ञ करना,

कराना, दान देना तथा लेना ब्राह्मण के धर्म हैं। परन्तु दान लेने की अपेक्षा पढ़ा कर और यज्ञ कराकर जीविका करनी उत्तम है।

मनको अधर्म्म में जानेसे रोकना, इन्द्रिय दमन, तप, शौच, क्षमा, निरभिमानी रहना, ज्ञान, विज्ञान तथा आस्तिकता-ऐसे स्वभाव वाला ब्राह्मण कहलाता है। (२)

क्षत्रियस्वरूपलक्षणम्।

प्रजानां रक्षणं दानमिज्याऽध्ययनमेवच विषयेष्वप्रसक्तिश्च क्षत्रियस्य समासतः

मनु० १।८९॥ (१)

शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम्। दानमीश्वरभावश्च क्षात्रकर्म स्वभावजम्॥ भ०गीता १८।४३। (२)

अर्थ—पढ़ना, यज्ञ करना, दान देना प्रजा पालन, विषयों में आसक्त न होना यह क्षत्रियों के धर्म हैं। (१)
वीरता, तेज, धृति, चतुरता, युद्ध में उद्यत रहना, दान, ईश्वरभाव—ऐसे गुण कर्म्म-स्वभाववाला जन क्षत्रिय कहलाता है।

वैश्यस्वरूप लक्षण।

पशूनां रक्षणं दानमिज्याध्ययनमेवच।
वणिक्पथं कुसीदंच वैश्यस्यकृषिरेवच॥
मनु० १।९०॥

वैश्यस्वरूप लक्षण।

अर्थ--पढ़ना, यज्ञ करना, दान देना, पशु पालन, व्यापार करना, सूद लेना और खेती करना—यह वैश्य के धर्म्म हैं।

शूद्रस्वरूपलक्षणम् ।

एकमेवतुशूद्रस्य प्रभुः कर्म समादिशत् ।
एतेषामेव वर्णानां शुश्रूषामनसूयया ॥
मनु० १ । ९१ ॥

शूद्रस्वरूपलक्षणम् ।

अर्थ—परमेश्वर ने शूद्रों के लिए ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य की सेवा करना—यही एक कर्म करने की आज्ञा दी है ।

आर्यसमाज के सिद्धान्त

आर्यावर्त्त के पढ़े लिखे लोगों में से बहुत कम ऐसे होंगे, जो ऋषि दयानन्द के शुभ नाम से परिचित न होंगे । ऋषि दयानन्द ने जो कुछ उपकार भारत निवासियों पर किया है. उसको वर्णन करने के लिये अत्यधिक उपकरणों की आवश्यकता है । भारत निवासी गफ़लत

की नींद में ऐसे सोए हुए थे, कि उन्हें अपने धर्म का लेश मात्र भी ज्ञान नहीं रहा था। ऋषि ने सब लोगों को इकट्ठा कर, जोर से कहा कि, तुम्हारा नींद में ही बहुत सा समय व्यतीत हो चुका है, अब तुम्हारा धर्म कुछ दिनों का ही मह-मान है। यदि तुम्हारी दशा यही रही, तो दूसरे धर्म तुम्हें हड़प कर जांयगे। तुम उनकी ज़ाहिरी नुमायश पर मत भूलो। तुम्हारा असली धर्म वैदिकधर्म है और वह ईश्वरीय ज्ञान है। उस में ऐसे २ रत्न भरे हैं, जिनको प्राप्त करने से जहां मनुष्य इस संसार में सुख़ से आयु व्यतीत कर सकता है, वहां मुक्ति के लिये भी साधन संचय करके उसको प्राप्त कर

सकता है । ऋषि ने इसी पर बस नहीं किया, परन्तु वे रत्न निकाल कर सामने रख दिए । वे ही रत्न आर्यसमाज के वैज्ञानिक तथा क्रियात्मक सिद्धान्त हैं । वैज्ञानिक सिद्धान्त वह हैं, जो विज्ञान की कसौटी पर पूरे उतरते हैं और जिनको मानना प्रत्येक आर्य का मुख्य कर्तव्य है । क्रियात्मक सिद्धान्त वह हैं, जिन पर चलना आर्यमात्र के लिये आवश्यक है ।

वैज्ञानिक सिद्धान्त

१—सब सत्य विद्या और विद्या से जो पदार्थ जाने जाते हैं, उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।

२—ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अनन्त, अजर, अमर, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान् अभय, नित्य, पवित्र, सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।

३—वेद सत्य विद्याओं का पुस्तक है।

४—वेद (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद) सृष्टि के आदि में प्रकट हुए।

५—वेद ईश्वरीय ज्ञान है और संसार से पार उतारने वाले सच्चे तीर्थ हैं।

६—वेद स्वतः प्रमाण, बाकी सब पुस्तकें (वेदके अनुकूल होने सेपरतः प्रमाण हैं)।

७—ईश्वर अवतार नहीं लेता।

८—ईश्वर के अतिरिक्त और कोई वस्तु पूजनीय नहीं।

९—ईश्वर, जीव, प्रकृति तीनों अनादि हैं और भिन्न २ हैं।

१० ईश्वर तथा जीव चेतन, और प्रकृति जड़ है।

११—ईश्वर एक है और जीव अनेक हैं

१२ ईश्वर सर्वज्ञ है और जीव अल्पज्ञ है।

१३—जीव कर्म करने में स्वतन्त्र किन्तु उस का फल भोगने में परतन्त्र है।

१४—जीव को अपने अच्छे वा बुरे कर्मों का दण्ड अवश्य मिलता है।

१५—अन्त्येष्टि के पश्चात् सब क्रिया

व्यर्थ हैं, और मृतक श्राद्ध वेद विरुद्ध है।

१६—आवागमन का सिलसिला अनादि है, जीव अपने कर्मानुसार भिन्न २ योनियों में जाता है।

१७—वर्णों की व्यवस्था गुण, कर्म, स्वभाव के अनुसार है, न कि केवल जन्म के।

१८—मनुष्यों के विभाग, वर्ण के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र हैं।

१९—सृष्टि प्रवाहरूप से अनादि है।

२०—आदि सृष्टि में मनुष्य युवा उत्पन्न हुए।

२१—सृष्टि का आरम्भ तिब्बत में हुआ।

२२—मनुष्यों का विभाग नाम के अनुसार, 'आर्य और 'दस्यु' है।

२३—मुक्ति सर्वदा के लिए नहीं, किन्तु

मियादी (नियत समय के लिए) है। मुक्ति अच्छे कर्म तथा आत्मज्ञान से होती है।

२४—स्वर्ग नरक-सुख दुःख विशेष का नाम है, किसी स्थान विशेष का नहीं।

२५—धर्म-जिस का स्वरूप ईश्वर की आज्ञा का यथावत् पालन और पक्षपात रहित न्याय से सर्वहित करना है जोकि प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सुपरीक्षित और वेदोक्त होने से सब मनुष्यों के लिए एक मात्र मानने योग्य है, उस को धर्म कहते हैं।

२६—पुण्य-जिस का स्वरूप विद्यादि शुभ गुणों का दान और सत्यभाषणादि सत्याचार का करना है, उस को 'पुण्य' कहते हैं।

२७—सत्यभाषण-जैसा कुछ अपने

आत्मा में हो—और असम्भवादि दोषों से रहित कर के सदा वैसा ही बोलना उस को 'सत्य भाषण' कहते हैं।

२८—विश्वास—जिस का मूल, अर्थ और फल निश्चय कर के सत्य ही हो, उसका नाम 'विश्वास' है।

२९—परलोक—जिस में सत्य विद्या से परमेश्वर की प्राप्ति हो और उस प्राप्ति से इस जन्म वा पूर्वजन्म और मोक्ष में परम सुख प्राप्त होता है, उसको 'परलोक' कहते हैं।

३०—विद्या—जिस से ईश्वर से लेके पृथ्वी पर्यन्त पदार्थों का सत्य विज्ञान हो कर उन से यथा योग्य उपकार लेना होता है, उस का नाम 'विद्या' है।

३१—तीर्थ—जितने विद्याभ्यास, सुवि-

चार, ईश्वरोपासना, धर्मानुष्ठान, सत्य, भाषण, ब्रह्मचर्य्य, जितेन्द्रियतादि उत्तम कर्म हैं, वे सब 'तीर्थ' कहाते हैं । क्योंकि इन के द्वारा जीव दुःख-सागर से तर सकते हैं ।

३२—स्तुति—जो ईश्वर या किसी दूसरे पदार्थ का गुण, ज्ञान, कथन, श्रवण और सत्यभाषण करना है, वह 'स्तुति' कहाती है ।

३३—प्रार्थना - अपने पूर्ण पुरुषार्थ के उपरान्त उत्तम कर्मों की सिद्धि के लिये परमेश्वर वा किसी सामर्थ्य वाले मनुष्य की सहायता लेने को प्रार्थना कहते हैं ।

३४—उपासना—जिस से ईश्वर ही के आनन्द स्वरूप में अपने आत्मा को मग्न करना होता है, उसको उपासना कहते हैं ।

३५—मुक्ति—अर्थात् जिस से सब बुरे काम और जन्म मरण आदि दुःखसागर से छूट कर सुख स्वरूप परमेश्वर को प्राप्त हो के सुख में ही रहना है, वह 'मुक्ति' कहाती है।

३६—मुक्ति के साधन—अर्थात् जो पूर्वोक्त कर्म, धर्म का आचारण और पुण्य का करना, सत्संग विश्वास, तीर्थ सेवन सत्पुरुषों का संग, परोपकारादि सब अच्छे कामों का करना तथा सब दुष्ट कर्मों से अलग रहना है, ये सब 'मुक्ति' के साधन कहाते हैं।

३७–जाति–जो जन्म से लेके मरणपर्य्यन्त बनी रहे, जो अनेक व्यक्तियों में एक रूप से प्राप्त हो, जो ईश्वरकृत अर्थात् मनुष्य, गाय, अश्व और वृक्षादि समूल

हैं, वे 'जाति' शब्द से लिये जाते हैं।

३८—मनुष्य-अर्थात् जो विचार के विना किसी काम को न करे, उस का नाम 'मनुष्य' है।

३९—आर्य्य-जो श्रेष्ठ स्वभाव, धर्मात्मा, परोपकारी, सत्य विश्वासादि गुणयुक्त और आर्यावर्त्त दश में आरम्भ से रहने वाले हैं, उन को 'आर्य्य' कहते हैं।

४०—आश्रम-जिन में अत्यन्त परिश्रम कर के उत्तम गुणों का ग्रहण और श्रेष्ठ कर्म किये जायें, उनको 'आश्रम' कहते हैं।

४१—आश्रम के भेद-जो सद्विद्यादि शुभ गुणों का ग्रहण तथा जितेन्द्रियता से आत्मा और शरीर के बल को बढ़ाने के लिये ब्रह्मचारी, जो सन्तानोत्पत्ति और विद्यादि सब व्यवहारों को सिद्ध

करने के लिए 'गृहाश्रम' जो विचार करने के लिए 'वानप्रस्थ' और जो सर्वोपकार करने के लिए 'सन्यासाश्रम' होना है, वे चार 'आश्रम' कहाते हैं।

४२—यज्ञ–जो अग्निहोत्र से ले के अश्वमेध पर्य्यन्त वा जो शिल्प व्यवहार और पदार्थ विज्ञान जो कि जगत् के उपकार के लिए किया जाता है, उस को 'यज्ञ' कहते हैं।

४३ प्रारब्ध जो पूरे किए हुए कर्मों के सुखदुःख रूप का फल भोगा जाता है, उस को 'प्रारब्ध' कहते हैं।

४४—अनादि पदार्थ-ईश्वर जीव और प्रकृति जो सब जगत् का मूल कारण है, ये तीनों स्वरूप से अनादि हैं।

४५—पुरुषार्थ-अर्थात् सर्वदा आलस्य छोड़ के उत्तम व्यवहारों की सिद्धि के

लिए मन, शरीर, वाणी और धन से जो अत्यन्त उद्योग करना है उसको 'पुरुषार्थ' कहते हैं ।

४६–परोपकार–अर्थात् अपने सब सामर्थ्य से दूसरे प्राणियों के सुखी होने के लिए जो तन मन धन से प्रयत्न करना है, वह 'परोपकार' कहाता है ।

४७—सदाचार–जो सृष्टि से ले के आज पर्यन्त सत्पुरुषों का वेदोक्त आचार चला आया है, जिस में सत्य का आचरण और असत्य का परित्याग किया है । उस को 'सदाचार कहते हैं ।

४८—आचार्य्य–जो श्रेष्ठ आचार को ग्रहण करा के सब विद्याओं को पढ़ा देवे, उस को आचार्य 'कहते' हैं ।

४९—गुरु–जो वीर्यदान देने के अति-

रिक्त भोजनादि करा के पालन करता है, [इसी से पिताको भी गुरु कहते हैं] और जो अपने सत्य उपदेश से हृदय का अज्ञान रूपी अन्धकार मिटा देवे, उसको भी गुरु अर्थात् 'आचार्य' कहते हैं।

५० — अतिथि-जिस के आने और जाने की कोई भी निश्चित तिथि न हो, तथा जो विद्वान हो कर सर्वत्र भ्रमण कर के प्रश्नोत्तर के उपदेश से सब जीवों का उपकार करता है, उस को 'अतिथि' कहते हैं।

५१-पञ्चायतनपूजा-जीते 'माता' 'पिता' 'आचार्य' 'अतिथि' और 'परमेश्वर' को जो यथायोग्य सत्कार करके प्रसन्न करना है इसी को 'पञ्चयतनपूजा' कहते हैं।

५२—पूजा-जो ज्ञानादि गुण वाले का

यथायोग्य सत्कार करना है, उस को 'पूजा कहते हैं ।

५३—जड़-जो वस्तु ज्ञानादि गुणों से रहित है, उस को 'जड़' कहते हैं।

५४-चेतन-जो पदार्थ ज्ञानादि गुणों से युक्त है,उस को 'चेतन' कहते हैं ।

५५-पण्डित-जो सत् असत् को विवेक से जानने वाला, धर्मात्मा, सत्यवादी, सत्यप्रिय,विद्वान और सब का हितकारी है उस को 'पण्डित' कहते हैं ।

५६-जीव का स्वरूप-जो चेतन अल्पज्ञ इच्छा द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुःख, और ज्ञान आदि गुण वाला तथा नित्य है, वह 'जीव' कहाता है ।

५७-प्रलय-कार्य जगत् का कारण रूप होना अर्थात् जगत् का करने वाला

ईश्वर जिन २ कारणों से सृष्टि बनाता है अथवा अनेक कार्यों को रच के यथावत् पालन करके पुनः कारणरूप करके रखता है, उसका नाम प्रलय' है।

'५८-आप्त-जो छलादि दोषरहित, धर्मात्मा, विद्वान्, सत्योपदेष्टा सब पर कृपा दृष्टि से वर्तमान होकर अविद्या अंधकार का नाश करके, अज्ञानी लोगों के आत्माओं में सदा विद्यारूप सूर्य्य का प्रकाश करे. उसको आप्त' कहते हैं।

५९-शास्त्र--जो सत्य विद्याओं के प्रतिपादन से युक्त हो और जिसके द्वारा मनुष्यों को सत्य की शिक्षा प्राप्त हो, उसको 'शास्त्र' कहते हैं।

६० नमस्ते—मैं तुम्हारा सत्कार करता हूं।

क्रियात्मक सिद्धान्त।

[१] वेदों का पढ़ना, पढ़ाना, सुनना, सुनाना आर्यों का परम धर्म है।

[२] सत्य को ग्रहण करने और असत्य को त्यागने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

[३] सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार कर करने चाहियें।

[४] संसार की भलाई अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करनी चाहिये।

[५] सब से प्रेम पूर्वक, धर्म के अनुसार यथायोग्य वर्तना चाहिये।

[६] अविद्या का नाश और विद्या की उन्नति करनी चाहिये ।

[७] अपनी ही उन्नति में संतुष्ट न रहना चाहिये, किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए ।

[८] सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र और प्रत्येक हितकारी नियम पालने में स्वतन्त्र रहना चाहिये ।

[९] पञ्चमहायज्ञों का प्रतिदिन सेवन करना चाहिए- १) प्रातः और सायं सन्ध्या, ईश्वर स्तुति, प्रार्थना और उपासना करना ।

(२) प्रातः सायं हवन करना ।

(३) जीवित माता, पिता, और आचार्य का श्राद्ध अर्थात् श्रद्धा से सेवन करना ।

(४) जो कुछ घर में पका हो, उससे

बलि देना और कौवे आदि के लिए भाग निकालना।

(५) अतिथि अर्थात् घर में आए हुए विद्वान् की प्रतिदिन सेवा करना।

[१०] यम और नियमों का नित्य पालन करना चाहिये। यम=अहिंसा सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य्य. अपरिग्रह यह पांच यम हैं। शौच, सन्तोष, तप स्वाध्याय, ईश्वर-प्रणिधान यह पांच नियम हैं।

[११] पुरुष २५ वर्ष की आयु तक और स्त्री १६ वर्ष की आयु तक गुरुकुल में ब्रह्मचर्य रख कर विद्या प्राप्त करके गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करे, तत्पश्चात् वानप्रस्थ और संन्यास ले।

[१२] द्विज अर्थात् ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य के लिए यज्ञोपवीत का पहनना आवश्यक

है। और रंडुआ होने की अवस्था में दूसरी शादी न करना किन्तु नियोग से सन्तान उत्पन्न करनी चाहिये।

[१३] गृहस्थ आश्रम में प्रविष्ट होकर भी ब्रह्मचर्य का स्थिर रखना अर्थात् ऋतुगामी होना चाहिये।

[१४] शादी गुण कर्म स्वभाव के अनुसार करना चाहिये।

[१५] दश से अधिक औलाद [सन्तान] पैदा न करनी चाहिये।

[१६] धार्मिक कार्यों में स्त्री के अधिकार पुरुष के समान ख्याल करते और स्त्री को अर्द्धाङ्गिनी जानते हुए उस का सत्कार करना चाहिये।

[१७] अपनी स्त्री के अतिरिक्त दूसरी

स्त्रियों को माता और बहिन जानना चाहिये।

[१८] मांस और मादक द्रव्यों से घृणा करनी चाहिये।

[१९] देश, काल और पात्र को देख कर दान देना चाहिये।

[२०] सोलह संस्कार अर्थात् गर्भाधान पुंसवन. सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नाम-करण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूडाकर्म, कर्णवेध, उपनयन, वेदारम्भ, समा-वर्तन, विवाह, बानप्रस्थ संन्यास, अन्त्ये-ष्टि संस्कार अवश्य करने चाहियें।

आर्यजीवन की प्राप्ति के लिए सुनहरी नियम ।

[१] अपने जीवन का एकलक्ष बनाकर अपनी सारी शक्ति उसकी प्राप्ति में लगा देना ।

[२] समय का सदुपयोग करना, व्यर्थ न खोना ।

[३] तप का जीवन व्यतीत करना आलस्य और प्रमाद को निकट न आने देना।

[४] आत्म विश्वासी होना अपने आत्मा पर भरोसा करना ।

[५] सदैव आशावादी बने रहना, भूल कर भी आशा देवी का त्याग न करना ।

[६] स्वाध्याय का कभी त्याग न करना सर्वदा सत्-शास्त्रों का पढ़ना और अपने जीवन का पाठ करना अति आवश्यक है।

[७] नित्यप्रति सन्ध्या के पश्चात् ईश्वर से बल बुद्धि-भक्ति की याचना करना ।

वैदिक साहित्यसम्बन्धी चित्र ।

वेद—चार हैं, ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद ।

मोक्ष की प्राप्ति के लिए जिन चार साधनों की आवश्यकता है, वे इन चार वेदों में बतलाए हैं, अर्थात् ज्ञान कर्म, उपासना और विज्ञान। चारों वेदों में चौबीस हज़ार मन्त्र. और सात लाख अठसठ हज़ार शब्द हैं। ऋग्वेद सब से बड़ा है। उस में दस मण्डल हैं और इन मण्डलों में १०२८ सूक्त हैं, जिन में १०५८९ ऋचाएं हैं। इन ऋचाओं में १५३८२६ पद हैं, जिन में ४३२००० अक्षर हैं। सामवेद में १५४३ साम मन्त्र हैं। यजुर्वेद में ४० अध्याय हैं जिनमें १९७५ कण्डिकाएं और मन्त्र हैं। अथर्ववेद में

२० काण्ड हैं, जिन में ७६० सूक्त और लगभग ६००० ऋचाएं हैं ।

उपवेद—चार वेदों के चार उपवेद अर्थात् अर्थवेद ऋग्वेद का, धनुर्वेद यजुर्वेद का, आयुर्वेद अथर्ववेद का, और गन्धर्ववेद सामवेद का उपवेद है ।

वेदों की व्याख्या-ब्राह्मण ग्रन्थों में की गई है । गणना में तो ये अधिक हैं, परन्तु साधारण तौर पर प्रसिद्ध चार ही हैं । ऋग्वेद का ऐतरेय ब्राह्मण, यजुर्वेद का शतपथ, साम का साम ब्राह्मण और अथर्ववेद का गोपथब्राह्मण । प्राचीन वैदिक साहित्य में इन्हीं को पुराण कहा गया है ।

वेदों की शाखा-वेदों की ११३१ शाखा

इस प्रकार हैं, यजुर्वेद की १०१, सामवेद की १०००, ऋग्वेद की २१, और अथर्व वेद की ९ शाखायें हैं (महाभाष्य पातञ्जल) ।

वेदों के अंग-छः हैं । शिक्षा, कल्प, निरुक्त, व्याकरण, ज्योतिष और छन्द । वेदों के जानने के लिए इन का जानना आवश्यक है ।

वेदों के उपांग-वेदों के छः उपाङ्ग हैं । जिन को छः 'दर्शन' अथवा छः शास्त्र भी कहते हैं ।

इन के नाम ये हैं—कपिल का सांख्य, गौतम का न्याय, पातञ्जलि का योग कणाद का वैशेषिक, व्यास का वेदान्त और जैमिनि का मीमांसा दर्शन ।

उपनिषदें—जिन से हमें ब्रह्मविद्या की प्राप्ति होती है, उन्हें 'उपनिषत्' कहते हैं–चार वेदों की ११८, उपनिषदें इस प्रकार हैं–ऋग्वेद की २१, यजुर्वेद की १०९, सामवेद की १०००, अथर्ववेद की ५० । परन्तु साधारण तौर पर ग्यारह ही प्रामाणिक समझी जाती हैं । उन के नाम ये हैं–ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तरीय, छान्दोग्य, बृहदारण्यक, श्वेताश्वेतर ।

इतनी विद्या होते हुए भी शोक से लिखना पड़ता है, कि आज न वेद की इतनी शाखायें और न उपनिषद् ही मिलती हैं ।

आर्य्यस्मृतिकारों के नाम—

भिन्न २ ग्रन्थों में लगभग १०० स्मृतिकारों के नाम दिये गये हैं, जिन में से प्रसिद्ध यह हैं:—

१ मनु, २ अत्रि, ३ विष्णु, ४ हारीत, ५ याज्ञवल्क्य ६ उशनाः ७ अङ्गिरा, ८ यम, ९ आपस्तम्ब, १० संवर्त, ११ कात्यायन, १२ बृहस्पति, १३ पराशर १४ व्यास, १५ शङ्ख, १६ लिखित, १७दक्ष १८ गौतम, १९ शातातप, २० वशिष्ट, २१ प्राचेतस आदि।

वेदों तक पहुंचने की सीढ़ी—वेदों और दर्शनों तक पहुंचने के लिये महर्षि स्वामी दयानन्द रचित 'सत्यार्थप्रकाश' और 'ऋग्वेदादि-भाष्य-भूमिका' आदि

ग्रन्थ एक सीढ़ी हैं । महर्षि के ग्रन्थ वेदों और शास्त्रों में श्रद्धा उत्पन्न कर देते हैं । इसलिए सर्वसाधारण को पहले इन्हीं ग्रन्थों को पढ़ना चाहिये, अन्य आर्य रचनाओं को दूसरे दर्जे पर रखना चाहिये ।*

---

*वैदिक साहित्य की सब पुस्तकें आर्य्य पुस्तकालय व सरस्वती आश्रम अनारकली लाहौर से मिल सकती हैं ।

ऋषि दयानन्द कृत ग्रन्थ

विषय सूची

आर्य्य स्त्री पुरुष को स्वाध्याय के लिए सब से उच्च पदवी ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों को देनी चाहिये, और प्रयत्न करना चाहिये, कि ऋषि के ग्रन्थ उन्हीं की भाषा में पढ़े जांय। इन्हीं ग्रन्थों का प्रचार कर अन्य पुस्तकों को दूसरी कोटि में रक्खें।

१. सत्यार्थ प्रकाश—(आर्य भाषा) इस पुस्तक को पढ़कर जहां मनुष्य को अपने धर्म का वास्तविक ज्ञान हो जाता है, वहां संसार के अन्य मतमतान्तरों का भी बोध हो जाता है। यह एक 'अद्वितीय' पुस्तक है। इसके पाठ से किसी मनुष्य

को भी, चाहे वह किसी धर्म को मानने वाला क्यों न हो, वंचित न रहना चाहिए मूल्य आर्य्य भाषा ॥=)

२. संस्कार विधि—इस में मनुष्य जीवन का प्रोग्राम (समय-विभाग) लिखा है और बतलाया गया है कि सोलह संस्कारों के करने ही से मनुष्य सम्पूर्ण मनुष्य बन सकता है। मूल्य ।=)

३ ऋग्वेदादि-भाष्य-भूमिका—इस पुस्तक को पढ़े विना वेदों का अर्थ समझना कठिन है। यह चारों वेदों के भाष्यों की भूमिका है। मूल्य १।=)

४ ऋग्वेद-भाष्य—इस में महर्षि ने ऋग्वेद का भाष्य और व्याख्या की है। प्रत्येक आर्य्य भाषा जानने वाला इसको

पढ़कर जान सकता है, कि वेदों में कैसे कैसे रत्न भरे पड़े हैं। मूल्य ४२)

५ यजुर्वेद-भाष्य—इसमें यजुर्वेद का भाष्य है। मूल्य १८)

६ यजुर्वेद भाषा भाष्य—इस में यजुर्वेद का केवल भाषा अनुवाद है मूल्य ४)

७ भ्रान्ति निवारण—इस में पौराणिक मत के सब वेद-भाष्य-कर्ताओं का खण्डन किया गया है। मूल्य =)

८ भ्रमोच्छेदन—इस में महर्षि ने पौराणिक सिद्धान्त का खण्डन किया है। मूल्य -)

९ स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश—इस में ऋषि के मन्तव्य दिये हैं। मूल्य)॥

१०. वेदविरुद्धमतखण्डन—इस में मूर्तिपूजा आदि साम्प्रदायिक बातों का खण्डन किया गया है। मूल्य =)॥

११. काशी-शास्त्रार्थ—स्वामी जी का पौराणिक पण्डितों से शास्त्रार्थ। मूल्य -)

१२ पञ्चमहायज्ञ विधि—आर्यों की नित्य कर्म विधि -)॥

१३ आर्याभिविनय—ऋषिकृत प्रार्थना पुस्तक है। घटिया का मूल्य ।-) बढ़िया का ॥=)

१४ नारायण स्वामी मत खण्डन—मूल्य =)

१५ वेदान्तध्वान्त निवारण—नवीन वेदान्त का खण्डन। मूल्य -)॥

१६ सत्यधर्मविचार—ईसाइयों तथा यवनों से शास्त्रार्थ। मूल्य -)॥

१८ आर्योद्देश्यरत्नमाला— समस्त सिद्धान्तों का संग्रह । मूल्य)।

१९ गोकरुणानिधि—मांस भक्षण के विरुद्ध अत्यन्त उपयोगी पुस्तक। मू० -)।।

२० वेदांगप्रकाश—१४ भागों में संस्कृत व्याकरण सीखने के लिए यह एक अद्भुत पुस्तक है । मूल्य ५।।=)

कौमुदी आदि निकम्मे ग्रन्थों को त्याग कर इसका प्रचार करो ।

२१ विवाह पद्धति—मूल्य ।)

२२ व्यवहारभानु--बालकों के लिए उपदेश । मूल्य =)।।

२३ संस्कृतवाक्यप्रबोध— संस्कृत सीखने की उत्तम पुस्तक =)।।

२४ वेदभाष्य का नमूना—अर्थात्
ऋग्वेद के प्रथम सूक्त की व्याख्या –)
*२५ अष्टाध्यायी भाष्य। मू० १६)

* ये सब पुस्तकें आर्य्य पुस्तकालय तथा सरस्वती आश्रम लाहौर से मिल सकती हैं।

मनुष्य जीवनका समय विभाग
(सोलह संस्कार और उनका समय)

१. गर्भाधान–श्रेष्ठ सन्तान उत्पन्न करने के लिये यह संस्कार किया जाता है। जवान स्त्री पुरुष को जब उत्तम सन्तान की इच्छा हो, तो विशेष तय्यारी से प्रसन्नता पूर्वक गर्भाधान करें। नहीं तो सन्तान कभी उत्तम उत्पन्न न होगी। गर्भाधान का समय रजोदर्शन के दिन से सोलहवीं रात्रि तक है। उन में प्रथम चार रात्रि तथा पूर्व रात्रि वर्जित हैं।

२. पुंसवन संस्कार–जब कि गर्भ की स्थिति का ज्ञान हो जाय, तब दूसरे या तीसरे महीने गर्भ की रक्षा के लिये यह संस्कार किया जाता है। इस में दोनों

स्त्री पुरुष प्रतिज्ञा करते हैं, कि वह आज से कोई ऐसा कार्य्य न करेंगे, जिस से गर्भ गिरने का भय हो।

३. सीमन्तोन्नयन–यह संस्कार गर्भ से चौथे मास में बच्चे की मानसिक शक्तियों की वृद्धि के लिये किया जाता है। इस में ऐसे साधन किये जाते हैं जिन से स्त्री का मन सन्तुष्ट रहे।

४. जातकर्म–यह संस्कार बालक के जन्म लेते ही किया जाता है। बालक का पिता उस की जिह्वा पर सोने की सलाई के द्वारा घी और शहद से "ओ३म्" लिखता है और उस के कान में "त्वं वेदो ऽसि कहता है।

५. नामकरण–जन्म से ग्यारहवें दिन या १०१ वें दिन या दूसरे वर्ष के आरम्भ

में यह संस्कार किया जाता है । इस में बालक का नाम रक्खा जाता है । नाम प्रिय तथा सार्थक रखना चाहिये ।

६. निष्क्रमण–यह संस्कार जन्म से चौथे महीने में, उसी तिथि में, जिस में बालक का जन्म हुआ हो, किया जाता है । इस का उद्देश्य बालक को उद्यान की शुद्ध, वायु का सेवन और सृष्टि के अवलोकन का प्रथम शिक्षण है ।

७. अन्नप्राशन–छठे वा आठवें महीने में, जब बालक की शक्ति अन्न पचाने की हो जावे तब यह संस्कार किया जाता है ।

८. चूड़ाकर्म–अथवा मुण्डन संस्कार पहिले अथवा तीसरे वर्षमें बालकके बाल काटने के लिये यह संस्कार किया जाता है ।

९. कर्णवेध–कई रोगों को दूर करने के लिए बालक के कान बेधे जाते हैं। यह संस्कार तीसरे वा पांचवें वर्ष में करना चाहिए।

१०. उपनयन संस्कार–जन्म वर्ष से सातवें वर्ष में इस सँस्कार से लड़के वा लड़की को यज्ञोपवीत पहनाया जाता है।

११. वेदारम्भ संस्कार–उपनयन सँस्कार के दिन या उस से एक वर्ष के भीतर गुरुकुल में वेदों का आरम्भ गायत्री मन्त्र से किया जाता है।

१२. समावर्तन संस्कार–जब ब्रह्मचर्य व्रत की समाप्ति पर वेद शास्त्रों के पढ़ने के पश्चात् गुरुकुल छोड़ कर गृहस्थाश्रम में ब्रह्मचारी जाता है।

१३. विवाह संस्कार–विद्या समाप्ति के पश्चात् जब लड़की लड़का घर आ जावे, तब यह संस्कार किया जाता है। हर प्रकार से योग्य लड़के लड़की को इस का अधिकार है।

१४. वानप्रस्थ–का समय ५० वर्ष के उपरान्त है। जब घर में पुत्र का भी पुत्र (पोता) हो जावे, तब गृहस्थ के धन्धों में फंसे रहना धर्म्म नहीं। उस समय वानप्रस्थ तय्यारी के लिये यह संस्कार किया जाता है।

१५. संन्यास–वानप्रस्थ में बैठ कर जब सब इन्द्रियों को जीत ले, किसी के के लिये मोह और शोक न रहे, तब केवल

परोपकार के हेतु सन्यास आश्रम में प्रवेश करने के लिये यह संस्कार किया जाता है ।

१६. अन्त्येष्टि संस्कार—मनुष्य शरीर का यह अन्तिम संस्कार है, जो मरने के पश्चात् शरीर को जला कर किया जाता है ।

आर्यों के यज्ञ तथा पर्व।

१ ब्रह्म-यज्ञ, प्रतिदिन प्रातः सायं।

२ देव-यज्ञ, प्रतिदिन ,,

३ बलिवैश्वदेव-यज्ञ, ,,

४ पितृ-यज्ञ, ,,

५, अतिथि-यज्ञ, ,,

६ दर्शेष्टि (कृष्ण-पाक्षिक-यज्ञ) प्रति अमावस्या।

७ पौर्णमास्येष्टि (शुक्ल-पाक्षिक-यज्ञ) प्रति पूर्णमासी।

८ संवत्सरेष्टि (नये वर्ष का यज्ञ) चैत्र सुदि १।

९ दयानन्द महायज्ञ (आर्य समाज की) स्थापना) चैत्र सुदि ५।

१० वैशाखी, सौर वर्ष का आरम्भिक दिन प्रथम वैशाख।

११ रामनवमी (राम जन्म दिन) चैत्र सुदि ९।

१२ वसन्त नवान्नेष्टि (नये अन्न का यज्ञ) वैशाख मीन मेष के सूर्य्य।

१३ वरुण प्रघास चातुर्मास्येष्टि, आषाढ़ पूर्णमासी।

१४ श्रावणी, श्रावण पूर्णमासी।

१५ श्रावण कर्मयज्ञ (रक्षाबन्धन) श्रावण पूर्णमासी।

१६ कृष्णाष्टमी (कृष्ण जन्म दिन) भाद्रपद वदि ८।

१७ विरजानन्द उत्सव आश्विन वदि १३

१८ विजयादशमी (दशहरा) आश्विन सुदि १०।

१९ शरद् नवान्नेष्टि (नये अन्न का यज्ञ कार्तिक कन्या तुला के सूर्य)

२० दयानन्दोत्सव (दीपमाला) कार्तिक अमावस्या ।

२१ साकमेध चातुर्मास्येष्टि कार्तिक पूर्णमासी ।

२२ उत्सर्ग कर्म(यज्ञ) पौष रोहिणी नक्षत्र

२३ लोहड़ी पौष मासान्त ।

२४ संक्रान्ती माघी, प्रथम माघ ।

२५ वसन्त-पंचमी (हकीकत बलिदान) माघ सुदी ५ ।

२६ दयानन्द-बोधोत्सव (शिवरात्रि फाल्गुन वदि १४ ।

२७ वीर उत्सव (लेखराम बलिदान) फाल्गुन सुदी ३ ।

२८ होली फाल्गुन सुदि १३, १४, १५ ।

२९ वैश्वदेव चातुर्मास्येष्टि, फाल्गुन पूर्णमासी ।

३० गुरुदत्त उत्सव चैत्र वदि १४ ।

आर्य-पर्व-पद्धति

निम्न लिखित त्यौहार और पर्व आर्य पुरुषों को मानने चाहियें। यह पर्व आर्य सार्वदेशिक सभा की नियत जन्म शताब्दी समिति ने ऋषि दयानन्द शताब्दी के शुभ अवसर पर स्वीकार किए हैं।

(१) नवसंवत्सरोत्सव (संवत्सरेष्टि

(अर्थात् नये वर्ष का यज्ञ)

चैत्र सुदि १

नवसंवत्सरारम्भोत्सव संसार की प्रायः सब सभ्य जातियों में मनाया जाता है। संवत्सर का प्रारम्भ आदि सृष्टि में शुक्ल पक्ष के प्रथम दिन प्रतिपदा को प्रथम सूर्योदय होने पर हुआ था। अतः नूतन वर्ष के स्वागतार्थ आर्य जाति में आनन्दानुभव के साथ यज्ञ आदि धर्मानुष्ठान

पूर्वक इस उत्सव के मनाने की परि-पाटी है।

(२) आर्यसमाज का स्थापना दिवस

दयामूर्ति ऋषि दयानन्द ने आर्य जाति तथा वैदिक धर्म के पुनरुद्धारार्थ और संसार मात्र के उपकारार्थ भारत की प्रसिद्ध नगरी बम्बई में शुभ तिथि चैत्र सुदी ५ सम्वत् १९३२ वि० शनिवार तदनुसार १० एप्रिल सन् १८७५ ई० को प्रथम आर्य-समाज की स्थापना की। अतः इस तिथि पर सब आर्य समाजों को उत्सव करने चाहियें। संसार के उपकार और देश देशान्तरों में वैदिक धर्म के प्रचार के साधनों पर विचार कर के अपने अन्दर नया जीवन धारण करना चाहिये।

(६) रामनवमी श्रीरामजन्मदिन

चैत्र सुदि ९

प्राचीन भारत के धर्म प्राण तथा गौरव सर्वस्व महात्मा श्री रामचन्द्र का आदर्श चरित्र आर्य जाति के लिये अनुकरणीय तथा शिक्षाप्रद है। निष्काम कर्म वैदिक धर्म का सिद्धान्त है, और इस का पूर्ण-रूप से पालन केवल प्रातःस्मरणीय श्री राम द्वारा ही हुआ है। उन्हीं पवित्र नाम राम के जन्मदिन की शुभ तिथि चैत्र सुदि नवमी है। इस दिन मर्यादा पुरुषोत्तम राम के चरित्र के अध्ययन वा स्वाध्याय के लिये रामायण की कथा होनी चाहिए। प्रत्येक आर्य को उन के पथ पर चलने का दृढ़ संकल्प करना चाहिए।

(४) हरितृतीया (वर्षा-ऋतुउत्सव

श्रावण सुदि तृतीया

स्थलचर, जलचर तथा नभचर सभी प्राणियों का जीवन जल पर निर्भर है। वर्षाऋतु का शुभ अगमन होते ही प्रकृति का दृश्य बदल जाता है। चारों ओर हरियाली ही हरियाली नेत्रों का सत्कार करती है। दादुरध्वनि और मयूरों की केका दशों दिशाओं को मुखरित कर देती है। प्रकृति में आनन्द ही आनन्द का एकाधिपत्य व्याप जाता है। ऐसे समय में सहृदय भारतवासी भला कैसे उदासीन रह सकते हैं। वह भी प्रकृति के मधुर स्वर में अपना स्वर मिलाने के लिए वर्षा-ऋतु- उत्सव मनाते हैं॥

(५) श्रावणी उपाकर्म

श्रावण पूर्णमासी

शरीर की स्थिति और उन्नति जिस प्रकार अन्न से होती है, उसी प्रकार सारे शरीर के राजा मन का भी उत्कर्ष और शिक्षण स्वध्याय से होता है। अतएव स्वध्याय मनुष्य के लिए अन्नाहार के समान ही आवश्यक और अनिवार्य है। प्राचीन काल में वैसे तो लोग नित्य ही वेदपाठ में रत रहते थे, किन्तु वर्षा ऋतु में वेदपाठन, धर्मोपदेश और ज्ञान चर्चा का विशेष आयोजन किया जाता था। इस विशेष वेदोपदेश का प्रारम्भ श्रावण पूर्णिमा, श्रावण सुदि पञ्चमी को होता था।

(६) श्रीकृष्ण जन्माष्टमी

भाद्रपद वदि अष्टमी

इस समय भारत के शृङ्खलाबद्ध इतिहास की अप्राप्यता में यदि भारतीय अपना मस्तक समुन्नत जातियों के समक्ष ऊंचा उठा कर चल सकते हैं. तो भगवान कृष्ण की दिव्य वाणी गीता की विराजमानता से । ऐसे अद्वतीय योगीराज का जन्मोत्सव मानने के लिए कौन भारतीय हृदय उत्सुक न होगा। वास्तव में कृष्ण भारत की आत्मा थे। उन का जन्म आज से ५१३० वर्ष पूर्व भाद्रपद वदि अष्टमी बुधवार, रोहिणी नक्षत्र में मथुरा में हुआ था।

(७) विजया दशमी

अश्विन सुदि दशमी

प्राय: देखने में आता है, कि विजया दशमी रावण बध और श्री रामचन्द्र की लंका-विजय की तिथि समझ कर मनाई जाती है। परन्तु वास्तव में विजय घटना का इस उत्सव के साथ कोई सम्बन्ध नहीं। प्राचीन काल में इस का शुद्ध स्वरूप यह था, कि इस दिन राजन्यगण अपनी सशस्त्र सेना सहित सज धज से विजय यात्रा का नियमबद्ध उपक्रम करते थे। वैश्य भी अपने वाहनों में बैठ कर इसी प्रकार व्यापार यात्रा का प्रारम्भसूचक अनुष्ठान करते थे। आज कल इस की पद्धति यह होनी चाहिए

कि बस्ती के बाहर कुछ दूर तक यात्रा की जाय। इस अवसर पर खड्ग सन्चालन, वाणों से लक्ष्यवेध तथा गत का आदि शास्त्राभ्यास के कौतुकों का प्रदर्शन होना चाहिए। बलहीन आर्य जाति में इस समय शक्ति संचय की बड़ी आवश्यकता है।

८ श्रीमद्दयानन्द निर्वाण उत्सव
(दीपावली)

कार्तिक अमावस्या

दीपावली के विषय में भी विजया दशमी के समान एक कल्पित गाथा चल पड़ी है. कि श्री रामचन्द्र के बनवस से लौट कर अयोध्या में पहुंचने पर उन की प्रजा ने उस हर्षोत्सव के

उपलक्ष्य में आज दीपावली की थी। वास्तव में बात यह है कि आज के दिन से शीत का शासन आरम्भ होता है। भावी शीत के निवारण के लिए गरम वस्त्रों का प्रबन्ध करना होता है, वायु-मण्डल का संशोधन हवन यज्ञ से तथा घरबार की स्वच्छता लिपाई पुताई से की जाती है। इसी समय सावन की फसल का आगमन होता है, इसी फसल के स्वागत के लिए दीपमाला का उत्सव मनाया जाता है। किन्तु इस महारात्रि का महत्व घटना ने और भी बढ़ा दिया। इसी के सायंकाल विक्रमी सं० १९४० तदनुसार ३० अक्टूबर सन् १८८३ ई० मंगलवार को २० वीं शताब्दी के अद्वितीय वेदोद्धारक और वर्तमान आर्य-

समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द के उच्च आत्मा ने इस नश्वर शरीर को छोड़ा था । अतः आज के दिन ऋषि के गुणानुवाद गाये जाने चाहियें। उन के पवित्र चरित्र से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये ।

(६) संक्रान्ति ।

यह पर्व चिरकाल से चला आता है । सभी प्रान्तों में यह एकसा मनाया जाता है । आज शीत अपने यौवन पर है । अतः स्थान २ पर हवन यज्ञ होने चाहियें, तिल के लड्डू बांटे जाएं और स्ववित्तानुसार कम्बल आदि दीन दुखियों को दान दिए जाएं ।

(१०) वसन्त पंचमी

माघसुदि पञ्चमी।

यह समय बहुत सुहावना होता है। सारी प्रकृति ने बसन्ती बाना पहन लिया है। खेतों में जहां तक दृष्टि दौड़ाएं, हरियावल ही हरियावल दिखाई देती है। क्या पशु क्या पक्षी और क्या मनुष्य सब का हृदय प्रसन्नता से खिलने लगता है। इस समय आमोद-प्रमोद और राग रंग की सूझती है। आज पीताम्बर (पीले वस्त्र) धारण कर हवन यज्ञ के पश्चात् बसन्ती हलवे का भोजन करें, समूह रूप से सम्मिलित होकर उपवन वा कुसुमोद्यान में भ्रमण तथा बालकाओं की क्रीड़ा की प्रदर्शनी जिस से कि वसन्तोत्सव की उत्कर्षवृद्धि हो।

(११) सीताष्टमी जानकी जन्म दिन
फाल्गुन वदी अष्टमी

जब तक संसार में नारी जाति का अस्तित्व रहेगा, जब तक मर्यादा पुरुषोत्तम महाराज रामचन्द्र की धर्मपत्नी सतीशिरोमणि पतिपरायणा श्रीसीताजी की कीर्ति आसूर्यचन्द्र अचल, अमर बनी रहेगी। क्या सरलता में, क्या सुशीलता में, क्या सुन्दरता में, सभी विषयों में सीतादेवी अद्वितीय थीं। उन की पावनी जीवनी प्रत्येक भारतीय ललना के लिये आदर्शरूप है। इस पर्व में देवियों को विशेष-भाग लेना चाहिये। पर्व के आनन्द वर्धनार्थ कन्याओं की

बालोद्यानादि मनोरञ्जक क्रीड़ाओं की आयोजना होनी चाहिये ।

(१२) दयानन्द बोधोत्सव

[शिवरात्रि]

संसार की साधारण घटनाएं महापुरुषों के जीवन में महा परिवर्तन उत्पन्न कर देती हैं । शिवरात्रि की साधारण घटना ने ही दयानन्द को बोध प्रदान किया था और वही दयानन्द के जीवन भर मूर्त्तिपूजा के विरुद्ध विकट संग्राम की आदिकर्ता थी । इस लिए उसको आर्य्यसमाज के इतिहास में दयानन्द बोधरात्रि कहते हैं । इस रात्रि को प्रत्येक आर्य्य के यहां ऋषि दयानन्द के गुणों का कीर्तन होना चाहिये ।

[१३] वीरउत्सव [लेखरामबलिदान]

फाल्गुन सुदी तृतीया

आर्यसमाज के परिमित मण्डल में कोई भी ऐसा व्यक्ति न होगा जो धर्मवीर पं० लेखराम आर्यपथिक के नाम और काम को न जानता हो। पं० लेखराम भावुकता और धार्मिक श्रद्धा की साक्षात् मूर्ति थे। वह अत्यन्त त्यागी, सरलस्वभाव, प्रतिज्ञा पालने के पक्के, तेजस्वी, आर्य्य सिद्धान्त के अटल विश्वासी, सुलेखक, आर्यप्रचारक थे। मोहम्मदी लोग उनसे बहुत द्वेष रखते थे। उन्होंने छल कपट से उनको मारना चाहा। समय पाकर एक मुसलमान नवयुवक ने उनके पेट में कटार घोंस

दी, जिससे फाल्गुण सुदी ३ संवत् १९५३ को रात्रि के दो बजे उन्हों ने अपने नश्वर शरीर को वैदिक धर्म पर बलिदान कर दिया। हमें चाहिए कि इस पर्व पर धर्म-वीर के अन्तिम वाक्य को स्मरण करें "आर्यसमाज का लेख का काम बन्द नहीं होना चाहिये" और लेखराम मैमोरियल फंड की पूर्ति के लिए यथाशक्ति दान दें।

[१४] बासंती] (आषाढ़ी) नवसस्येष्टि
होली फाल्गुन पूर्णिमा

आषाढ़ की फसल भारत की सब फ़सलों में सर्वश्रेष्ठ है। ऐसे जीवनाधार सर्वपालक शस्य (साढ़ी) के आगमन पर भारतवासियों का आनन्द उत्सव और रङ्गरलियां मनाना स्वाभाविक ही है। यह

पर्व प्रत्येक हिन्दू के घर भारतवर्ष में एक सिरे से दूसरे सिरे तक बड़े समारोह से मनाया जाता है। इस पर्व पर सब लोग ऊंच नीच छुटाई बड़ाई का विचार छोड़ स्वच्छ हृदय से आपस में मिलते थे। इतर आदि सुगन्धित द्रव्यों को परस्पर उपहार रूप से व्यवहार में लाते थे। परन्तु उसके स्थान पर आज रंग बखेरने की कुप्रथा चल पड़ी है। अतः आर्य पुरुषों को इस कुरीति को दूर करने का यत्न करना चाहिए।

गुरुकुलों में मनाये जानेवाले त्योहार।

(१) आर्यसमाज की स्थापना का दिन (२) रामजन्म दिन, (३) श्रावणी (४) जन्म अष्ठमी, (५) स्वामी विरजानन्द जी की मृत्यु का दिन, (६) विजयादशमी, (७) ऋषि उत्सव (८) दयानन्द बोधोत्सब, (९) संक्रान्ति माघी (१०) वसंत पञ्चमी (११) गुरुकुल जन्मोत्सव, (१२) दीक्षा रात्रि (१३) वीरोत्सव, (१४) गुरुदत्त जी की मृत्यु का दिन।

त्योहारों के दिन गुरुकुलों को सुसज्जित करके विशेष उत्सव मनाये जाते हैं, भाषण होते हैं और पद्य सुनाए जाते हैं।

आर्यों के सामाजिक धर्म्म ।

समाज में जाना ।

चंदा देना ।

सुशीलता से बैठना ।

प्रत्येक सामाजिक कार्य में उत्साह से भाग लेना ।

एक दूसरे का प्रेमपूर्वक सत्कार करना ।

एक दूसरे के दुःख सुख में सम्मिलित होना ।

आर्यों की बिरादरी बनाना ।

अपने सारे सम्बन्ध आर्यों से ही रखने ।

अपने बालकों का आर्यकुमार-सभाओं से सम्बन्ध जोड़ना ।

विवाहादि, पौराणिक बिरादरियों के जाल से बाहर निकल कर करना ।

दान में बड़ी रुचि रखना ।

सामाजिक कार्यों में सहायता देनी ।

अपने संन्यासियों, उपदेशकों, पुरोहितों का मान करना ।

आर्य्यसमाजपत्रों को प्रोत्साहित करना । (आर्य्य समाचार पत्रों की सूची इस पुस्तक के अन्त में दी गई है ।)

अपने बालकों को शिल्प विद्या सिखाना, तथा गुरुकुल और कन्या गुरुकुल में भेजना ।

ब्रह्मयज्ञ अर्थात् सन्ध्या ।

"सन्ध्या" शब्द के अर्थ-"सन्ध्यायन्ति संधीयते वा परब्रह्म यस्यां सा सन्ध्या" अर्थात् भली प्रकार ध्यान करते हैं, वा किया जाय परमेश्वर का जिसमें, वह सन्ध्या है। अतः रात और दिन के संयोग के समय दोनों सन्ध्याओं में, सब मनुष्यों को परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना करनी चाहिये।

विधि—पहले जलादि से बाह्य शरीर की शुद्धि और राग द्वेष आदि के त्याग से भीतर की शुद्धि करनी चाहिये। क्यों कि मनु भगवान् कहते हैं—

अद्भिर्गात्राणि शुध्यन्ति,
मनः सत्येन शुध्याति।

विद्यातपोभ्यां भूतात्मा,
बुद्धिर्ज्ञानेन शुध्यति ॥
मनु० अ० ५ श्लोक १०५

अर्थात् 'शरीर' जल से, 'मन' सत्य से, 'जोवात्मा' विद्या तथा तप से, और 'बुद्धि ज्ञान से शुद्ध होती है। यह सदा स्मरण रहे कि शरीर-शुद्धि की अपेक्षा अन्तःकरण की शुद्धि सबको आवश्यक है। यही सर्वोत्तम और परमेश्वर-प्राप्ति का एक मात्र साधन है। सन्ध्या सर्वदा एकाँत तथा शुद्ध और रमणीय स्थान में ही करनी चाहिये और उस समय मन श्रद्धायुक्त और प्रेम सम्पन्न होना चाहिये।

सन्ध्या करनेसे पूर्व यह अत्युत्तम होगा,

यदि सारा परिवार मिलकर एक दो भजन गान करे। इससे मन प्रभुभक्ति की ओर आजायगा। हृदय प्रफुल्लित होगा और स्वाभाविकही ईश्वर का जाप करने के लिये मन उद्यत हो जायेगा। दूसरा लाभ यह होगा, कि भजन गाने से आपके मुहल्ले में वैदिक धर्म का प्रचार होगा और आपके पड़ोसियों को आपका अनुकरण करने की लालसा होगी।

प्रातः और सायं समयों के लिये ईश्वर भक्ति के दो चार भजन दिये जाते हैं।

प्रातःकाल के लिए भजन।

(जो सन्ध्या से पहले गान करने चाहियें)

राग भैरवी) भजन सं० १ (ताल झप

जय जय पिता परम आनन्द दाता।
जगदादि कारण मुक्ति प्रदाता॥
अनन्त और अनादि विशेषण हैं तेरे।
सृष्टि का स्रष्टा तू धर्त्ता सँहर्ता॥२॥
सूक्ष्म से सूक्ष्म तू है स्थूल इतना।
कि जिसमें यह ब्रह्माण्ड सारा समाता॥३
मैं लालित व पालित हूं पितृस्नेह का।
यह प्राकृत सम्बन्ध है तुझ से ताता॥४॥
करो शुद्ध निर्मल मेरे आत्मा को।
करूँ मैं विनय नित्य सायं व प्रातः॥५॥
मिटाओ मेरे भय को अवागमन के।
फिरूँ न जन्म पाता और बिलबिलाता॥६॥
बिना तेरे है कौन दीनन का बन्धु।

कि जिसको मैं अपनी अवस्था सुनाता ॥७॥
'अमी' रस पिलाओ कृपा करके मुझको ।
रहं सर्वदा तेरा कीर्ति को गाता ॥८॥

भजन सं० २

रागिनी जोगिया—ताल धीमा

जो हरि गीत प्रीति सङ्ग गाये ।
तिस के शोक निकट नहीं आये ।
अमृतवत् तेरो चरित मनोहर,
मन की तप्त बुझाये ॥ १ ॥
उधरे पतित अधम अति पापी,
जो तव शरण में आए ।
हे प्रभु हम अति दुखिया हो कर,
तव शरणागत आए ॥२॥
परम सुखदाता ज्ञान प्रदाता,
तैं यह नाम धराए ।

मांग रहे द्वारे पर याचक,
अब क्या देर लगाए ॥ ३ ॥
विषयन से उपराम रहूं सदा।
भक्ति हृदय में भाए।
पढ़ सुन वेद वदाङ्ग "अमीचन्द"
संशय भ्रम मिटाए ॥४ जो हरि० ॥

भजन सं० ३

पिताजी तुम पतित उधारनहार ! ॥टेक॥
दीन शरण कङ्गाल के स्वामी,
दुःख के मोचनहार ॥१॥
इस जग माया जाल भ्रम में,
सूझे न सार असार ॥२॥
सत्य ज्ञान बिन अन्ध सम डोलें,
करें असत्य आचार ॥३॥
पाप प्रवाह भयङ्कर जल में,
डूबत हैं मंझधार ॥४॥

तुमरी दया बिन को समर्थ है,
करे दीनन को पार ॥ ५ ॥

भजन सं० ४

हुआ ध्यान में ईश्वर के जो मग्न,
उसे कोई क्लेश लगा न रहा ।
जब ज्ञान की गंगा में न्हाया,
तो मन में मैल जरा न रहा ॥१॥
परमात्मा को जब आत्मा में,
लिया देख ज्ञान की आंखों से ।
प्रकाश हुआ मन में उस के,
कोई उस से भेद छिपा न रहा ॥२॥
पुरुषार्थ ही इस दुनिया में,
हर कामना पूरी करता है ।
मन चाहा सुख उसने पाया,
जो आलसी बन के पड़ा न रहा ॥३॥

दुखदायक हैं सब शत्रु हैं,
यह विषय हैं जितने दुनियां के।
वही पार हुआ भवसागर से,
जो जाल में इनके फंसा न रहा ॥४॥
यह वेद विरुद्ध जब मत फैले,
पत्थर की पूजा जारी हुई।
जब वेद की विद्या लोप हुई,
तो ज्ञान का पांव जमा न रहा ॥५॥
यहां बड़े बड़े महाराज हुए,
बलवान हुए विद्वान हुए।
पर मौत के पंजे से केवल,
कोई रचना में आके बचा न रहा ॥६॥

———

सायंकाल के भजन ।

(जो सन्ध्या से पूर्व गान करने चाहियें)

कल्याण] भजन सं० १ [ताल झप

तुम हो प्रभु चाँद मैं हूं चकोरा ।
तुम हो कमल फूल मैं रस का भौंरा ।१।
ज्योति तुम्हारीका मैं हूं पतङ्गा ।
आनन्द घन तुम हो, मैं बन का मोरा ।२।
जैसे है चुम्बक को लोहे से प्रीति ।
आकर्षन करे मोहि लगातार तोरा ॥३॥
पानी बिना जैसे हो मीन व्याकुल ।
ऐसा ही तड़पाय तुमरा बिछोड़ा ॥ ४ ॥
इक बूंद का मैं प्यासा हूं चातक ।
अमृत की करो वर्षा हरो ताप मोरा ॥५॥

भजन स० २

एक घड़ी तेरा नाम न जपिया।
ऐवें गईया सारी उमर बिहानी ।

तब सिमर हित जन्म यह धरिया।
सुध बुध ज्ञान तैं मैं मन भरिया।
जस लई आए सो काज न करिया।
खाली करही दोय अन्त सिधानी॥१॥
इस जग आप हरि विसराय।
इक पल निज मन प्रभु नहीं ध्याओ॥
नमकहरामी ओ औध गंवायो।
गन्दी हो गई जिह्वा और वाणी॥ २॥
तब सिमरण बिना और गंवाई।
नाहीं करी जो तुम मन भाई॥
भेंट धराँ की मैं तेरी गोसाईं।
दो कर छूछे धर्म धन हानि॥३॥
इस जग आए झगड़े मल्ले।
रौले में आए रौले में चल्ले।
नाम तेरा धन मूल न पल्ले॥
आयु हुई एक विफल कहानी॥४॥

राग भैरवी]भजन नं० ३[ताल चंचल

वज़न–हरि का ध्यान लगाओ।

टेक—लीजिये अब मोहि तार,
दयामय लीजिये अब मोहि तार।

मन वच कर्म के पाप पुञ्ज मम,
शीघ्र भस्म कर डार ॥१॥ द० ॥

जैसे तनिक चिङ्गारी जलावत,
घास के कोठ अम्बार।

ऐसो नाम है अघनाशक तव,
जिस ने लिया विचार ॥२॥ द० ॥

तुम्हारा पुत्र सुपुत्र कहला कर,
जाऊं किस के द्वार।

श्रीमान् महाराजाधिराज,
आवत शरण तिहार ॥३॥द० ॥

नहीं पियारी है तहसीलदारी,
नहीं जज्जी दरकार ॥४॥ द० ॥

यदि राखो अपनी सेवा में,
किङ्कर चौकीदार ॥५॥ द० ॥
होऊं गवर्नर तब क्या बनेगा,
जाऊंगा अन्त सिधार ॥६॥द० ॥
अभिलाषी हूं उस पद्वी का,
बना रहूं लगातार ॥७॥ द०॥
कपिल पतञ्जलि गौतम आदि,
करनी कर हुए पार ॥८॥ द०॥
'अमीचन्द' जैसे नीच को तारो।
हे पिता पतित उधार ॥९॥ द०॥

एक दो भजन गान कर के फिर कम से कम तीन प्राणायाम करें। अर्थात् भीतर की वायु को बल से बाहर निकाल कर यथाशक्ति बाहर ही रोक दे, फिर शनैः २

अंदर लेजाकर कुछ देर भीतर ही रोक दें, फिर बाहर करें । यह एक प्राणायाम हुआ । ऐसे तीन प्राणायाम करें । इस से आत्मा और मन भगवान् की भक्ति में स्थिर होते हैं । इसके अनन्तर गायत्री से शिखा को बांध कर बालों को बिखरने से बचायें ।

गायत्री मंत्र के साथ शिखा बंधन

ओ३म् भूर्भुवः स्वः तत्सवितु-र्वरेण्यं, भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् ॥

ऋ० मं० ३ । सूक्त० ६२, मंत्र १० ॥

इस के पश्चात् दायें हाथ की हथेली पर थोड़ा सा पानी डाल कर निम्न लिखित मन्त्र से तीन वार आचमन

करना चाहिये। इस से कण्ठ के कफ और पित्त की निवृत्ति होकर मन भगवान् के पूजन के लिए उद्यत हो जाता है।

अथाचमनमन्त्रः

ओं शन्नो देवीरभिष्टय, आपो भवन्तु पीतये। शंय्योरभिस्रवन्तु नः ॥१॥

यजु० अ० ३६ मन्त्र १२॥

(ओम्) परमेश्वर (शम्) कल्याणकारी (नः) हम पर (देवीः) सर्व प्रकाशक (अभिष्टये) मनोवाञ्छित आनन्द के लिए (आपः) सर्वव्यापक (भवन्तु) होवें (पीतये) पूर्णानन्द की प्राप्ति के लिए (शंय्योः) सुख की (अभिस्रवन्तु) चारों ओर से वर्षा करें (नः) हम पर।

भावार्थ-सर्वव्यापक और सर्वप्रकाशक

परमेश्वर मनोवाञ्छित आनन्द की प्राप्ति के लिए हम पर सुख की सर्वदा वृष्टि करे ॥१॥

विधि—इस मन्त्र से तीन आचमन करें।

अथेन्द्रियस्पर्शमन्त्रः

ओं वाक् वाक् । ओं प्राणः प्राणः । ओं चक्षुः चक्षुः । ओं श्रोत्रम् श्रोत्रम् । ओं नाभिः । ओं हृदयम् । ओं कण्ठः । ओं शिरः । ओं बाहुभ्यां यशोबलम् । ओं करतल करपृष्ठे ॥२॥

(वाक्) वाणी (प्राणः) श्वास (चक्षुः) आंख (श्रोत्रम्) कान (नाभिः) नाभि (हृदयम्) दिल (कण्ठः) कण्ठ (शिरः) सिर (बाहुभ्यां) भुजाओं से (यशोबलं) कीर्ति, शक्ति (करतल) हथेली (करपृष्ठ) हाथ की पीठ ।

भावार्थ—हे परमात्मन् ! मेरी वाणी और जिह्वा शुभ बोलने वाली हो। मेरे दोनों नेत्र पवित्र भाव से देखें, मेरे दोनों कान सदा शुभ मंगलाचार को सुनें, मेरी नाभि, हृदय, कण्ठ, सिर सब अपना शुभ कार्य करें और मैं दोनों भुजाओं और हाथों से दुष्टों का ताड़न और श्रेष्ठों का पालन करता हुआ यश और बल को प्राप्त होऊं ॥२॥

विधि—प्रत्येक इन्द्रिय के नाम उच्चारण के साथ साथ उन अङ्गों को छूना चाहिये, ताकि मन की प्रवृत्ति उन अङ्गों की ओर हो।

अथ मार्जनमन्त्रः

ओं भूः पुनातु शिरसि। ओं भुवः

पुनातु नेत्रयोः । ओं स्वः पुनातु कण्ठे । ओं महः पुनातु हृदये । ओं जनः पुनातु नाभ्याम् । ओं तपः पुनातु पादयोः । ओं सत्यं पुनातु पुनः शिरसि । ओं खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र ॥३॥

(भूः) प्राणाधार (पुनातु) पवित्र करे । (भुवः) दुःखनाशक (स्वः) सुख स्वरूप (महः) बड़ा (जनः) पिता (तपः) दण्डदाता, ज्ञान स्वरूप (सत्यम्) सत्य-स्वरूप, अविनाशी (पुनः) फिर (खम्) आकाशवत् व्यापक (ब्रह्म) बड़ा ईश्वर (सर्वत्र) सब स्थान में ।

भावार्थ—जड़ और चेतन स्वरूप सब के जीवन का हेतु, प्राण से भी प्यारा परमात्मा सिर को पवित्र करे । अपने सेवकों को दुःखों से अलग कर सदा

सुख में रखने वाला प्रभु दोनों आंखों को पवित्र करे। सब में व्यापक, सब को नियम में रखने वाला और सब के ठहरने का स्थान तथा सुख स्वरूप देव कण्ठ को पवित्र करे। सब से बड़ा और सब का पूज्य देव हृदय को पवित्र करे। सर्वजगत् का उत्पादक पिता नाभि को पवित्र करे। दुष्टों का सन्तापकारी और ज्ञान स्वरूप परमेश्वर पाओं को पवित्र करे, अविनाशी प्रभु फिर सिर को पवित्र करे, सब में व्यापक और सब से बड़ा सब अङ्गों को पवित्र करे ॥३॥

विधि—इस मन्त्र का अर्थ विचारते हुए हाथ में जल लेकर मार्जन करना अर्थात् प्रत्येक अङ्ग का नाम लेकर उस पर जल छिड़कना चाहिये। इस से

आलस्य दूर होकर शरीर शुद्ध होगा और मन में पवित्रता का भाव आवेगा।

ओं भूः। ओं भुवः। ओं स्वः। ओं महः। ओं जनः। ओं तपः। ओं सत्यम् ॥४॥

तैत्तिरीयारण्य० प्र० १०। अनु० २७॥

भावार्थ—हे जगदीश्वर! आप प्राणाधार पवित्र करने हारे, आनन्दस्वरूप सब से बड़े, सब के पिता, सबको जानने वाले अविनाशी हैं ॥४॥

विधि—इस मन्त्र से प्राणायाम करे, अर्थात् भीतर के वायु को नासिका पुट से बाहर निकाल कर यथा शक्ति वहीं रोके। फिर धीरे २ ग्रहण करके और रोक करके वैसे ही फिर बाहर निकाले

और रोके। इस प्रकार कम से कम तीन बार करे। जितने समय तक श्वास रोके, उतने समय तक इस मन्त्र का अर्थ विचार पूर्वक मन में जपता रहे। प्राणायाम पवित्र और नीरोग जीवन का देने वाला है। इस से शरीर की गन्दी वायु बाहर निकल कर आयु को बढ़ाने वाली शुद्धवायु का प्रवेश होता है। रक्त साफ़ होकर कई प्रकार की बीमारियों का नाश होता है और मन स्थिर हो जाता है ॥४॥

प्राणायाम मन्त्रः

अथाघमर्षणमन्त्राः ।

ओं ऋतञ्च सत्यञ्चाभीद्धात् तपसोऽध्यजायत। ततो रात्र्यजायत, ततः समुद्रो अर्णवः ॥१॥५॥

ऋ० मं० १० । सू० १९० । मं १ ॥

(ऋतम्)वेद (च और सत्यम्, च) कार्यरूप प्रकृति (अभि + इद्धात + तपसः) सब तरफ से प्रकाशमान, ज्ञानस्वरूप प्रभु से (अधि + अजायत) उत्पन्न हुए (ततः रात्री अजायत) उसी प्रभु से प्रलयरूपी रात्रि पैदा हुई (ततः समुद्रः) उसी परमेश्वर की शक्ति से पृथिवी का समुद्र (अर्णवः) और अन्तरिक्षका मेघरूप महा समुद्र उत्पन्न हुआ ॥१॥५॥

भावार्थ—परमेश्वर के जिस ज्ञानमय अनन्त सामर्थ्य से वेद विद्या और कार्य रूपी प्रकृति उत्पन्न हुई, उसी सामर्थ्य से प्रलयरूपी रात्रि और जलकोष समुद्र उत्पन्न हुआ ॥ १ ॥५॥

ओं समुद्रादर्णवादधि, संवत्सरोअजायत । अहोरात्राणि विदधद्, विश्वस्य

मिषतो वशी ॥ २ ॥ ३॥
ऋ० मं० १२ । सू० १९० । मं०२ ॥

(समुद्रात् अर्णवात् अधि) भूमिस्थ तथा आकाशस्थ समुद्रों के पश्चात् (संवत्सरः अजायत) वर्ष--कालविभाग उत्पन्न हुआ (अहोरात्राणि) दिन रात को (मिषतः) सहजस्वभाव से (विश्वस्य) जगत् के (वशी) वश में रखने वाले परमात्मा ने विदधद् बनाया ॥२ ॥६ ॥

भावार्थ—जगत् को वश में रखने वाले परमेश्वर ने अपने सहज स्वभाव से जलकोष के पीछे काल के विभाग दिन, रात और वर्ष बनाए ॥२॥ ६॥

ओं सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत् दिवञ्च पृथिवीं, चान्तरिक्षमथो स्वः ॥३॥७॥
ऋ० मं० १० । सू० १९० । मं० ३॥

(सूर्याचन्द्रमसौ) सूर्य और चन्द्रमा को (धाता) जगत् को धारण करने वाले परमात्मा ने (यथापूर्वम्) पहली सृष्टि की नाईं (अकल्पयत्) बनाया । इसी तरह (दिवम्, च) द्युलोक (पृथिवीं, च) पृथिवी लोक (अन्तरिक्षम्) अन्तरिक्ष लोक, (अथ, उ) और निश्चय से (स्वः) आकाशस्थ लोकों को उत्पन्न किया ॥३॥

भावार्थ—विधाता ने पहले की तरह ही सूर्य, चन्द्र द्यु लोक, पृथिवी-लोक अन्तरिक्ष और अन्य सब लोक, लोकान्तर बनाए ॥३॥ ७॥

इन तीनों मन्त्रों का तात्पर्यार्थ:—मैं उस पूर्ण परमात्मा का ध्यान करता हूं, कि जिस अनन्त ज्ञानमय परमेश्वर के सामर्थ्य से सब विद्या का भण्डार वेद,

शास्त्र और त्रिगुणात्मक अर्थात् सत्व रज और तम कारणरूप प्रकृति कार्यरूप होकर पूर्वकल्प के समान उत्पन्न हुए। उसी ईश्वर के सामर्थ्य से * महारात्रि, प्रलयके पीछे हज़ार चतुर्युगी तक रहा करती है, सो भी उत्पन्न होती है। उसी परमात्मा से पृथिवी और मेघमण्डल और महा समुद्र की उत्पत्ति हुई। उस के पश्चात् संवत्सर भी पूर्व सृष्टि के समान उत्पन्न हुआ है। सबको वश में करने वाले ईश्वर ने सहज स्वभाव से जगत् के रात्रि, दिवस, घटिका, पल और तृणादि को पूर्ववत् रचा है। सूर्य और चन्द्रमा को सब जगत् के धारण और पोषण करने वाले ने पूर्वकल्प के तुल्य रचा और सूर्य आदि लोकों का

प्रकाश पृथिवी और सूर्य लोक के बीच में जो लोक हैं, उन को भी ईश्वर ने पूर्ववत् रचा है।

तात्पर्य यह है कि वेद से लेकर पृथिवी पर्यन्त जो यह जगत् है. सो सब ईश्वर के नित्य सामर्थ्य से ही प्रकाशित हुआ है, और ईश्वर व्यापक हो कर अन्तर्यामी रूप से सब के पाप पुण्य को देखता हुआ पक्षपात छोड़ के सबको यथावत् फल दे रहा है। ऐसा निश्चित जानकर, ईश्वर से भय मानकर. सब मनुष्यों को उचित है, कि मन वचन तथा कर्म से पापकर्मों को कभी न करें। यह तीन मन्त्र पापों से बचाने वाले हैं इसलिए इनका नाम अघमर्षण (पापों के मारने वाले) है। अघमर्षण के पश्चात् ' शन्नोदेवी" इस मन्त्र से फिर तीन आचमन करे, इसलिए कि

प्राणायाम से कण्ठ सूख जाता है । अब 'गायत्री' मन्त्र का एक बार जाप करें ।

अथ मनसापरिक्रमा मन्त्राः

ओं प्राची दिगग्निरधिपतिरसितो रक्षितादित्या इषवः । तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्योनमो रक्षितृभ्यो नम, इषुभ्यो नम, एभ्यो अस्तु । यो ३ऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥१॥८॥

अथर्व० कां० ३ । सू० २७ । मं० १ ।

(प्राची दिग्) सम्मुख अथवा पूर्व की ओर (अग्निः अधिपतिः ज्ञान स्वरूप परमेश्वर हमारा स्वामी है । (असितः रक्षिता) बन्धन रहित प्रभु हमें बचाने वाला है । (आदित्या इषवः) विद्वान् लोग तथा सूर्य की किरणें उस के बाण

हैं। (तेभ्यः नमः) उन सब अधिपतियों रक्षिताओं और वाणरूपों को नमस्कार हो (अधिपतिभ्यः, नमः) स्वामियों को नमस्कार हो (रक्षितृभ्यः नमः) रक्षा करने वाले को नमस्कार हो (इषुभ्यः नमः) बाणरूपों को नमस्कार हो (एभ्यः, अस्तु) इन सब को (नमस्कार) हो। (यः) जो (अस्मान्) हम सब को (हमारा) (द्वेष्टि) द्वेष करता है (यं) जिसको (का) (वयं) हम सब (द्विष्मः) द्वेष करते हैं। (तं) उसको (वः) आप प्रभु के (जम्भे) न्यायरूपी जबड़े में (दध्मः) धारण करते हैं ।।१।।

भावार्थ—पूर्व दिशा में जो अग्नि ज्ञान-स्वरूप, अधिपति, सब जगत् का स्वामी बन्धन रहित, रक्षा करने वाला, जिसके

बाण सूर्य की किरणें हैं, उन सब गुणों के अधिपति, ईश्वर की हम लोग बारम्बार वन्दना करते हैं। जो ईश्वर के गुण और उसके रचे पदार्थ जगत् की रक्षा करने वाले हैं और पापियों को बाण के समान पीड़ा देने वाले हैं, उनको हम नमस्कार करते हैं। जो प्राणी अज्ञान से धार्मिक तथा पापी पुरुष से द्वेष करते हैं उन सब की बुराई वह बाणरूपी किरण मुख के बीच में दग्ध कर देते हैं, कि जिससे हम लोग किसी से वैर न करें और न कोई हम वैर करे। किन्तु हम सब लोग मित्र भाव से परस्पर वर्त्ताव करें॥ १॥ ८॥

ओं दक्षिणा दिगिन्द्रोऽधिपतिस्तिरश्चिराजी रक्षिता, पितर इषवः। तेभ्यो

नमो, ऽधिपतिभ्यो नमो, रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम, एभ्यो अस्तु । यो३ऽस्मान्, द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः २

अथर्व० कां० ३ । सू० २७ । मं ॥२॥

(दक्षिणा, दिग्) दक्षिण दिशा अथवा दाईं ओर (इन्द्रः अधिपतिः) परमैश्वर्ययुक्त परमेश्वर हमारा स्वामी है (तिरश्चि, राजिः, रक्षिता , टेढ़ी चाल तथा स्वभाव वाले मनुष्य वा पशु, पक्षी—सब से रक्षा करने वाला वही है (पितरः, इषवः) ज्ञानी लोग उस के बाण समान हैं । आगे पूर्ववत् ॥ २ ॥

भावार्थ—हे परमेश्वर ! आप हमारे दक्षिण की ओर व्यापक हैं । आप ही हमारे राजाधिराज हैं और भुजङ्गादि बिना हड्डी वाले प्राणियों से हमारी रक्षा करते

हैं और ज्ञानियों द्वारा हमें ज्ञान प्रदान करते हैं । आप के आधिपत्य-रूपी और जीवन-रूपी रक्षा के लिये आप को नमस्कार है । जो हम से द्वेष करते हैं, हम उन्हें आप के न्याय पर छोड़ते हैं ।२।९॥

ओं प्रतीची दिग्वरुणोऽधिपतिः पृदाकू रक्षितान्नमिषवः, तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम, इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु । योऽस्मान् द्वेष्टि, यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥३॥१०॥

अथर्व० कां० ३ । सू० २७ । मं० ३ ॥

(प्रतीची, दिग्) पश्चिम वा पृष्ठ भाग में (वरुणः, अधिपतिः) सर्वोत्तम वरने योग्य परमात्मा हमारा स्वामी है (पृदाकू रक्षिता) हड्डी वाले विषधारी पशुओं से हमारी वह रक्षा करने वाला है (अन्नं,

इषवः) खाने योग्य सब पदार्थ उस के वाण रूप हैं । आगे पूर्ववत् ॥३॥

भावार्थ—हे सौन्दर्य के भण्डार ! आप हमारी पृष्ठ की ओर हैं। हमारे महाराजा हैं। और बड़े २ हड्डी वाले व विषधारी और पशुओं से हमारी रक्षा करने वाले हैं। आप हमारे प्राण अन्न द्वारा रखते हैं, हम आप को नमस्कार करते हैं। जो हम से द्वेष करते हैं। हम उन्हें आप के न्याय पर छोड़ते हैं ।३।१०।

ओं उदीची दिक्सोमोऽधिपतिः, स्वजो रक्षिता, ऽशानिरिषवः । तेभ्यो नमो ऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम, इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु । योऽ३ऽस्मान्द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥४।११।

अथर्व० कां० ३ । सू० २७ । मं० ४॥

(उदीची, दिक्) उत्तर वा बांई ओर (सोमः, अधिपतिः) सौम्य, शान्त-स्वरूप प्रभु हमारा स्वामी है [स्वजः (सु अजः),रक्षिता] स्वयं उत्पन्न, वा अच्छे प्रकार अजन्मा परमेश्वर हमारी रक्षा करने वाला है (अशनिः इषवः) विजली उसका बाण रूप है। आगे पूर्ववत् ॥४॥

भावार्थ—हे पिता ! आप हमारे वाम पार्श्व में व्याप्त हैं और हमारे परम स्वामी हैं। आप स्वयम्भू और हमारे रक्षक हैं। आप ही बिजली द्वारा हमारे रुधिर की गति और प्राणों की रक्षा करते हैं। हम आप को नमस्कार करते हैं। जो हम से द्वेष करता है, अथवा जिस से हम द्वेष करते हैं उसे हम आप के न्याय पर छोड़ते हैं ॥४॥११॥

ओं ध्रुवा दिग्विष्णुरधिपतिः, कल्माषग्रीवो रक्षिता, वीरुध इषवः । तेभ्यो नमो ऽधिपतिभ्यो नमो, रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम, एभ्यो अस्तु । यो३ऽस्मान् द्वेष्टि, यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥५॥१२

अथर्व० कां०३। सू० २७। मं० ५॥

(ध्रुवा, दिग्) नीचे की ओर (विष्णुः अधिपतिः) सर्वव्यापक परमात्मा हमारा स्वामी है (कल्माषग्रीवः, रक्षिता) हरी हरी गर्दन वाले वृक्षादियों से हमारी रक्षा करता है (वीरुधः, इषवः,) बेल बूटे वनस्पतियां उसके बाण समान है। आगे पूर्ववत् ॥५॥

भावार्थ—हे सर्वव्यापक प्रभो ! आप हमारे नीचे की ओर के देशों में विद्यमान हैं। आप हमारे राजा हैं । आप हरे रंग वाले वृक्षों और बेलों के द्वारा हमारे

प्राणों की रक्षा करते हैं। हम आप को नमस्कार करते हैं। जिस से हम द्वेष करते हैं अथवा जो हम से द्वेष करे उसे हम आप के न्याय पर छोड़ते हैं। ५। १२

ओं ऊर्ध्वा दिग् बृहस्पतिरधिपतिः, श्वित्रो रक्षिता वर्षमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो, रक्षितृभ्यो नम, इषुभ्यो नम, एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥६।१३।

अथर्व० कां० ३। सू० २७। मंत्र ६।

(ऊर्ध्वा, दिग्) ऊपर की ओर (बृहस्पतिः, अधिपतिः) आकाश सूर्य्यादिकों का पति, अथवा वेद रूपी वाणी का स्वामी हमारा राजा है (श्वित्रः रक्षिता) शुद्ध, पवित्र स्वरूप वा कुष्टादि रोगों से वह हमारी रक्षा करने वाला है

(वर्षम्, इषयः) वर्षा उस के बाण समान है । आगे पूर्ववत् ॥६॥

भावार्थ–हे महान् प्रभो ! आप ऊपर की ओर व्यापक, पवित्रात्मा, हमारे स्वामी और रक्षक हैं आप वर्षा करके हमारी कृषि को सींचते हैं । जिस से हमारा जीवन होता है आप को हम नमस्कार करते हैं । जिससे हम द्वेष करें अथवा जो हम से द्वेष करता है, उसे हम आप के न्याय पर छोड़ते हैं ॥६॥

इन छः मन्त्रों के द्वारा परमात्मा को सर्वव्यापी समझने के लिए मन छहों दिशाओं की परिक्रमा करता है । इसी लिए इन छः मन्त्रों का नाम मनसापरिक्रमा (मन की परिक्रमा) है । इन मन्त्रों को यथार्थ समझने वाला कभी और

कहीं जाकर भी पाप नहीं कर सकता, क्योंकि वह समझता है, कि परमात्मा उसके हर पाप को देख रहा है ॥६॥१३॥

अथ उपस्थानमन्त्राः

'उपस्थान' का अर्थ है—"निकट बैठना" । चार मन्त्रों से परमात्मा के निकट असन अर्थात् समाधि लगाते हैं ।

ओं उद्वयं तमसस्परि, स्वः पश्यन्त उत्तरम् । देवं देवत्रा सूर्य्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ॥१॥१४॥

यजु० अ० ३५ । मन्त्र १४ ॥

(वयम्) हम सब (तमसः, परि) सब अन्धकार से परे रहने वाले (स्वः) सुख स्वरूप (उत्तरम्) प्रलय के पीछे भी रहने वाले (देवं देवत्रा) देवों के देव, प्रकाशकों में प्रकाशक (सूर्य्यम्) चरा-

चर के आत्मा (ज्योतिः) प्रकाश, ज्ञान-स्वरूप (उत्तरम्) सब से श्रेष्ठ परमात्मा को (पश्यन्तः) देखते, अनुभव करते हुए (उद्, अगन्म) प्राप्त होवें ॥१॥

भावार्थ–हे महादेव ! आप सब अन्धकार से अलग, सुख स्वरूप, प्रलय के पीछे भी सदा वर्तमान, प्रकाशकों के प्रकाशक, चराचर के आत्मा, ज्ञानस्वरूप और सब से श्रेष्ठ आपको जान कर हम लोग आप की शरण को प्राप्त हुए हैं। आप ही हमारी रक्षा करें ॥१॥१४॥

ओं उदुत्यं जातवेदसं, देवं वहन्ति केतवः। दृशे विश्वाय सूर्य्यम् ॥१॥१५॥

यजु० अ० ३३। मन्त्र ३१॥

(त्यम्) उस परमात्मा (जातवेदसम्) जगत् के उत्पन्न करने वाले, जिस से

ऋग् वेदादि चार वेद प्रकट हुए हैं, सकल भूतों में व्यापक तथा सारे उत्पन्न हुए २ पदार्थों को जानने वाले (देवम्) दिव्य, प्रकाश स्वरूप (सूर्य्यम्) चराचर के आत्मा को (दृशे, विश्वाय) सब को दिखाने के लिये (केतवः) वेद अथवा संसार के सकल पदार्थ (उद्, उ, वहन्ति) लाल पीली झण्डियों की तरह निश्चय से प्रकट करते हैं ॥२॥

भावार्थ–हे जगदीश्वर ! जो सकल ऐश्वर्य के उत्पादक, और जिससे वेद प्रकट हुए सर्वज्ञ और जीवात्मा के प्रकाशक हैं । आप की महिमा सब को दिखाने के लिये वेद और संसार के पदार्थ पताका का काम देते हैं । जिस प्रकार झंडियां मार्ग दिखलाती हैं, उसी

प्रकार वे सब स्वाभाविक वस्तुएं परमेश्वर की प्रतीति कराती हैं ॥ २ ॥ १५ ॥

ओं चित्रं देवानामुदगादनीकं, चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः, आ प्रा द्यावा पृथिवी अन्तरिक्ष॑ᳩ सूर्य्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च स्वाहा ॥३॥ यजु० अ० १३। मन्त्र ४६ ॥ वा-अ. ७ मं. ४२॥३॥१६

हे प्रभो ! यद्यपि सकल जगत् के पदार्थ आप की महिमा का दिग्दर्शन कराते हैं, तो भी आप (चित्रम्) विचित्र अद्भुत स्वरूप हैं (देवानाम्) विद्वानों के हृदय-मन्दिरों में आप (उद्, अगात्) सदा पहुंचे हुए हैं, (अनीकम) आप बलस्वरूप हैं (मित्रस्य) सब से स्नेह करने वाले मनुष्य, सूर्य्य तथा प्राण के (वरुणस्य) सर्व श्रेष्ठ मनुष्य तथा चन्द्र के (अग्नेः)

अग्नि विद्या में निपुण जन तथा अग्नि के (चक्षुः) प्रकाशक हैं (द्यावा पृथिवी) द्युलोक और भूमि लोक (अन्तरिक्षम्) और अन्तरिक्ष लोक को (आ, प्रा) चारों ओर से धारण कर रहे हैं (जगतः, तस्थुषः, च) चर अर्थात् जङ्गम और अचर अर्थात् स्थावर संसार के आप (सूर्य्यम्, आत्मा) प्रकाश करने वाले, सूत्रात्मा हैं, (स्वाहा) यह सब कुछ उपर्युक्त सत्य है, ऐसी ध्वनि मेरे अन्तरात्मा से निकलती है ॥ ३ ॥

भावार्थ—हे स्वामिन् ! यद्यपि इस संसार के पदार्थ आप को दर्शाते हैं, परन्तु आप अद्भुत और विचित्र हैं। आप दिव्य पदार्थ के बल हैं, आप सूर्य चन्द्र और अग्नि के चक्षु अथवा प्रका-

शक हैं । भूमि आकाश और तदन्तर्गत लोक, सब आप के सामर्थ्य में हैं । आप चर अचर जगत् के उत्पादक और अन्तर्यामी हैं । हे प्रभो ! हम ऐसे बलवान् हों, कि सदैव मन वाणी और कर्म से सत्य को ग्रहण करें ॥ ६ । १६ ॥

ओ३म् तच्चक्षुर्देवहितं. पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं, जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतं, प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदःशतात् ॥ ४ ॥ १७ ॥

यजु० अ० ३६ । मन्त्र २४ ॥

(तत्) वह प्रभु (चक्षुः) सब कुछ देखने वाला है, (देवहितम्) विद्वानों का हित कारी है, (पुरस्तात्) सृष्टि से पूर्व विद्यमान था (शुक्रम्) शुद्धस्वरूप

(उत्, चरत्) और उत्कृष्ट, सर्वव्यापक और प्रलय के पीछे भी वर्त्तमान रहने वाला है, उस आप की दया से (पश्येम शरदः शतम्) हम सब सौ वर्ष तक आंखों से देखें (जीवेम शरदः शतम्) सौ वर्ष तक जीते रहें, (शृणुयाम शरदः शतम्) सौ वर्ष तक कानों से सुनें, (प्रब्रवाम शरदः शतम्) सौ वर्ष तक मुख से बोलें, वेद भगवान का उपदेश करें, (अदीनाः स्याम शरदः शतम्)सौ वर्ष तक किसी के अधीन, गुलाम बन कर न रहें, (भूयः च शरदः शतात्) और सौ वर्ष से अधिक भी उसी प्रकार आप का स्वरूप तथा रचा हुआ जगत् देखें, सुनें, बोलें तथा स्वतन्त्र जीवें ॥४॥

भावार्थ—हे दिव्य सर्वदर्शक ! आप

अनादि काल से विद्वानों और संसार के हितार्थ शुद्ध वर्तमान हैं। हे प्रभो! हम आप को सौ वर्ष देखें, सुनें और आप के नाम का सौ वर्ष व्याख्यान करें। सौ वर्ष की आयु भर पराधीन न हों और यदि हमारी सौ वर्ष से अधिक आयु हो तो भी इसी प्रकार विचरें ॥ ४ ॥ ७ ॥

ऊपर लिखे मन्त्रों से परमात्मा का उपस्थान करें।

अथ गुरुमन्त्रः

ओं भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् ॥ १८ ॥

यजु० अ० ३६ मन्त्र ३ ॥

(ओ३म्) रक्षा करने वाला (भूः) प्राणाधार (भुवः) दुःखनाशक (स्वः)

सुखस्वरूप परमेश्वर (तत्) वह प्रसिद्ध प्रभु जो (वरेण्यम्) पूजनीयतम, उत्तम (भर्गः) पापनाशक और ज्ञानस्वरूप है उस (सवितुः) सकल जगत् के उत्पन्न करने वाले (देवस्य) धर्मात्माओं को आनन्द देने वाले दिव्य स्वरूप का (धीमहि) हम सब मिलकर ध्यान करते हैं, (यः) जो (नः) हमारी (धियः) बुद्धियों को (प्रचोदयात्) पापों से हटाकर अच्छे कामों में सदा प्रेरणा करे अर्थात् सन्मार्ग पर ले चले ।

भावार्थ—जिस परब्रह्म परमात्मा का मुख्य, सर्वोत्तम नाम ओंकार है, जो सम्पूर्ण जन्तुओं का प्राणदाता तथा प्राणों से भी प्रिय है, जो सज्जनों के दुःखों को दूर करके नित्यानन्द में रखता है, जो

सर्वज्ञ, सर्वव्यापी, सर्व-शक्तिमान् है, जो अनन्त ब्रह्माण्ड का तथा उस के अन्तर्गत सम्पूर्ण वस्तुओं का आदि कारण, पालक तथा लयकारक है, जो अनन्त, ग्रहण करने योग्य है, उस सच्चिदानन्दस्वरूप, निरञ्जन, निराकार, निराधार, निर्विकार, अधमोद्धारक, धर्मार्थकाममोक्षप्रद तेज का हम ध्यान करते हैं, कि वह हमारी बुद्धियों को दुराचारों से छुड़ा कर सदाचार में स्थिर करे ।

इस प्रकार से सब मन्त्रों के अर्थों से परमेश्वर की सम्यक् उपासना करके निम्न लिखित वाक्यों से समर्पण करें । हे ईश्वर दयानिधे ! आपकी कृपा से जो २ उत्तम काम हम लोग करते हैं, वे सब आप के

अर्पण हैं। जिससे हम लगो आपको प्राप्त होके, धर्म, जो सत्य तथा न्याय का आचरण करना है; अर्थ. जो धर्म से पदार्थ को प्राप्त करना है, काम,।जो धर्म और अर्थ से इष्ट भोगों का सेवन करना है और मोक्ष, जो सब दुःखों से छूट कर सदा आनन्द में रहना है, इन चार पदार्थों की सिद्धि को शीघ्र प्राप्त हों। पुनः—

अथ नमस्कारमंत्रः

ओं नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शंकराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च॥ १९॥

यजु० अ० १६, मन्त्र ४१॥

(नमः शम्भवाय च) कल्याण के स्रोत तथा (मयोभवाय च) सुख के स्रोत प्रभु

को नमस्कार हो और (नमःशंकराय च) कल्याण, तथा शान्ति करने वाले (मयस्कराय च और सुख के करने वाले को नमस्कार हो, (नमः शिवाय च) कल्याण स्वरूप और (शिवतराय च) अत्यन्त कल्याणस्वरूप के लिए नमस्कार हो। प्रिय प्रभो ! आप को बारम्बार नमस्कार हो॥ १९ ॥

भावार्थ—हे शम्भो ! सुख देने वाले ! कहां तक आप का यश वर्णन करें। आप को हम बारम्बार प्रणाम करते हैं। हे शङ्कर ! आनन्दित करने वाले ! आप को हम नम्रता से नमस्कार करते हैं। हे शिव ! शान्ति देने वाले ! आप को हम बारम्बार नमस्कार करते हैं ॥१९॥

इति सन्ध्या समाप्ता।

ब्रह्म-स्तोत्र

सन्ध्या के पश्चात् जितना समय दे सकें ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना करनी चाहिये । परमेश्वर की स्तुति करने से उस में प्रीति उत्पन्न होती है । उस के गुण, कर्म, स्वभाव से अपने गुण कर्म स्वभाव का सुधार होता है । उस से 'प्रार्थना' करने से निरभिमानता, उत्साह तथा सहायता प्राप्त होती है । उपासना से परब्रह्म से मेल और उस का साक्षात्कार होता है। नीचे कुछ सुन्दर मन्त्र तथा श्लोक दिये जाते हैं, उन्हें गाइये । मन प्रसन्न होगा ।

एको वशी सर्वभूतान्तरात्मा,
एकं रूपं बहुधा यः करोति ।

तमात्मस्थं ये ऽनु पश्यन्ति धीराः ।
तेषाँ सुखँ शाश्वतं नेतरेषाम् ॥१॥
कठ० २ । ५ १० ॥

प्रभु ! तुम एक हो । सारे ब्रह्माण्ड को वश में रखने वाले हो । सब प्राणियों के अन्तःकरण में विराजमान हो । एक प्रकृति से नाना प्रकार के पदार्थ उत्पन्न करते हो । जो धीर, विद्वान्, योगी आप को अपने आत्मा में ठहरा हुआ देखते हैं, उन्हीं को सच्चा सुख प्राप्त होता है, दूसरों को नहीं ॥१॥

नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनानाम्,
एको बहूनां यो विदधाति कामान् ।
तमात्मस्थं ये ऽनु पश्यन्ति धीराः,
तेषां शान्तिः शाश्वती नेतरेषाम् ॥२॥
कठ० २ । ५ । १३ ॥

प्रभो ! आप नित्यस्वरूप हैं, चेतनरूप हैं, आप एक हैं । अपने भक्तों की कामनाओं को पूर्ण करने वाले हैं । आप को जो लोग अपने आत्मा के अन्दर साक्षात् कर देखते हैं, उनको वास्तविक तथा निरन्तर शान्ति प्राप्त होती है ॥२॥

न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं,
नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः ।
तमेव भान्तमनुभाति सर्वम्,
तस्य भासा सर्वमिदं विभाति ॥३॥

हे सर्वशक्तिमान् प्रभो ! आप के प्रकाश के तुल्य न तो इस सूर्य्य का प्रकाश है, न चन्द्रमा का और न ही अग्नि का । आप के प्रकाश से ही यह सब प्रकाश वाले हैं । आप प्रकाश स्वरूप हैं ॥३॥

ब्रह्मैवेदममृतं पुरस्ताद् ब्रह्म,
पश्चाद् ब्रह्म दक्षिणतश्चोत्तरेण ।
अधश्चोर्ध्वं च प्रसृतं ब्रह्म,
एवेदं विश्वमिदं वरिष्ठम् ॥४॥
मुण्डक० २ । ११ ॥

प्रभो ! आप सब से बड़े नित्यस्वरूप हैं, आप सर्वत्र व्यापक हैं । आगे, पीछे, दाएं, बाएं, नीचे, ऊपर सब जगह फैले हुए हैं । सारे संसार में सब से उत्तम आप ही हैं । ॥४॥

इहैव सन्तोऽथ विद्मस्तद् वयम्,
न चेदवेदीर्महती विनष्टिः ।
ये तद्विदुरमृतास्ते भवन्ति,
अथेतरे दुःखमेवापि यन्ति ॥५॥
बृहदा० ४।४।१४॥

प्रभो ! इसी जन्म के अन्दर यदि हम आप को साक्षात् कर लेवें, तो अच्छी बात है, अन्यथा महान् अनर्थ होगा। जो जन आप को जान जाते हैं, वह अमर होते हैं, और दूसरे दुःख के भागी बनते हैं ॥५॥

अपाणिपादो जवनो ग्रहीता,
पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः।
स वेत्ति वेद्यं न च तस्यास्ति वेत्ता,
तमाहुरग्र्यं पुरुषं महान्तम् ॥६॥
श्वेता० ३।१९॥

प्रभो ! आप के न हाथ हैं न पांव हैं, परन्तु सब को ग्रहण करने वाले हैं, और सब से अधिक वेग वाले हैं। आप की आंखें नहीं, परन्तु देखते सब

कुछ हैं । आप के कान नहीं परन्तु सुनते सब कुछ हैं । आप सब को जानते हैं, परन्तु आप का अन्त जानने वाला कोई नहीं । आप ही सब के नेता, महा प्रभु, सर्वशक्तिमान् हैं ॥६॥

अणोरणीयान् महतो महीयान्,
आत्मा गुहायां निहितोऽस्य जन्तोः ।
तमक्रतुं पश्यति वीतशोको,
धातुः प्रसादान्महिमानमीशम् ॥७॥
श्वेता० ३।२०॥

प्रभो ! आप सूक्ष्म से सूक्ष्म हैं । आप महान् से महान् हैं । आप जीवात्मा के भीतर छिपे हुए हैं । दयामय ! आप की दया से ही आप के शुभ दर्शन हो सकते हैं, अन्यथा नहीं ॥७॥

सूक्ष्मातिसूक्ष्मं कलिलस्य मध्ये,
विश्वस्य स्रष्टारमनेकरूपम् ।
विश्वस्यैकं परिवेष्टितारं,
ज्ञात्वा शिवं शान्तिमत्यन्तमेति ॥८॥
श्वेता० ४।१४॥

प्रभो ! संसार में आप–जो अति सूक्ष्म हैं, अनेक रूप संसार के स्रष्टा हैं, सारे ब्रह्माण्ड को घेरे हुए हैं–को जान कर ही हम सच्ची शान्ति को प्राप्त हो सकते हैं ॥ ८ ॥

स एव काले भुवनस्य गोप्ता,
विश्वस्याधिपः सर्वभूतेषु गूढः ।
यस्मिन् युक्ता ब्रह्मर्षयो देवताश्च,
तमेवं ज्ञात्वा मृत्युपाशांश्छिनत्ति॥९॥
श्वेता० ४।१५॥

सर्वपालक प्रभो! आप ही समय पर सब की रक्षा करने वाले हैं। आप ही सब के स्वामी हैं। आप सब प्राणियों के अन्दर गुप्त हैं। आप को ही ऋषि मुनि योगाभ्यासी जान कर मृत्यु के जाल को काट सकते हैं ॥९॥

एष देवो विश्वकर्मा महात्मा,
सदा जनानां हृदये सन्निविष्टः।
हृदा मनीषी मनसा ऽभिक्लृप्तो,
य एतद्विदुरमृतास्ते भवन्ति ॥१०॥
श्वेता० ४।१७॥

दिव्य स्वरूप! आप ही सकल जगत् को बनाने वाले हैं। आप सर्वमहान् हैं, सदा सब के हृदयों में रहने वाले हैं। जो बुद्धिमान् हृदय और मन से आप की

खोज करते हैं वह अमर पद को पा जाते हैं ॥१०॥

न संदृशे तिष्ठति रूपमस्य,
न चक्षुषा पश्यति कश्चनैनम् ।
हृदा हृदिस्थं मनसा य एनं,
एवं विदुरमृतास्ते भवन्ति ॥११॥
श्वेता० ४।२०॥

निराकार प्रभो ! आप का कोई रूप नहीं, आप को इन आंखों से कोई नहीं देख सकता । जो हृदय में आप को मन द्वारा जानते हैं, वही अमर होजाते हैं ॥११॥

न तस्य कार्य्यं करणं च विद्यते,
न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते ।
परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते,
स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च ॥१२
श्वेता० ६ । ८॥

प्रभो ! आप सब काम कर सकते हैं । दूसरे की सहायता की आप को आवश्यकता नहीं पड़ती । आप के तुल्य इस संसार में कोई नहीं, तो आप से अधिक कौन हो सकता है । आप की अद्भुत शक्ति है, नाना प्रकार से वह प्रकट हो रही है । आप में ज्ञान, बल तथा काम करने की शक्ति स्वभाव से है ॥१२॥

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः,
सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा ।
कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः
साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च ॥१३॥

प्रभो ! आप एक हैं, दिव्य स्वरूप हैं, सब में व्यापक हैं, सब को कर्मों का फल देने वाले हैं, सर्वद्रष्टा हैं, केवल सुख-

स्वरूप, चेतनस्वरूप, निर्गुण हैं ॥१३॥

नमस्ते सते ते जगत् कारणाय
नमस्ते चिते सर्वलोकाश्रयाय।
नमो ऽद्वैततत्त्वाय मुक्तिप्रदाय
नमो ब्रह्मणे व्यापिने शाश्वताय ॥१४

सदा रहने वाले, जगत् के कारण ! तुझे नमस्कार हो। सर्वलोक के आश्रय ! चेतनरूप, तुझे प्राणाम हो। सुखस्वरूप मुक्ति के दाता ! तुझे हम नमस्कार करते हैं। हे सर्वव्यापक, पर ब्रह्म ! तुझे हमारा बार २ प्रणाम हो ॥१४॥

त्वमेकं शरण्यं त्वमेकं वरेण्यं,
त्वमेकं जगत्पालकं स्वप्रकाशम्।
त्वमेकं जगत्कर्तृ पातृ प्रहर्तृ,
त्वमेकं परं निश्चलं निर्विकल्पम् ॥१५

प्रभो ! आप ही हमारी रक्षा करने वाले हो, आप ही श्रेष्ठ हो, आप ही जगत् के पालक और स्वप्रकाशक हो। परमात्मन् ! आप ही एक जगत् के कर्ता रक्षक, और संहारकर्त्ता हैं। आप ही एक सब से बड़े, अचल और विकार रहित हैं ॥ १५ ॥

भयानां भयं, भीषणं भीषणानां,
गतिः प्राणिनां, पावनं पावनानाम् ।
महोच्चैः पदानां, नियन्तृत्त्वमेकं,
परेषां परं, रक्षणं रक्षणानाम् ॥१६॥

परमात्मन् ! आप भयों को भय देने वाले हैं। भीषणों को भी डराने वाले हैं। आप ही हमारी गति हैं। पवित्रों के पवित्रकर्त्ता आप हैं। आप महाराजों के

महाराज हैं, परे से परे हैं, रक्षा करने वालों के भी रक्षक हैं ॥ १६ ॥

वयं त्वां स्मरामो वयं त्वां भजामो,
वयन्त्वां जगत्साक्षिरूपं नमामः ।
सदेकं निधानं निरालम्बमीशम्,
भवाम्भोधिपोतं शरण्यं व्रजामः॥१७॥

परमात्मन् ! हम आप का ही स्मरण करते रहें । आप का ही भजन करें । हम आप को ही सब का साक्षी जान कर पूजें । आप एक हैं. आप सब के आधार हैं, और अपने आधार भी स्वयं ही हैं । संसार रूपी समुद्र में रक्षा करने वाले पोत [जहाज़] आप ही हैं । हे प्रभो ! हम आप को ही प्राप्त हों ॥ १७ ॥

न तस्य कश्चित् पतिरस्ति लोके,

न चेशिता नैव च तस्य लिङ्गम्।
स कारणं करणाधिपाधिपो,
न चास्य कश्चित् जनिता न चाधिपः।१८

परमात्मन्! आप का इस लोक में कोई पालक नहीं, न कोई शासक है। नांही आप की मूर्त्ति है। आप कारणों के भी कारण हैं। न कोई आप का उत्पादक है, नाँही कोई आप का स्वामी है॥ १८॥

त्वमेव माता च पिता त्वमेव,
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्राविण त्वमेव,
त्वमेव सर्वं मम देव देव॥१९॥

भगवन्! आप ही हमारे माता पिता हो, आप ही हमारे बन्धु और सखा हो, स्वामिन्! आप ही हमारी विद्या ...

धन हो। हे नाथ! आप ही मेरे सर्वस्व हो और आप ही मेरे पूजनीय उपास्य देव हो। आप के स्थान में किसी अन्य का भूल कर भी मैं कभी पूजन न करूं।१९

तमीश्वराणां परमं महेश्वरं,
तं देवतानां परमं हि दैवतम्।
पतिं पतीनां परमं परस्ताद्,
विदाम देवं भुवनेशमीड्यम्॥ २०॥

प्रभो! आप महेश्वरों के भी महेश्वर हो। देवताओं के भी आप पूजनीय देव हो। आप पतियों के भी अधिपति हो। हे सर्व जगत् के शासक! हम आप की स्तुति तथा उपकारों का गान और चिंतन सदा ही करते रहें॥ २०॥

भजन नं० ९.

हे दयामय हम सबों को
शुद्धताई दीजिए ।
दूर कर के हर बुराई
को भलाई दीजिए ॥ १ ॥
ऐसी कृपा और अनुग्रह
हम पै हो परमात्मन् ।
हों सभासद् इस सभा के
सब के सब धर्मात्मा ॥ २ ॥
हो उजाला सब के मन में
ज्ञान के प्रकाश से ।
और अन्धेरा दूर सारा
हो अविद्या नाश से ॥ ३ ॥
खोटे कर्मों से बचें और,
तेरे गुण गावें सभी ।
छुट जावें दुःख सारे

सुख सदा पावें सभी ॥ ४ ॥
सारी विद्याओं को सीखें,
ज्ञान से भरपूर हों ।
शुभ कर्म में होवें तत्पर,
दुष्ट गुण सब दूर हों ॥ ५ ॥
यज्ञ हवन से हो सुगन्धित,
अपना भारतवर्ष देश ।
वायु जल सुखदाई होवें,
जाएं मिट सारे क्लेश ॥ ६ ॥
वेद के प्रचार में,
होवें सभी पुरुषार्थी ।
होवे आपस में प्रीति,
और बनें परमार्थी ॥ ७ ॥
लोभी और कामी क्रोधी,
कोई भी हम में न हो ।
सारे व्यसनों से बचें,

और छोड़ देवें मोह को ॥ ८ ॥
अच्छी संगति में रहें,
और वेद मार्ग पर चलें ।
तेरे ही होवें उपासक,
और कुकर्मों से बचें ॥ ९ ॥
कीजिए हम सब का हृदय,
शुद्ध अपने ज्ञान से ।
मान भक्तों में बढ़ाओ,
सब का भक्ति दान से ॥ ॥ १०

भजन नं० २

मुझे धर्म वेद से ईश्वर,
सदा इस तरह का प्यार दे ।
कि न मोडूं मुंह कभी इस से मैं,
कोई चाहे सर भी उतार दे ॥
वह कलेजा राम को जो दिया,

वह जिगर जो बुद्ध को अता किया
वह फ़राख दिल दयानन्द का,
घड़ी भर मुझे भी उधार दे ॥ २ ॥
न हो दुश्मनों से मुझे गिला,
करूं मैं बदी की जगह भला।
मेरे लब से निकले सदा दुआ.
कोई चाहे कष्ट हज़ार दे ॥ ३ ॥
नहीं मुझ को ख्वाहिशे मर्तबा,
न हो माल ज़र की हवस मुझे।
मेरी उमर ख़िदमते ख़ल्क़ में,
मेरे ईश्वर ! तू गुज़ार दे ॥ ४ ॥
मुझे प्राणीमात्र के वास्ते,
करो सोजे दिल वह अता पिता।
जलूं उन के ग़म में मैं इस तरह,
न ख़ाक तक भी गुबार दे ॥ ५ ॥
मेरी ऐसी ज़िन्दगी हो बसर,

कि हूं सुर्ख़रू तेरे सामने ।
न कहां मुझे मेरा आत्मा ही,
यह शर्म लै लो निहार दे ॥ ६ ।
न किसी का मर्तबा देख कर,
जले दिल में नारे हसद कभी ।
जहां पर रहूं, रहूं, मस्त मैं,
मुझे ऐसा सबरो करार दे ॥७ ॥
लगे ज़ख्म दिल पर अगर किसी के,
तो मेरे दिल में तड़प उठे ।
मुझे ऐसा दे दिल दरद रस,
मुझे ऐसा सीना फ़गार दे ॥ ८ ॥
है 'प्रेम' की यही कामना,
यही एक उस की है आरज़ू ।
कि वह चन्द रोज़ा हयात को,
तेरी याद ही में गुज़ार दे ॥ ९ ॥

देवयज्ञ

हवन के नाम तथा व्याख्या।

हवन का नाम 'होम' 'अग्निहोत्र' और 'देवयज्ञ' भी है। हवन का अर्थ 'दान' है। जिस कर्म से (अग्नि ज्ञानस्वरूप) परमेश्वर की आज्ञा पालन करने के लिये भौतिक अग्नि में सुगन्ध आदि पदार्थों का दान किया जाता है, वह कर्म 'हवन' आदि कहाते हैं। जिन मन्त्रों से हवन किया जाता है, वह 'हवन-मन्त्र' कहलाते हैं।

प्रातः काल और सायं काल तथा आनन्दोत्सवों पर हवन करना सब मनुष्यों का सदा कर्तव्य है। हवन करने से संसार में बुद्धि, वृद्धि, शूरता, धीरता, बल तथा उत्तम स्वस्थता फैलती है।

अग्निहोत्र का माहात्म्य।

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳ समाः ॥ १ ॥ य० । ४० । २ ॥

मनुष्य को चाहिए, कि कर्तव्य कर्मों को करता हुआ ही सौ वर्ष की पूर्ण आयु जीने की कामना करे ॥१॥

अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृत-मश्नुते ॥२॥ य० ४० । १४ ॥

मनुष्य कर्म द्वारा मृत्यु को पार कर के विद्या द्वारा अमृत को प्राप्त हो जाता है ॥२॥

सायँ सायँ गृहपतिर्नो अग्निः प्रातः प्रातः सौमनस्य दाता ॥३॥
अथ० कां० १९ । अनु० ७ । मं० ३ ॥

सब घरों में सायं तथा प्रातः दोनों

समय परमेश्वर तथा भौतिक अग्नि की प्रतिष्ठा होवे ॥३॥

सायँ प्रातस्तु जुहुयात्सर्वकालमतन्द्रितः ॥४॥ हारीत स्मृति ४।४॥

सदा सायं प्रातः हवन करना चाहिये॥४॥

अग्निहोत्रं जुहुयात् स्वर्गकामः ॥५॥

मै० उ० ६ । २६॥

स्वर्ग की कामना वाला होम किया करे ॥ ५ ॥

स्वाध्याये नित्ययुक्तः स्या-
द्दैवे चैवेह कर्मणि ।
देवकर्मणि युक्तो हि
बिभर्तीदं चराचरम् ॥६॥
अग्नौ प्रास्ताहुतिः सम्य-
गादित्यमुपतिष्ठते ।

आदित्याज्जायते वृष्टि-

वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः ॥७॥

(मनु० ३।७५, ६॥)

मनुष्य को चाहिए कि स्वाध्याय और देवयज्ञ में नित्य लगा रहे। देव यज्ञ में लगा हुआ जड़ और चेतन दोनों प्रकार के जगत् को वह धारण करता है ॥६॥

अग्नि में डाली हुई आहुति अच्छी तरह से सूर्य को प्राप्त होती है। सूर्य से बर्षा होती है, वर्षा से अन्न होता है और फिर प्रजाएं होती हैं ॥७॥

अग्निहोत्रं सायँ प्रातः गृहाणं निष्कृतिः स्विष्टं सुहुतं यज्ञक्रतूनां परायणं स्वर्गस्य लोकस्य ज्योतिः ॥८॥

तैत्तिरीयारण्यक १०।६३।१॥

सायं प्रातः अग्निहोत्र घरों की शुद्धि करने वाला है । श्रद्धापूर्वक सम्पूर्ण किया हुआ यज्ञ यज्ञों और क्रतुओं की पराकाष्ठा है । यह स्वर्ग लोक की ज्योति है ॥८॥

नौर्हि वा एषा स्वर्ग्या । यदग्निहोत्रम् ॥११॥ श० २।३।३।१५॥

जो अग्निहोत्र है, वह निश्चय कर के स्वर्ग को प्राप्त कराने वाली नौका है ॥११॥

अग्निहोत्रं च स्वाध्यायप्रवचने च ॥१२॥ तैत्तिरीयोप० १।९॥

अग्निहोत्र और स्वाध्याय तथा उपदेश भी सब मनुष्यों को करना चाहिये ॥१२॥

अन्नाद् भवन्ति भूतानि,

पर्जन्यादन्नसंभवः ।

यज्ञाद्भवति पर्जन्यो,
यज्ञः कर्मसमुद्भवः ॥१३॥
गीता ३।१४॥

अन्न से समस्त प्राणी उत्पन्न होते हैं, अन्न मेघ से पैदा होता है। मेघ यज्ञ से उत्पन्न होता है, और यज्ञ कर्म से उत्पन्न होता है ॥१३॥

अहन्यहनि ये त्वेता-
नकृत्वा भुञ्जते स्वयम्।
केवलं मलमश्नन्ति
ते नरा न च संशयः ॥१४॥
महाभारत अश्व० १०४।१६॥

प्रतिदिन जो इन अग्निहोत्र आदि महा-यज्ञों को किये बिना स्वयं खाते पीते हैं, वे मनुष्य केवल 'मल' खाते हैं। वस्तुतः इस में संशय नहीं ॥१४॥

ऋत्वनुकूल हवनसामग्री।

वसन्त—१ छलीरा, २ तालीसपत्र, ३ पत्रज, ४ दाख, ५ लज्जावती, ६ शीतल चीनी, ७ कपूर, ८ चीड़, ९ देवदार १० गिलोय, ११ अगर, १२ तगर, १३ केसर, १४ इन्द्रजौ, १५ गुग्गुल, १६ कस्तूरी, १७ तीनों चन्दन, १८ जावित्री, १९ जायफल २० धूप सरसों, २१ पुष्कर मूल, २२ कमलगट्टा, २३ मंजीठ, २४ बनकचूर, २५ दालचीनी, २६ गूलर की छाल, २७ तेजफल, २८ शङ्खपुष्पी, २९ चिरायता, ३० खस, ३१ गोखरू, ३२ खाण्ड, ३३ गोघृत, ३४ ऋतुफल, ३५ भात या मोहनभोग, ३६ जंड समिधा।

ग्रीष्म—मुरा, वायविडिंग, कपूर, चि-

रोंजी, नागरमोथा, पीला चन्दन, छलीरा निर्मल सतावर, खस, गिलोय, धूप, दालचीनी, लवंग, कस्तूरी चन्दन, तगर, भोजपत्र, भात, कुश की जड़, तालीस-पत्र, पद्माख, दारूहलदी, लालचन्दन, मंजीठ, शिलारस, केसर, जटामांसी, नेत्रबाला, इलायची बड़ी, उन्नाव, आमले, मूँग के लड्डू, ऋतुफल, चन्दनचूर।

वर्षा—काला अगर, पीला अगर, जौं, चीढ़, धूप, सरसों, तगर, देवदारु, गुग्गुल, नकछिकनी, राल, जायफल, मुंडी गोला, निर्मल, कस्तूरी, मखाने, तेजपत्र, कपूर, बनकचूर, बेल, जटामांसी, छोटी इला-यची, बच, गिलोय, तुलसी के बीज, वायविडिंग, कमलडन्डी, शहद, चन्दन

श्वेत का चूरा, ऋतुफल, नागकेसर, ब्राह्मी, चिरायता, उड़द के लड्डू, छुहारे, शङ्खाहुली, मोचरस, विष्णुक्रांता, ढाक की समिधा, गोघृत, खाण्ड, भात।

शरद्—चन्दन सफेद, चन्दन लाल चन्दन पीला, गुग्गुल, नागकेसर, इलायची बड़ी, गिलोय, चिरोंजी, बिदारीकन्द, गूलर की छाल, ब्राह्मी, दालचीनी, कपूर, कचरी, मोचरस, पित्तपापड़ा, अगर भारङ्गी, इन्द्रजौ, रेणुका, मुनक्का, अष्टगन्ध, शीतलचीनी, जायफल, पत्रज चिरायता, केसर, कस्तूरी, किशमिश, खाण्ड, जटामांसी, तालमखाना, सहदेवी, ढाक की समिधा, धान की खील, खीर, विष्णुक्रांता, कपूर, गोघृत, ऋतुफल।

हेमन्त—कुट, मुसली, गन्धकोकिला, मुड़वाच्छ, पित्तपापड़ा, कपूर, कपूर-कचरी, नकछिकनी, गिलोय, पटोलपत्र, दालचीनी, भारंगी, सौंफ, मुनक्का, कस्तूरी, चीड़, गुग्गुल, अखरोट, रासना, शहद, पुष्करमूल, केसर, छुहारे गोखरु, कौञ्च के बीज, कांटेदार गिलोय, पर्पटी, बादाम, मुलहटी, काले तिल, जावित्री, लाल-चन्दन, मुश्कबाला, तालीसपत्र, रेणुका, खोपा, बिना नमक की खीचड़ी, आम या खैर की समिधा, गोघृत देवदारु ॥

शिशिर—अखरोट, कचूर, बायविडिंग, राल, मुंडी, मोचरस गिलोय, मुनक्का, रेणुका, काले तिल, कस्तूरी, तेजपत्र, केसर, चन्दन, चिरायता, छुहारे, तुलसी के बीज, गुग्गुल, चिरोंजी, काकड़ा,सिंगी,

खाण्ड, सतावर, दारू, हल्दी, शङ्खपुष्पी, पद्माख, कौञ्च के बीज, जटामांसी, भोज पत्र, गूलर, बड़, समिधा, मोहन भोग (कड़ाह)॥

वसन्त=चैत्र, वैशाख।
ग्रीष्म=ज्येष्ठ, आषाढ़।
वर्षा=श्रावण भाद्रपद।
शरद्=आश्विन, कार्तिक।
हेमन्त=मार्गशीर्ष, पौष।
शिशिर=माघ, फाल्गुन।

हवन के लिये सोना, चाँदी, तांबा या लोहा अथवा मिट्टी का कुण्ड बनवा लेना चाहिए, जिसका परिणाम सोलह अंगुल का लम्बा चौड़ा रहे। जितना लम्बा चौड़ा ऊपर का भाग हो, उसका चौथाई हिस्सा नीचे की तली होनी चाहिये।

एक चमचा जिसकी डण्डी १६ अँगुल और उसके अग्रभाग में अंगूठी की यव रेखा के परिमाण से लम्बा चौड़ा आच-मनी के समान बनवा लेवें। वह भी सोने चांदी वा पलाशादि लकड़ी का हो। एक आज्यस्थाली अर्थात् घृतादि सामग्री रखने का पात्र सोने चाँदी वा पूर्वोक्त लकड़ी का बनवा लेवें। एक जल का पात्र तथा एक चिमटा और पला-शादि की लकड़ी समिधा के लिये रख लेवें। पुनः घृत को गरम कर छान लेवें, और एक सेर घी में एक रत्ती कस्तूरी एक मासा केसर पीस तथा मिला कर उक्त पात्र के तुल्य दूसरे पात्र में रख छोड़ें। अग्निहोत्र भी सन्ध्योपासना के स्थान में बैठ के, पूर्वोक्त सामग्री पास

रख कर, जल के पात्र में जल, और घी के पात्र में एक छटांक वा अधिक जितना सामर्थ्य हो, उतने शोधे हुए घी को निकालकर तथा अग्नि में तपाके सामने चमचे को भी रख लेवें । पुनः उन्हीं पलाशादि की लकड़ियों को वेदीमें रख कर इन तीन मन्त्रों से आचमन करें ।

आचमनमन्त्राः ।

ओं अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ॥१॥

(इससे पहला आचमन करें)

हे भगवन् ! यह सुखप्रद जल प्राणियों का आश्रयभूत है, यह हमारा कथन शुभ हो ॥ १ ॥

ओं अमृतापिधानमसि स्वाहा ॥२॥

(इस से दूसरा)

हे अमर पारब्रह्म ! तू जगत का सर्वथा

धारण करने वाला है ।। २ ॥

ओं सत्यं यशःश्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा ॥३॥

(इससे तीसरा)

हे परमेश्वर ! सत्यकर्म, यश, सम्पत्ति और ऐश्वर्य मुझ में विराजमान हो, यह शुभ वाणी है ॥३॥

अङ्गस्पर्शविधिः ।

आचमन के पश्चात् इन सात मन्त्रों से अङ्ग स्पर्श करें।

ओं वाङ्मऽआस्येऽस्तु ॥१॥

(मुख को स्पर्श करे।)

प्रभो ! मेरे मुख में बोलने की शक्ति रहे ।१

ओं नसोर्मे प्राणोऽस्तु ॥२॥

(दोनों नथनों को स्पर्श करें)

परमेश्वर ! मेरे दोनों नथनों में श्वास शक्ति रहे ॥२॥

ओं अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु ॥३॥
(दोनों आँखों को स्पर्श करें)

परमेश्वर ! मेरी दोनों आंखों में दृष्टि रहे।

ओं कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु ॥४॥
(दोनों कानों को स्पर्श करें)

परमेश्वर ! मेरे दोनों कानों में श्रवण-शक्ति रहे ॥४॥

ओं बाह्वोर्मे बलमस्तु ॥५॥
(दोनों भुजाओं को स्पर्श करें)

परमेश्वर ! मेरी भुजाओं में बल हो।

ओं ऊर्वोर्म ओजःऽस्तु ॥६॥
(दोनों जंघाओं को स्पर्श करें)

परमेश्वर ! मेरी दोनों जंघाओं में सामर्थ्य रहे ॥६॥

ओं अरिष्टानि मेऽङ्गानि तनूस्तन्वा

मे सह सन्तु ॥७॥

(दाहिने हाथ से जल लेकर सारे शरीर पर छिड़कें)

परमेश्वर ! मेरे सब अङ्ग रोग-रहित और मेरा सब शरीर विस्तार के साथ रहे।

———

अथईश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासनामंत्राः

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव । यद्भद्रन्तन्न आसुव ॥१॥

य० अ० ३० मं० ३

अर्थ–हे सकल जगत् के उत्पत्तिकर्त्ता समग्र ऐश्वर्ययुक्त शुद्धस्वरूप, सब सुखों के दाता परमेश्वर ! आप कृपा करके हमारे सम्पूर्ण दुर्गुण, दुर्व्यसन, और दुःखों को दूर कीजिये । जो कल्याण

कारक गुण, कर्म, स्वभाव वाले पदार्थ हैं, वे सब हमको प्राप्त कराइये ॥१॥

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे, भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्। स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम।
यजु० अ० १३। मं० ४।

अर्थ—जो स्वप्रकाशरूप और जिसने प्रकाश करने हारे सूर्य चन्द्रमा आदि पदार्थ उत्पन्न करके धारण किये हैं, जो उत्पन्न हुए सम्पूर्ण जगत् का प्रसिद्ध स्वामी, एक ही चेतन था, जो सब जगत् से पूर्व वर्तमान था जो इस भूमि सूर्यादि को धारण कर रहा है, हम लोग उस सुख स्वरूप, शुद्ध परमात्मा के लिए ग्रहण करने योग्य योगाभ्यास और अति प्रेम से विशेष भक्ति किया करें ॥ २ ॥

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः । यस्यच्छायामृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥३॥

यजु० अ० २५ । मं० १३ ॥

जो आत्मज्ञान का दाता, शरीर, आत्मा समाज के बल का देने हारा, जिसकी सब विद्वान् लोग उपासना करते हैं और जिसके प्रत्यक्ष सत्यस्वरूप शासन और न्याय अर्थात् शिक्षा को मानते हैं जिस का आश्रय ही मोक्षसुखदायक है, जिसका न मानना अर्थात् भक्ति न करना ही मृत्यु आदि दुःख का हेतु है, हम लोग उस सुखस्वरूप सकल ज्ञान के देने हारे परमात्मा की प्राप्ति के लिये आत्मा और अन्तःकरण से भक्ति अर्थात् उसी की

आज्ञा पालन करने में तत्पर रहें।

य: प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव। य ईशेऽस्य द्विपदश्चतुष्पद:, कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ४ ॥

यजु० अ० २३। मं० ३ ॥

अर्थ–जो प्राण वाले और अप्राणी रूप जगत् का अपनी अनन्त महिमा से एकही विराजमान राजा है. जो मनुष्यादि और गौ आदि प्राणियों के शरीर की रचना करता है; हम उस सुखस्वरूप, सकलैश्वर्य के देने हारे परमात्मा के लिये अपनी सकल उत्तम सामग्री से विशेष भक्ति करें ॥ ४ ॥

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा, येन स्व: स्तभितं येन नाक:। यो अन्तरिक्षे रजसो

त्रिमानः, कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥५॥
यजु० अ० ३२ मं० ६ ॥

अर्थ-जिस परमात्मा ने तीक्ष्ण स्वभाव वाले सूर्य आदि और भूमि को धारण किया है, जिस जगदीश्वर ने सुख दुःख रहित मोक्ष को धारण किया है, जो आकाश में सब लोक लोकान्तरों को विशेष मान युक्त अर्थात् जैसे आकाश में पक्षी उड़ते हैं, वैसे सब लोकों का निर्माण कराता और भ्रमण कराता है, हम लोग उस सुखदायक, कामना करने के योग्य परब्रह्म की प्राप्ति के लिए सब सामर्थ्य से विशेष भक्ति करें ॥ ५ ॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो, विश्वा जातानि परिता बभूव । यत्कामास्ते जुहु-

मस्तन्नो अस्तु, वयं स्याम पतयो रयीणाम ॥ ६ ॥

ऋ०मं० १० । सू० १२१ । मं० १० ॥

अर्थ-हे सब प्रजा के स्वामिन्, परमात्मन! आप से भिन्न दूसरा कोई इन सब उत्पन्न हुए जड़ चेतनादिकों का तिरस्कार नहीं करता है। अर्थात् आप सर्वोपरि हैं। जिस २ पदार्थ की कामना वाले हम लोग आप का आश्रय लेवें और वाँछा करें, उस २ की, हमारी कामना सिद्ध होवे, जिस से हम लोग धनैश्वर्यों के स्वामी होवें ॥ ६ ॥

स नो बन्धुर्जनिता स विधाता, धामानि वेद भुवनानि विश्वा। यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त ॥ ७ ॥

यजु० अ० ३२। मं० १० ॥

अर्थ–हे मनुष्यो ! वह परमात्मा हम लोगों को भ्राता के समान सुखदायक, सकल जगत् के उत्पादक, सब कामों को पूर्ण करने हारा, लोक और उन के नाम, स्थान तथा उत्पत्ति आदि को जानता है। और जिस साँसारिक सुख दुःख से रहित नित्यानन्दयुक्त मोक्ष स्वरूप धारण करने हारे परमात्मा में मोक्ष को प्राप्त हो के विद्वान् स्वेच्छापूर्वक विचरते हैं, वही परमात्मा अपना गुरु, आचार्य, राजा और न्यायाधीश है। हम लोग मिल के सदा उस की भक्ति किया करें ॥ ७ ॥

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् । युयोध्यस्मज्जु-

हुराणमेनो, भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम ॥ ८ ॥

य० अ० ४० । मं० १६ ॥

अर्थ–हे स्वप्रकाश ! ज्ञानस्वरूप, सब जगत् के प्रकाश करने हारे ! सकल सुखदाता परमेश्वर ! आप जैसे सम्पूर्ण विद्यायुक्त हैं, कृपा कर के हम लोगों को विज्ञान राज्यादि, ऐश्वर्य्य की प्राप्ति के लिये अच्छे धर्मयुक्त आप्त लोगों के मार्ग से सम्पूर्ण प्रज्ञान और उत्तम कर्म प्राप्त कराइये, और हम से कुटिलतायुक्त पाप रूप कर्म को दूर कीजिये। इस कारण हम लोग आप की बहुत प्रकार की स्तुति सदा किया करें और सर्वदा आनन्द में रहें ॥ ८ ॥

इति ईश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासना मन्त्राः ।

साप्ताहिक अधिवेशनों तथा अन्य शुभ संस्कारों के अवसर पर बड़ा हवन किया जाता है, जिसमें तीन बार आचमन करने के पश्चात् सब से पहिले ईश्वर की स्तुति प्रार्थनोपासना के उपर्युक्त आठ मन्त्र पढ़ कर 'स्वस्तिवाचन" और 'शान्तिप्रकरण" के निम्न मन्त्रों का पाठ करें। उन के अर्थ का विचार मन में करते जावें ॥

अथ स्वस्तिवाचनम् ।

अग्निमीळे पुरोहितं, यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम् ॥ १ ॥

ऋ० मं० १ सू० १ मं० १

पहले से ही जगत् को धारण करने वाले, हवन विद्यादि दान और शिल्प क्रिया के प्रकाशक, प्रत्येक ऋतु में पूज-

नीय जगत् के सुन्दर पदार्थों को देने वाले रमणीय रत्नादिकों के पोषण करने वाले की मैं (उपासक) स्तुति करता हूं ॥ १ ॥

ओं स नः पितेव सूनवे.ऽग्ने सूपायनो भव । सचस्वा नः स्वस्तये ॥ २ ॥

ऋ० मं० १ । सू० १ मं० ९ ॥

हे ज्ञानस्वरूप परमेश्वर ! जैसे पुत्र के लिए पिता ज्ञानदाता होता है, वैसे आप हमारे लिए सुख के हेतु, पदार्थों की प्राप्ति कराने वाले हूजिये ॥ २ ॥

स्वस्ति नो मिमीतामश्विना भगः, स्वस्ति देव्यदितिरनर्वणः । स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः, स्वस्ति द्यावापृथिवी सुचेतुना ॥ ३ ॥ ऋ० ५ । ५१, ११

हे ईश्वर ! अध्यापक और उपदेशक

हमारे लिए कल्याण को करें, ऐश्वर्यरूप आप का वायु सुख का सम्पादन करे, अखंडित प्रकाशवाली विद्युत् विद्या हम लोगों के लिए कल्याण करे। पुष्टिकारक प्राणों को देने वाला मेघादि कल्याण को देवे। अन्तरिक्ष और पृथिवी अच्छे विज्ञान से युक्त हुए हमारे लिए कल्याण-कारी हों ॥ ३ ॥

स्वस्तय वायुमुपब्रवामहै, सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः। बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये, स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः ॥ ४ ॥

ऋ० ५। ५१। १२॥

हे परमेश्वर! शान्ति के लिए, हम वायु-विद्या का उपदेश और ऐश्वर्य देने वाले चन्द्रमा की स्तुति करते हैं, जो चन्द्रमा

औषध्यादि रस का उत्पादक होने से सँसार की रक्षा करने वाला है। कर्मों के रक्षक, सम्पूर्ण समूह वाले, आप का, कल्याण के लिए, आश्रय लेते हैं ॥ ४॥

विश्वे देवा नो अद्या स्वस्तये, वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये। देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये, स्वस्ति नो रुद्रः पात्वंहसः ॥ ५ ॥ ऋ० ५।५१।१३॥

आज यज्ञ के दिन हमारे आनन्द के लिए सब विद्वान् लोग और दिव्य पदार्थ वर्तमान हों, और सर्वत्र बसने वाला अग्नि मङ्गल के लिए हो। हमारे कल्याण के लिए दुष्टों को रुलाने वाले आप पाप-रूप अपराध से हमारी रक्षा करो ॥ २ ॥

स्वस्ति मित्रावरुणा, स्वस्ति पथ्ये

रेवति। स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च, स्वास्ति नो अदित क्राधि ॥ ६ ॥

ऋ० ५ । ५१ । १४ ॥

हे परमेश्वर ! हमारे लिए जल वायु और विद्युत कल्याण करें । शुभ धनादि सम्पन्न मार्ग में हमारे लिए कल्याण हो, और प्राण और उदान वायु हमारे लिये कल्याणकारी हों ॥ ६ ॥

स्वस्ति पन्थामनुचरेम, सूर्याचन्द्रमसा-विव । पुनर्ददताघ्नता, जानता संग-मेमहि ॥७॥ऋ० मं० ५ ।सू०५१। १५ ॥

हे ईश्वर ! कल्याण के मार्ग में आनन्द से हम लोग विचरें, जैसे सूर्य और चन्द्र बिना किसी उपद्रव के विचरण करते हैं । सहायता देने वाले, किसी को दुःख

न देने वाले, ज्ञान सम्पन्न के साथ हम मेल करें ॥ ७ ॥

ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां, मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः । ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ ८ ॥

ऋ० ७ । ३५ । १५ ॥

जो यज्ञ के योग्य विद्वानों में यज्ञोपयोगी हैं, और मनन शील पुरुषों के साथ संगति करने वाले सत्यज्ञानी हैं, वे आप लोग आज योग के दिन बहुत कीर्ति वाले विद्य के उपदेश हमारे लिए देवें, और आप सब कल्याणकारी पदार्थों से सब काल में हमारी रक्षा किया करें ॥ ८ ॥

येभ्यो माता मधुमत्पिन्वते पयः, पीयूषं

द्यौरदितिरद्रिबर्हाः। उक्थशुष्मान् वृष-भरान्त्स्वप्नसस्तां आदित्यां अनुमदा स्वस्तये॥ ९॥ ऋ० १० । ६३ । ३

जिन विद्वानों के लिए, सब को निर्माण करने वाली पृथिवी माधुर्ययुक्त दुग्धादि पदार्थों को देती है, और अखण्डनीय मेघों से बढ़ा हुआ अन्तरिक्ष लोक सुन्दर जलादि को देता है, अत्यंत बल वाले यज्ञ द्वारा वृष्टि का आहरण करने वाले, उन को उपद्रव न होने के लिए प्राप्त कराइये॥ ९॥

नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा, बृहद्देवासो अमृतत्वमानशुः। ज्योतीरथा अहिमाया अनागसो, दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये॥१०॥ऋ०१०।६३।४॥

मनुष्यों के द्रष्टा, आलस्य रहित लोगों के पूजनीय विद्वान लोग हैं, जोकि अमर पद को प्राप्त हो चुके हैं, जो सुन्दर प्रकाश-मय रथों से युक्त हैं, जिन की बुद्धि को कोई दबा नहीं सकता, ऐसे पाप-रहित विद्वान जो कि अन्तरिक्ष लोक के ऊंचे देश को ज्ञानादि द्वारा व्याप्त करते हैं, हमारे कल्याण के लिए हों ॥ १० ॥

सम्राजो ये सुवृधो यज्ञमाययुरपरिह्वृता दधिरे दिवि क्षयम् । तां आ विवास नमसा सुवृक्तिभिर्महो आदित्यां अदितिं स्वस्तये ॥ ११ ॥

ऋ० १० । ६३ । ५ ॥

अपने तेज से अच्छे प्रकार विराजमान ज्ञानादि से वृद्ध, जो विद्वान लोग यज्ञ को

प्राप्त होते हैं और जो किसी से भी अपीडि़त देवता लोग बड़े २ स्थानों में निवास करते हैं, उन गुणों से अधिक भक्तों को हव्यान्न के साथ और अच्छी स्तुतियों के साथ कल्याण के लिए सेवन कराओ ।११।

को वः स्तोमं राधति यं जुजोषथ, विश्वे देवासो मनुषो यतिष्ठन । को वोऽध्वरं तुविजाता अरं करद् यो नःपर्षदत्यंहः स्वस्तये ॥१२॥ ऋ० १०।६३।६

जिस स्तुति समूह का तुम सेवन करते हो, उस सामवेदोक्त स्तुति समूह को तुम लोगों में कौन बनाता है ? और हे अनेक प्रकार के जन्म वाले मननशील विद्वान लोगो ! तुम में कौन यज्ञ को अलंकृत करता है ? जो यज्ञ हमारे पाप को हटा कर कल्याण के लिए हमारा

पालन करता है, उस का विचार करो ।१३।

येभ्यो होत्रां प्रथमामायेजे मनुः समिद्धाग्निर्मनसा सप्तहोतृभिः । त आदित्या अभयं शर्म यच्छत, सुगानः कर्त सुपथा स्वस्तये ॥ १३ ॥ ऋ० १० । ६३ । ७ ॥

जिस के कारण विद्वान लोग बड़े २ यज्ञों द्वारा सम्मान करते हैं, वे भयरहित सुख को देवें, और हमारे कल्याण के अच्छे प्रकार प्राप्तव्य वैदिक मार्गों को करें ॥ १३ ॥

य ईशिरे भुवनस्य प्रचेतसो, विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः । ते नः कृतादकृतादेनसस्परि, अद्या देवासः पिपृता स्वस्तये ॥ १४ ॥ ऋ० १० । ६३ । ८ ॥

जो विद्वान् लोग अच्छे ज्ञान वाले,

सब के जानने वाले, स्थावर और जङ्गम, सब लोक के मालिक बनते हैं वे आज कल्याण के लिए किए और न किए हुए पाप से पार करें ॥ १४ ॥

भरेष्विद्रं सुहवं हवामहें, ऽहोमुचं सुकृतं दैव्यं जनम् । अग्निं मित्रं वरुणं सातये भगं, द्यावापृथिवी मरुतः स्वस्तये ॥ १५ ॥ ऋ १० । ६३ । ९ ॥

पाप के हटाने वाले, शक्तिशाली विद्वान को संग्रामों में अपनी रक्षा के लिए बुलावें, और श्रेष्ठ कर्म वाले आस्तिक पुरुष को बुलावें, और अन्नादि लाभ व अनुपद्रव के लिये अग्नि विद्या, प्राण विद्या, सेवनीय जलविद्या, अन्तरिक्ष तथा पृथिवी की विद्या और वायुविद्या का हम सेवन करें ॥ १५ ॥

सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं, सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम् । दैवीं नावं स्वरित्रामनागसमस्रवन्तीमारुहेमा स्वस्तये ॥ १६ ॥ ऋ० १० । ६३ । १० ॥

अच्छे प्रकार रक्षा करने वाली, लम्बी चौड़ी, उपद्रव रहित, अच्छा सुख देने वाली, जो अच्छे प्रकार बनाई गई, सुन्दर यन्त्रों से युक्त, दृढ़, विद्युत सम्बन्धी नौका के ऊपर, अर्थात् विमान के ऊपर, हम लोग सुख के लिए चढ़ें ॥१६॥

विश्वे यजत्रा अधि वोचतोतये, त्रायध्वं नो दुरेवाया अभिहुतः । सत्यया वो देवहूत्या हुवेम, शृण्वतो देवा अवसे स्वस्तये ॥१७ ॥ ऋ० । १० । ६३ । ११

हे पूजनीय विद्वानो ! हमारी रक्षा के

लिये आप उपदेश किया करें। और पीड़ा देने वाली दुर्गति से हमारी रक्षा करें। हे विद्वान् लोगो ! हम शत्रुओं से रक्षा और सुख के लिए, आप को बुलाया करें ॥ १७ ॥

अपामीवामप विश्वामनाहुतिमपाराः तिं दुर्विदत्रामघायतः । आरे देवा द्वेषो अस्मद्युयोतनोरुणः शर्म यच्छता स्वस्तये ॥ १८ ॥ ऋ० १० ।६३।१२॥

हे विद्वान् लोगो ! रोगादि को पृथक् करो, लोभ बुद्धि को पृथक् करो, पाप की इच्छा करने वाले शत्रु की दुष्टबुद्धि को दूर करो, द्वेष करने वाले सबों को हम से पृथक करो, हमारे लिए बहुत सुख दो ॥ १८ ॥

अरिष्टः स मर्त्तो विश्व एधते, प्र प्रजा

भिर्जायते धर्मणस्परि । यमादित्यासो नयथा सुनीतिभिरति विश्वानि दुरिता स्वस्तये ॥ १९ ॥ ऋ०।१०।६३।१३॥

जिन पुरुषों को अच्छी नीतियों से, पापों को उलंघन कर के सम्मार्ग में प्रवृत्ति करने की इच्छा होती है, वे सब पुरुष किसी से पीड़ित न हो कर बढ़ते हैं, सब धर्मानुष्ठान के बाद पुत्र पौत्रादिकों से अच्छी तरह प्रकट होते हैं ॥ १९ ॥

यं देवासोऽवथ वाजसातौ, यं शूरसाता मरुतो हिते धने। प्रातर्यावाणं रथमिन्द्र सानासिमरिष्यन्तमारुहेमा स्वस्तये।२०।
ऋ० १० । ६३ । १४ ॥

हे विद्वान् लोगो ! अन्न के लाभ के लिए जिस रमणीय, गमनसाधन वाष्प-

यानादि की रक्षा करते हो, और रक्खे हुए धन के कारण संग्राम में, जिस रथ की रक्षा करते हो, बड़े यन्त्रालय के विद्वानों से भी सेवनीय, प्रातः कालसे ही गमन करने वाले उसी रथ पर हम कल्याण के लिए चढ़ें ॥ ॥

स्वस्ति नः पथ्यासु धन्वसु, स्वस्त्यप्सु वृजने स्वर्वति । स्वस्ति नः पुत्रकृथेषु योनिषु स्वस्ति राये मरुतो दधातन ।५१
ऋ० २० । ६३ । १५ ॥

हमारे लिए राज मार्ग में कल्याण हो, जल रहित देश में, जल की उत्पत्तिरूप कल्याण हो, और सब आयुधों से युक्त शत्रुओं को दबानेवाली सेना में कल्याण हो, और हमारे पुत्रों के करने वाले उत्पत्ति स्थान में कल्याण हो, और गवादि धन

के लिये कल्याण हो ॥ २१ ॥

स्वस्ति रिद्धि प्रपथे श्रेष्ठा रेक्ण स्वस्त्यभि या वाममेति । सा नो अमासो अरणे निपातु, स्वावेषा भवतु देवगोपाः ॥ १२ ॥ ऋ० सं १० ६३ १६ ।

जो समुद्र और पृथिवी जानेवालों के अच्छे मार्ग के लिए कल्याण कारिणी ही होती है और जो अति सुन्दर धन वाली है, तथा सेवन के योग्य यज्ञ को प्राप्त होती है, वह समृद्धि हमारे गृह की रक्षा करे; वही बन आदि देशों में हमारी रक्षिका हो और हमारे अच्छे स्थान वाली हो ॥ २२ ॥

इषे त्वोर्ज्जेत्वा वायवस्थ, देवो वः सविता प्रार्पयतु, श्रेष्ठतमायकर्म्मण, आप्या

यध्वमघ्न्या, इन्द्राय भागं । प्रजावती रन
पीवा अयक्ष्मा, मावस्तेन ईशत माघश
ँसो ध्रुवा अस्मिन् गोपतौ स्यात
वह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि ॥ २३ ॥

यजु० अ० १ मं० १ ॥

हे ईश्वर ! अन्नादि इष्ट पदार्थों के लिए तुम को आश्रयण करते हैं। बलादि के लिए तुम को आश्रयण करते हैं। हे वत्स जीवो ! तुम वायु सदृश पराक्रम करने वाले हो। सब जगत् का उत्पादक देव, यज्ञ रूप श्रेष्ठ कर्म के लिए तुम सबोंको सम्बद्ध करे। उस यज्ञ द्वारा अपने ऐश्वर्य के भाग को बढ़ाओ, यज्ञ-सम्पादन के लिए न मारने योग्य बछड़ोंसहित व्याधि विशोषों से रहित, यक्ष्मा-तपेदिक आदि

बड़ रोगों से शून्य तुम लोगों के बीच, जो चौर्यादि दुष्ट गुणों से युक्त हो, वह उन गौओं का मालिक न बने और अन्य पापी भी उनका रक्षक न बने। ऐसा यत्न करो, जिस से बहुत सी चिरकाल पर्यन्त रहने वाली गौएं निर्दिष्ट गोरक्षक के पास बनी रहें और परमात्मा से प्रार्थना करो, कि यज्ञ करने वाले के पशुओं की हे ईश्वर ! तुम रक्षा करो ॥ २३ ॥

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासो अपरीतास उद्भिदः । देवा नो यथा सदमिद्वृधे असन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवेदिवे ॥ २४ ॥

ऋ० ७।८९।१।य० २५।१४॥

हमें शुभ सङ्कल्प प्राप्त हो। सर्वोत्तम

दुःख नाशक विद्वान् लोग सर्वदा वृद्धि के लिए ही हों, तथा उन्हें प्रतिदिन प्रमादशून्य रक्षा करने वाले बनाओ ॥ २४ ॥

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानां ँ रातिरभिनो निवर्त्तताम् । देवाना ँ सख्यमुपसेदिमा वयं देवा न आयुः प्रतिरन्तु जीवसे ॥ २५ ॥

ऋ० १ । ८९ ।२। य० २५ । २५

सरलतया आचरण करने वाली, विद्वान् का कल्याण करने वाली अच्छी बुद्धि हम को प्राप्त हो, और विद्वानों को विद्यादि पदार्थों का दान प्राप्त हो, विद्वानों के मित्रभाव को हम प्राप्त हों । जिससे कि वे देवता लोग हमारी अवस्था को दीर्घकाल पर्यन्त जीने के लिये बढ़ावें ॥ २५ ॥

तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं, धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम् । पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे, रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥ २६ ॥

ऋ० १।८९।५ य० २५।१८ ॥

हम लोग ऐश्वर्य वाले चर और अचर जगत् के पति, बुद्धिसे प्रसन्न करने वाले परमात्मा की अपनी रक्षा के लिए स्तुति करते हैं। जिससे कि वह पुष्टि कर्ता धनों की वृद्धि के लिये हो । सामान्यतया रक्षक और कार्यों का साधक परमात्मा कल्याण के लिए हो ॥ २६ ॥

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः । स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो

अरिष्टनेमिः, स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥५७॥ ऋ० १।८९।६॥य० १५।१५।

परमैश्वर्य्ययुक्त ईश्वर हमारे लिए कल्याण को स्थापन करे और पुष्टि करने वाला सर्वज्ञाता ईश्वर हमारे लिए कल्याण को धारण करे। तीक्ष्ण, तेजस्वी, दुःखहर्ता, ईश्वर हमारा कल्याण करे। बड़े २ पदार्थों का पति हमारे लिये कल्याण को धारण करे ॥ २७॥

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः, भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाँ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥२८॥ ऋ० १।८९।८॥यजु० अ०२५।मं०१॥

विद्वान् लोगो! हम कानों से शुभ ही सुनें, नेत्रों से अच्छी वस्तुओं को देखें। दृढ़

अंगों से आप की स्तुति करने वाले हम लोग शरीरों से अथवा मर्यादा के साथ विद्वानों के लिए कल्याणकारी जो आयु है उस को अच्छे प्रकार प्राप्त हों ॥२८॥

अग्न आयाहि वीतये, गृणानो हव्यदातये । निहोता सत्सि बर्हिषि ॥२९॥

ऋ० साम० आ० प्रपा० १।१॥

हे प्रकाशस्वरूप परमात्मन्! ज्ञान के लिए प्रशँसित हुए आप देवताओं के लिए हव्य देने को प्राप्त हूजिये । सब पदार्थों के ग्रहण करने वाले आप यज्ञादि शुभकर्मों में स्मरणादि द्वारा हमारे हृदयों में स्थित हूजिये ॥२९॥

त्वमग्ने यज्ञानां, होता विश्वेषां हितः । देवेभिर्मानुषे जने ॥३०॥

सा० छन्द आ० प्रपा० मं० १।२॥

हे पूजनीयेश्वर ! तू छोटे बड़े सब यज्ञों का उपदेष्टा है। विद्वान लोगों से विचार-शील पुरुषों में भक्ति की उत्पत्ति के द्वारा तुम स्थित किये जाते हो ॥३०॥

ये त्रिषप्ताः परियन्ति, विश्वा रूपाणि बिभ्रतः। वाचस्पतिर्बला तेषां, तन्वो अद्य दधातु मे ॥३१॥

अथर्व० कां० १। अनु १। सू० १। मं० १

तीन रजस तमस और सत्वगुण तथा सात ग्रह अथवा तीन-सात अर्थात् ५ महा भूत ५ ज्ञानेन्द्रिय, ५ प्रमाण, ५ कर्मेन्द्रिय, १ अन्तः करण जो सब चराचरात्मक वस्तुओं को अभिमत फल देकर पोषण करते हुए यथोचित लोट पोट होते रहते हैं उनके सम्बन्धी मेरे शरीर में बलों को आज वेदात्मक वाणी का पति परमेश्वर धारण करे ॥३॥ इति स्वस्तिवाचनम् ॥

अथ शान्तिप्रकरणम् ।

शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः, शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या । शमिन्द्रा सोमा सुविताय शंयोः, शन्न इन्द्रापूषणा वाजसातौ ॥१॥

ऋ० ७ । ३५ । १ ॥ अ० १९ । १० । १॥

हे ईश्वर! बिजली और अग्नि रक्षा सामग्री के द्वारा हमें सुखकारक हों। बिजली और जल हमें सुखकारी हों, सुखदायक सूर्य और चन्द्रमा उत्तम धन के लिये रोग नाशक और भय निवर्त्तक हों। बिजली और पवन पराक्रम के लाभ में हमें सुखदायक हों ॥१॥

शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु, शं नः पुरन्धिः शमु सन्तु रायः । शं नः

सत्यस्य सुयमस्य शंसः शन्नो अर्य्यमा पुरुजातो अस्तु ॥ २ ॥

ऋ० ७। ३५। २ ॥ अ० १९।१९।२॥

भगवन् ! हमारा ऐश्वर्य शान्तिदायक हो और हमारी प्रशंसा शान्तिदायक हो हमारी बुद्धि शान्तिदायक हो और सब प्रकार के धन शान्तिदायक हों। शासन शान्तिदायक हो। हमारा बहुत प्रसिद्ध श्रेष्ठों का मान करने हारा, न्यायकारी भगवान् शान्तिदायक हो ॥ २ ॥

शं नो धाता शमु धर्त्ता नो अस्तु, शं न उरूची भवतु स्वधाभिः। शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः, शं नो देवानां सुहवानि सन्तु ॥ ३ ॥

ऋ० ७। ३५। ३ ॥ अ० १९। १०। ३॥

धारण करने वाला ईश्वर हमें शान्तिकारक हो। दिशाएं हमें बहुत अन्नों से शान्तिकारक हों । बहुत विस्तार वाले भूमि और सूर्य दोनों शान्तिकारक हों। मेघ अथवा पहाड़ हमें शान्तिकारक हों, विद्वान जनों के सुन्दर बुलावे हमें शान्तिकारक हों ॥ ३ ॥

शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु, शं नो मित्रावरुणावश्विना शम् । शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु, शं न इषिरो अभिवातु वातः ॥४॥

ऋ० ७ । ३५ । ४ ॥ अ० १९ । १० ।३॥

प्रकाश स्वरूप परमेश्वर हमारे लिए शांतिकारक हो, दिन और रात हमारे लिए सुखकारक हों, सूर्य और चन्द्रमा शांति

कारक हों, शुभकर्म हमारे लिए शांतिकारक हों, पवन हमारे चारों ओर चले ।४।

शं नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ, शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु । शं न ओषधीर्वनिनो भवन्तु, शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः ॥५॥

ऋ० ७ । ३५ । ५ ॥ अ० १९ । १० ।५॥

पहले बुलाये अर्थात् कार्य के आरम्भ में सूर्य, भूमि और मध्यलोक शांतिदायक हों। औषधियां अन्नादि और वन के पदार्थ हमें शांतिदायक हों ॥ ५ ॥

शं नो इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु, शमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः । शं नो रुद्रो रुद्रेभिर्जलाषः, शं नस्त्वष्टाग्नाभिरिह शृणोतु॥६॥ऋ०७।३५॥अ०१९।१०।६॥

सूर्य हमें सुखदायक हो, जल सूर्य की किरणों के साथ सुखदायक हो । ज्ञानदाता आचार्य मुनियों के द्वारा हमें सुखदायक हो। परमेश्वर हमारी वाणियों द्वारा यहां पर हमारी प्रार्थना सुने ॥ ६ ॥

शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं नः, शं नो ग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः । शं नः स्वरूणां मितयो भवन्तु, शं नः प्रस्वः शम्वस्तु वेदिः ॥ ७ ॥

ऋ० ७।३५।७ ॥ अ० १९ । १० । ७॥

चन्द्रमा हमें सुखदायक हो, यज्ञ सुखदायक हो, औषधियां हमें सुखदायक हों और वेदि सुखदायक हों ॥ ७ ॥

शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु, शं नश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु । शं नः पर्वता

धुवयो भवन्तु, शं नः सिंधवः शमु सन्त्वापः ॥ ८ ॥

ऋ० ७।३।५८ ॥ अ० १९ । १० । ८ ॥

सूर्य हमें सुखदायक उदय हो, चारों दिशायें हमें सुखदायक हों, पहाड़ हमें सुखदायक हों, समुद्र हमें सुखदायक हों और जल वा प्राण सुखदायक हों ॥८॥

शंनो अदितिर्भवतु व्रतेभिः, शंनो भवन्तु मरुतः स्वर्काः । शंनो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु, शंनो भवित्रं शम्वस्तु वायुः ॥ ९ ॥

ऋ० ७ । ३५ । ९ ॥ अ० १९।१०॥

वेद विद्या व धरती माता हमें सुखदायक हो, विद्वान लोग हमें सुखदायक हों, सूर्य हमें सुखदायक हो और भूमि

सुखदायक हो, अन्तरिक्ष वा जल हमें सुखदायक हों और पवन सुखदायक हो ॥ ९ ॥

शंनो देवः सविता त्रायमाणः, शंनो भवन्तूषसो विभातीः, शंनः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः, शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शम्भुः ॥ १० ॥

ऋ० ७।३५ १० ॥ अ० १९।१०।१०॥

रक्षक परमात्मा हमें सुखदायक हो, जगमगाती हुई प्रभात वेलायें हमें सुखदायक हों, बादल हमें सुखदायक हों, खेत का स्वामी किसान हमें सुखदायक हो ॥ १० ॥

शंनो देवा विश्वदेवा भवन्तु, शं सरस्वती सह धीभिरस्तु। शमभिषाचः

शमु रातिषाचः, शंनो दिव्याः पार्थिवाः शंनो अप्याः ॥ ११ ॥

ऋ० ७।३५।११॥ अ० १९। ११।२॥

विद्वज्जन हमें सुखदायक हों, वेद विद्या सुखदायक हो और दान की वर्षा करने हारे सुखदायक हों। आकाश के पदार्थ और पृथिवी के पदार्थ हमें सुखदायक हों, जल सम्बन्धी पदार्थ हमें सुखदायक हों॥ ११ ॥

शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु, शंनो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः। शंन ऋभवः सुकृतः सुहस्ताः। शंनो भवन्तु पितरो हवेषु ॥ १२ ॥

ऋ० ७।३५।१२॥अ० १९।११।१॥

सत्यवक्ता हमें सुखदायक हों, घोड़े

हमें सुखदायक हों, और गौएं सुखदायक हों। बुद्धिमान् बड़े बड़े काम करने हारे हस्तकार्य में चतुर लोग हमें सुखदायक हों। रक्षा करने हारे यज्ञों में माता पिता आदि हमें सुखदायक हों ॥ १२ ॥

शं नो अज एकपाद् देवो अस्तु, शंनोऽहिर्बुध्न्यः शं समुद्रः । शं नो अपां नपात्पेरुरस्तु, शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपाः ॥१३॥ ऋ० मं० ७। सू० ३५ मं० १३॥ अ० १९। ११। ३॥

जगत् पाद, अजन्मा, व्यापक, भगवान् हमें शान्तिदायक हो। न हारने वाला, सब मूलतत्त्वों का साधक हमें शान्तिदायक हो। सब का सींचने वाला, ईश्वर शांतिदायक हो। प्रजाओं को पार

करने हारा परमात्मा हमें शांतिदायक हो, विद्वानों का रक्षक परमेश्वर हमें शांतिदायक हो ॥ १३ ॥

इन्द्रो विश्वस्य राजति, शं नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ॥१४॥ य० ३६।८॥

परमेश्वर ! आप हमें और हमारे दोपाये मनुष्यादि के लिये सुखकारक हों और चौपाये गौ, आदि पशुओं के लिये सुखकारक हों ॥ १४ ॥

शं नो वातः पवता ँ, शंनस्तपतु सूर्य्यः । शं नः कनिक्रदद्देवः, पर्जन्यो अभिवर्षतु ॥१५॥ य० ३६। १०॥

परमेश्वर ! पवन हम को सुखकारी हो, सूर्य हम को तपावे, सुखकारी उत्तम गुण वाले बादल हमारे लिए सब ओर से वर्षा करें ॥१५॥

अहानि शं भवन्तु नः, शं रात्रीः प्रतिधीयताम् । शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः, शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या, शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ, शमिन्द्रासोमा सुविताय शंयोः ॥१६॥ य० ३६ । ११॥

परमात्मन् ! दिन हमें सुखकारी हों, रातें सुख के लिये हों, बिजली और प्रत्यक्ष अग्नि दोनों रक्षा सामग्री से हमें सुखकारक हों । जल बिजली और पृथिवी अन्नों के लाभ से हमें सुखकारी हों, सुखदायक बिजली और पृथिवी उत्तम धन के लिए रोगनाशक और भय निवर्त्तक हों ॥१६॥

शंनो देवीरभिष्टय, आपो भवन्तु पीतये । शंयोरभिस्रवन्तु नः ॥ १७ ॥ य० ३६ । १२॥

हे जगदीश्वर ! दिव्य गुण से युक्त जल हमारे पूर्ण यज्ञ वा सुख पाने के लिये आनन्द दायक हों । और रोगनाशक और भय निवर्त्तक हो कर हमारे ऊपर सुख की वर्षा करें ॥ १७ ॥

द्यौः शांतिरन्तरिक्ष ँ शांतिः पृथिवी शांतिरापः, शांतिरोषधयः शांतिः । वनस्पतयः, शांतिर्विश्वेदेवाः, शांतिर्ब्रह्म शांतिः, सर्व ँ शांतिः, शांतिरेव शांतिः, सा मा शांतिरेधि ॥ १८ ॥

य० ३६।१७॥ अ० १९। ९। १४ ॥

प्रकाशमान सूर्य आदि लोक सुखदायक हों, मध्य लोक सुखदायक हों, भूलोक सुखदायक हों, और सब अन्य औषधियें सुखदायक हों, सब वृक्ष सुखदायक

हों, सब दिव्य जीव और दिव्य पदार्थ सुखदायक हों। ईश्वर, वेद विद्या वा जितेन्द्रियता सुखदायक हो, यह सब सुखदायक हों, और इन से अतिरिक्त सब ही सुखदायक हों। शांति देवी मुझ को प्राप्त हो॥ १८॥

तच्चक्षुर्देवहितं, पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्।
पश्येम शरदः शतं, जीवेम शरदः शतँ
शृणुयाम शरदः शतं, प्रब्रवाम शरदः
शतमदीनाः स्याम शरदः शत, भूयश्च
शरदः शतात्॥ १९॥ यजु० ३६।२४॥

सब को देखने हारे, विद्वानों के हित कारी, पहले काल से उदय होते हुए बीजरूप परब्रह्म को सौ वर्ष तक हम जीते हुए देखते रहें। सौ वर्ष तक हम सुनते रहें, सौ वर्ष तक बोलते रहें, सौ

वर्ष तक स्वतन्त्रता से रहें, और सौ वर्ष से अधिक तक हम यह सब व्यवहार करते रहें ॥ १९ ॥

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं, तदु सुप्तस्य तथैवेति । दूरंगमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं, तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ २० ॥

यजु० । ३४ । १ ॥

हे परमात्मन् ! जो जागते हुए पुरुष का दिव्य गुण वाला मन दूर ऊंचा चढ़ जाता है, और वही मन सोते हुए का उसी प्रकार चलता रहता है । जो दूर २ ले जाने वाले विषय प्रकाशक इन्द्रियों का एक प्रकाशक है, वह मेरा मन धार्मिक विचार वाला हो ॥ २० ॥

येन कर्माण्यपसो मनीषिणो, यज्ञे

कृण्वन्ति विदथेषु धीराः। यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां, तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ २१ ॥ य०। ३४।२॥

जिस मन द्वारा कर्म के जानने हारे धीर पुरुष यज्ञ अर्थात् धर्म व्यवहार में विद्वानों के बीच कर्मों को करते हैं, और प्राणियों के भीतर अद्भुतीय और पूजनीय हैं, वह मेरा मन शुभ विचारने वाला हो ॥ २१ ॥

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च, यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु। यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते, तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ २२ ॥ य० ३४। ३॥

जो मन बुद्धि का उत्पादक तथा स्मरण शक्ति और धारण शक्ति का आ-

धार है, जो जीती जागती ज्योति प्राणियों के भीतर है जिस के बिना कुछ भी काम नहीं किया जाता है, वह मेरा मन शुभ विचार वाला हो ॥ २२ ॥

येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम् । येन यज्ञस्तायते सप्तहोता, तन्मे मनःशिवसंकल्पमस्तु॥२३॥
य० ३४ । ४ ॥

प्रभो ! जिस जीवन मरण रहित मन के द्वारा तीनों काल का सब वृत्तान्त सर्वथा जाना जाता है। और जिस के द्वारा सात हवन करने वालों से पूरा किया हुआ पूजनीय कर्म फैलाया जाता है, वह मेरा मन शुभ संकल्प वाला हो ॥ २३ ॥

यो मन्त्रृचः साम यजू ऋषि यस्मिन्

प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः । यस्मिँश्चित्त ँ सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥२४॥ य० ३४। ५॥

परमात्मन् ! जिस मन में चारों वेदों का ज्ञान इस प्रकार विद्यमान है जैसे रथ के पहिये आपस में अरे अटे रहते हैं। जिस में प्राणियों का सब विचार बना हुआ है, वह मेरा मन भलाई का ही विचार करने वाला हो ॥ १४ ॥

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव । हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं, तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥२५॥ य० ३४। ६॥

प्रभो ! जो मन मनुष्यों को लगातार लिये फिरता है, जैसे चतुर सारथी

बागडोर से वेग वाले घोड़ों को । जो हृदय में ठहरा हुआ, सब का चलाने वाला बड़ा ही वेग वाला है, वह मेरा मन मंगल विचार युक्त हो ॥२५॥

१ ३ २३ ३ १ २र ३ २६
स नः पवस्व शं गवे, शं जनाय शम-
१ २ ३ १ २
र्वते । शं २ाजन्नोषधीभ्यः ॥२६॥
ऋ० ९ । ११ । ३ । साम० उ० प्रा १ ॥

हे परमेश्वर ! गौओं की रक्षा के लिए, मनुष्यों की रक्षा के लिए, और अन्न और सोम आदि औषधियों की रक्षा के लिए हमें सामर्थ्य दे ॥२६॥

अभयं नः करत्यन्तारिक्षमभयं द्यावा-पृथिवी उभे इमे । अभयं पश्चादभयं

पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु ॥२७।
अ० १९ । १५ । ५ ॥

हे भगवन् ! हमें मध्य लोक अभय करे, यह दोनों सूर्य और भूलोक अभय करें, पश्चिम में अभय हो, उत्तर और दक्षिण में हमारे लिए अभय हो ॥२७॥

अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञाता दभयं परोयः । अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ॥२८॥

अभय प्रभो ! हमें मित्र से अभय और अजानकार से अभय हो, हमारे लिये रात्रि में अभय हो । मेरी सब आशाएँ वा दिशाएँ हितकारी हों ॥२८॥

॥ इति शान्तिप्रकरणम् ॥

अथाग्न्याधानमन्त्रः ।

निम्नलिखित मन्त्र से अग्नि प्रदीप्त करें ।

ओं भूर्भुव स्वः

(गोभिल गृ० प्र० १ खं० १, सूक्त ११ ॥)

फिर अगले मन्त्र को बोलकर उस अग्नि को हवन कुण्ड में रखदें ।

ओं भूर्भवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना पृथिवी-वव्वरिम्णा । तस्यास्ते पृथिवि देवयजानि, पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे ॥ १ ॥

य० ३।५ ॥

परमेश्वर सब का आधार, सबमें व्यापक, सुखस्वरूप है । वह परमेश्वर संसार के लिऐ बृहत्व के कारण आकाश के समान और फैलाव से पृथिवी, के समान है । हे भगवन् ! यह पृथिवी, जो देव-

ताओं का यज्ञस्थान है, उस की पीठपर हव्य खाने हारे भौतिक अग्नि को खाने योग्य अन्न की प्राप्ति के लिये मैं स्थापित करता हूं ॥ १ ॥

(इस मन्त्र से वेदी में अग्नि को खूब प्रज्वलित करें।)

ओं उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि, त्वमिष्टापूर्त्ते सꣳसृजेथामयं च। अस्मिन् सधस्थे अध्युत्तरस्मिन्, विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत ॥२॥ यजु० १५।५४॥

हे विद्वान यजमान! तू उत्तम रीति से चैतन्य को प्राप्त हो और प्रत्यक्ष जागृत हो। हे यजमान! तू और यह यज्ञ, दोनों इष्ट अर्थात् वेदाध्ययन, आतिथ्य आदि और पूत प्याऊ, बगीचा, धर्म-

शाला आदि कर्मों से संसर्ग करो। हे सब विद्वान् जनो! तुम सब इस उत्तम समाज में अधिकार पूर्वक बैठो ॥२॥

समिदाधानम्।

फिर नीचे लिखे मन्त्रों के साथ आठ २ अँगुल लकड़ी की तीन समिधा, घृत में भिगो भिगो कर तीन वार कुण्ड में डालनी चाहियें।

ओं अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेन-ध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्द्धय, चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा। इदमग्नये जातवेदसे इदन्न मम ॥१॥

(इससे एक समिधा)

हे सब पदार्थों में विद्यामान परमेश्वर!

यह मेरा आत्मा तेरे लिए ईंधन रूप है। इस से मुझ में तू प्रकाशित हो और यह अवश्य ही बढ़े। हम को तू बढ़ा, और पुत्र पौत्र, सेवक आदि प्रजा से, गौ आदि पशुओं से, वेद विद्या के तेज से और भोग्य धान्य, घृत, दुग्ध आदि अन्न से, समृद्ध कर। यह सुन्दर आहुति है। यह सम्पूर्ण पदार्थों में विद्यमान ज्ञान स्वरूप परमेश्वर के लिए है। यह मेरे लिये नहीं है ॥१॥

ओं समिधाग्निं दुवस्यत, घृतैर्बोधय-तातिथिम्। आस्मिन् हव्या जुहोतन स्वाहा। इदमग्नये- इदन्न मम ॥२॥

ईंधन से और घृत से व्यापनशील अग्नि को तुम सब पूजो और चेताओ।

इस में हवन सामग्री को यथाविधि चढ़ाओ। यह सुन्दर आहुति है। यह आत्मसमर्पण परमेश्वर के लिये है। यह दान मेरे लिए नहीं है ॥२॥

ओं सुसमिद्धाय शोचिषे, घृतं तीव्र जुहोतन। अग्नये जातवेदसे स्वाहा। इदमग्नये जातवेदसे-इदन्न मम ॥३॥

अच्छे प्रकार प्रदीप्त संशोधक पदर्थों में विद्यमान अग्नि के लिये तपाया हुआ घृत तुम चढ़ाओ। यह सुन्दर आहुति है यह सम्पूर्ण पदार्थों में विद्यमान परमेश्वर के लिए है, मेरे लिए नहीं है ॥३॥

(इन दोनों मन्त्रों से दूसरी समिधा)

ओं तन्त्वा समिद्भिरङ्गिरो, घृतेन वर्द्धयामसि, बृहच्छोचायविष्ठ्य स्वाहा।

इदमग्नयेऽङ्गिरसे—इदं न मम ॥४॥

य० ३।३॥ (तीसरी समिधा)

इस व्यापनशील अग्नि को ईंधनों से और घृत से हम बढ़ाते हैं। यह जो अत्यन्त संयोजक है, यह बहुत प्रज्वलित हो। यह सुन्दर आहुति है। यह परमेश्वर के लिए है, मेरे लिए नहीं ॥४॥

स्रुवा को अंगुष्ठ, मध्यमा और अनामिका से पकड़ घृताहुति देवें। जिन मन्त्रों के साथ (इदं न मम) यह प्रयोग है, उस प्रत्येक आहुति से स्रुवा के बचे घृत को जलपात्र में इकट्ठा करते जायें और यज्ञसमाप्ति पर नीचे के मन्त्र से प्रज्वलित अग्नि में पांच घृताहुति दें।

घृताहुति

ओं अयन्त इध्म आत्मा जातवेद-स्तेनेध्यस्य वर्धस्व चेद्ध वर्द्धय, चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्म र्चसेनान्नाद्यन संम-धय स्वाहा । इदमग्नये जातवेदसे इदन्न मम ॥ १ ॥

इस मंत्र से ५ घृताहुति देनी चाहियें। हे सब पदार्थों में विद्यामान परमेश्वर ! यह मेरा आत्मा तेरे लिए ईन्धनरूप है। इस से मुझ में तू प्रकाशित हो, और अवश्य ही बढ़। और हमको तू बढ़ा और पुत्र पौत्र, सेवक आदि सब प्रजा से, गौ आदि पशुओं से, वेद विद्या के तेज से, और भोग्य धान्य, घृत दुग्ध आदि अन्न से समृद्ध कर। यह सुन्दर

आहुति है। यह परमेश्वर के लिये है, मेरे लिये नहीं है।।१।।

जलप्रसेचनम्

तब दाहिनी अञ्जलि में जल लेके इन मन्त्रों से वेदी के चारों ओर छिड़कें।

ओं अदितेऽनुमन्यस्व।।१।।

(इससे पूर्व दिशा में)

हे अखण्ड परमेश्वर ! आप प्रसन्न होकर हमें अनुकूल मति दीजिये।

ओं अनुमतेऽनुमन्यस्व।।२।।

(इससे पश्चिम में)

हे हितकारी बुद्धिवाले ईश्वर ! आप हमें भी हितकारिणी मति दीजिये।

ओं सरस्वत्यनुमन्यस्व।।३।।

(इससे उत्तर म)

हे सब विद्यओं के भण्डार जगदीश्वर ! आप प्रसन्न होकर हमें प्रसन्नता दीजिये।

ओं देव सवितः प्रसुव यज्ञं, प्रसुव यज्ञपतिं भागाय । दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतं नः, पुनातु वाचस्पति र्वाचं नःस्वदतु ॥ य० अ० ।३०.१।।

(इससे चारों ओर)

हे प्रकाशमय, सब के चलाने हारे परमेश्वर ! इस यज्ञ वा उत्तम कर्म को आगे बढ़ा और यज्ञ के रक्षक यजमान को ऐश्वर्य की सिद्धि के लिए आगे बढ़ा ॥ अद्भुत स्वभाव, विद्याओं का आधार, बुद्धि शुद्ध करने हारे परमेश्वर ! हमारी बुद्धि की शुद्ध करें । विद्या का स्वामी परमात्मा हमारी विद्या को मधुर करे ॥

(आघारावाज्याहुति)

फिर निम्न लिखित मन्त्रों से दो घृताहुति देवें ।

ओं अग्नये स्वाहा । इदमग्नये इदन्न मम ॥१॥ य० ६२ । १७ ॥

(वेदी के उत्तर भाग में)

सर्वेश्वर परमेश्वर के लिए यह आहुति है, मेरे लिए नहीं ॥१॥

ओं सोमाय स्वाहा, इदं सोमाय इदं न मम ॥ य० २२ । २९ ॥

(वेदी के दक्षिण भाग में)

सौम्य स्वभाव परमेश्वर के लिए यह सुन्दर आहुति है, मेरे लिए नहीं ॥२॥

आज्यभागाहुतिः

इनसे मध्य में घृताहुति देवें ।

ओं प्रजापतये स्वाहा । इदं प्रजापतये

इदन्न मम ॥१॥ यजु० २२ । ३२ ॥

प्रजा पालक ईश्वर के लिये यह आहुति है, मेरे लिए नहीं ॥१॥

ओं इन्द्राय स्वाहा । इदमिन्द्राय इदन्न-मम ॥२॥ यजु० २२ । २७ ॥

परम ऐश्वर्य वाले परमात्मा के लिए यह आहुति है, मेरे लिए नहीं है ॥२॥

दैनिक अग्निहोत्र

प्रातःकाल के मन्त्र ।

ओं सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा ॥१॥
,, सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ॥२॥
,, ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ॥३॥ यजु० ३ । ९ ॥

जो चराचर का आत्मा, प्रकाशस्वरूप और सूर्यादि लोकों का प्रकाशक है, उस

की प्रसन्नता के लिए हम लोग होम करते हैं ॥१॥

जो सूर्य, परमेश्वर हम को विद्याओं का देने वाला, और हम से उनका प्रचार कराने वाला है उसी के अनुग्रह से हम होम करते हैं ॥२॥

जो स्वयं प्रकाशमान और जगत् का प्रकाश करने वाला सूर्य अर्थात् परमेश्वर है, उस की प्रसन्नता के लिए हम होम करते हैं ॥३॥

ओं सजूर्देवेन सवित्रा, सजूरुषसेन्द्रवत्या । जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा ॥४॥
य० ३ । १० ॥

जो परमेश्वर सूर्यादि लोकों में व्यापक वायु और दिन के साथ परिपूर्ण, सब से प्रीति करने वाला और सब के अङ्ग २

में व्याप्त है, वह अग्नि परमेश्वर हम को विदित हो। उसके लिये हम होम करते हैं ॥४॥

सायंकाल के मन्त्र।

ओं अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा ॥१॥
ओं अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ॥२॥
ओं अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा ॥३॥

इस तीसरे मन्त्र को मन में ही पढ़ कर आहुति देवें।

अग्नि ज्योति है, जितना प्रकाश है, वह अग्नि की भी जो अग्नि परमेश्वर है, उसी की विभूति है ॥१॥

अग्नि दीप्त है, यह ज्योतिःस्वरूप परमात्मा की ही दीप्ति है ॥ २ ॥ तीसरे मन्त्र का अर्थ पहले के समान समझ लेवें ॥ ३ ॥

ओं सजूर्देवेन सवित्रा, सजूरात्र्येन्द्र वत्या । जुषाणो अग्निर्वेतु स्वाहा ॥४॥
य० ३ । ४ ॥

प्रकाशमान सर्व-प्रेरक प्रभु की सायँ-काल के सूर्य के रूप में वर्त्तमान विभूति के साथ तथा ऐश्वर्य्ययुक्त रात्रि के साथ समान प्रीतियुक्त सेवन की जाती हुई आग जो सामने है, उसमें प्रकाशमान प्रभु प्राप्त हो, और हमारा यह यज्ञ का कर्म सफल हो ॥ ४ ॥

प्रातः सायं दोनों काल के मन्त्र ।

ओं भूरग्नये प्राणाय स्वाहा । इदमग्नये प्राणाय इदं न मम ॥१॥

परमेश्वर सर्वाधार है, आग के उत्तम प्रभाव और भीतर जाने वाले श्वास की स्वस्थता के लिये यह सुन्दर आहुति

है यह प्राण वायु के लिए है, मेरे लिए नहीं ॥ १ ॥

ओं भुवर्वायवेऽपानाय-स्वाहा। इदं वायवेऽपानाय-इदं न मम ॥ २ ॥

परमेश्वर सर्वव्यापी है। पवन के प्रभाव के लिए और बाहर आने वाले प्रश्वास की स्वस्थता के लिए यह सुन्दर आहुति अपान वायु के लिए है, मेरे लिए नहीं है ॥ २ ॥

ओं स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा। इदमादित्याय व्यानाय इदं न मम ॥३॥

पमेश्वर सुखस्वरूप है, सूर्य के उत्तम तेज और सब शरीर में घूमने वाली वायु की स्वस्थता के लिये यह सुन्दर आहुति है। यह सूर्य और व्यान के लिए है, मेरे लिए नहीं ॥ ३ ॥

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः, प्राणापानव्यानेभ्यः स्वाहा। इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः, इदं न मम ॥ ४ ॥

परमेश्वर सर्वाधार, सर्वव्यापी और सुखस्वरूप है। आग, वायु और सूर्य के उत्तम प्रभाव के लिए और प्राण, अपान, व्यान के लिए यह सुन्दर आहुति है। मेरे लिये नहीं है ॥ ४ ॥

ओं आपोज्योतिरसोमृतं, ब्रह्म भूर्भुवः स्वरों स्वाहा ॥ ५ ॥

सर्वरक्षक परमेश्वर, सर्वव्यापी ज्योतिःस्वरूप, जगत् का बीज, अमर, सब से बड़ा, सर्वाधार, सर्वव्यापक और सुखस्वरूप है ॥ ५ ॥

ओं यां मेधां देवगणाः, पितरश्चोपासते । तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा ॥६॥ य० ३२ । १४ ॥

जिस बुद्धि वा धन का विद्वान जन और माननीय रक्षक महात्मा लोग आश्रय लेते हैं, उस बुद्धि वा धन से, हे ज्ञान स्वरूप परमेश्वर ! मुझ को आज बुद्धिमान् वा धनवान करो ॥६॥

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव । यद्भद्रन्तन्न आसुव स्वाहा ॥७॥
य० अ० ३० ॥३॥

अर्थ—हे सकल जगत् के उत्पत्तिकर्ता ऐश्वर्ययुक्त, शुद्धस्वरूप, सब सुखों के दाता परमेश्वर ! आप कृपा करके हमारे सम्पूर्ण दुर्गुण दुर्व्यसन और दुःखों को दूर कीजिए। जो कल्याणकारक गुण,

कर्म, स्वभाव और पदार्थ हैं, वह सब हमको प्राप्त कराइये ॥७॥

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् । युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो, भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम स्वाहा ॥८॥

अर्थ—हे स्वप्रकाश, ज्ञानस्वरूप, सब जगत् के प्रकाश करने हारे, सकल सुख दाता परमेश्वर ! आप जैसे सम्पूर्ण विद्या युक्त हैं, कृपा करके हम लोगों को विज्ञान, राज्यादि, ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए अच्छे धर्मयुक्त आप्त लोगों के मार्ग से सम्पूर्ण प्रज्ञान और कर्म प्राप्त कराइये, और हम से कुटिलता युक्त पाप

रूप कर्म को दूर कीजिए । इस कारण हम लोग आपकी प्रशंसा सदा किया करें और सदा आनन्द से रहें ॥ ८ ॥ इस क्रिया के पश्चात् यदि घी, सामग्री शेष रहे तो निम्न मन्त्रों से आहुति दे सकते हैं ।

ओं भूर्भुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्य भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् । य० अ० ३६ मं० ३ ॥

इस परमेश्वर, सर्वाधार, सर्वव्यापक, और सुख स्वरूप, प्रकाशमय, सब के चलाने हारे जगदीश्वर की, उस प्रसिद्ध उत्तम ज्योति को हम धारण करें, जो परमेश्वर बुद्धियों को वा कर्मों को आगे बढ़ाता है ।

पुनः निम्नलिखित मन्त्र से तीन बार स्रुवा को घृत से भर के आहुति दें।

ओं सर्वं वै पूर्ण ँ स्वाहा ॥

फिर शान्ति पाठ से यज्ञ को समाप्त करें। वह मन्त्र यह है: —

ओं द्यौःशान्तिरन्तरिक्ष ँ शान्तिः, पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः, सर्व ँ शान्तिः, शान्तिरेव शान्तिः, सा मा शान्तिरेधि ॥

हे परमात्मन्! सब लोकलोकान्तरों में सुख की वर्षा हो। संसार के सारे प्राणी आनन्द से रहें। हे भगवन्! आप की कृपा से :—

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चित दुःखभाग्भवेत् ।

सभी लोग सुखी हों । सभी भयरहित हों । सब का कल्याण हो। किसी को भी कभी दुःख तथा सङ्कट न हो । स्वामिन् ! यह हमारा शुभ सङ्कल्प है, इसे आप स्वीकार करो ॥

शेष सामान्य प्रकरण।

१. विशेष (बड़ा) अग्निहोत्र करना हो, तो आज्यभागाहुतियों (ओं इन्द्राय स्वाहा) के पश्चात् निम्न मन्त्रों से होम करें—

२. महाव्याहृति–आहुति–

ओं भूरग्नये स्वाहा। इदमग्नये इदन्न मम ॥१॥

ओं भुवर्वायवे स्वाहा। इद वायवे इदन्न मम ॥२॥

ओं स्वरादित्याय स्वाहा। इदमादित्याय इदन्न मम ॥३॥

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा। इदमाग्निवाय्वादित्येभ्यः इदन्न मम ॥ ४ ॥

अर्थः—सर्वाधार अग्नि केलिये, दुःख नाशक वायु समान व्यापक के लिये, सुखस्वरूप, प्रकाशस्वरूप के लिये, इन सब गुणों से युक्त प्रभु के लिये (उस की प्रीति का पात्र बनने के भाव से) सच्चे हृदय से मैं आहुति देता हूँ । प्रभो ! आप स्वीकार करें ॥१–४॥

३.स्विष्टकृत् आहुति—

ओं यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम्, अग्निष्टत् स्विष्टकृद्विद्यात्सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्धय स्वाहा, इदमग्नये स्विष्टकृते इदन्न मम ॥५॥

अर्थ—मैं जो कुछ इस कर्म के सम्बन्ध में विधि से अधिक कर चुका हूं, या इसमें कम कर बैठा हूँ। यज्ञ को पूर्ण करने वाला भौतिक और आत्मिक अग्नि मेरा वह अच्छे प्रकार यज्ञ किया हुआ अच्छे प्रकार होम हुआ करे।

अग्नि के लिये जो यज्ञ को ठीक बनाने वाला, आहुति को ठीक करने वाला, सारी पाप की प्रतिक रूप आहुतियों का सब कामनाओं का सफल करने वाला है, यह आहुति देरहा हूँ।

हे अग्ने! हमारी सारी कामनाओं को परिपूर्ण करो। यह मेरी वाणी सत्य हो। यह स्विष्टकृत् अग्नि के लिये समर्पण कर चुका हूँ, इस पर मेरा कोई स्वत्व नहीं ॥५॥

४. प्राजापत्याहुति—

ओं प्रजापतये स्वाहा । इदं प्रजापतये इदन्न मम ॥६॥

(यह मन्त्र भी मन में ही पढ़ना चाहिये)

अर्थ:—यह आहुति प्रजापति परमात्मा के लिये है, मेरे लिये नहीं ॥६॥

५. अब प्रधान होम सम्बन्धी चार आहुतियां इन मन्त्रों से देवें—

ओं भूर्भुवः स्वः । अग्न आयूंषि पवस आसुवोर्जमिषं च नः आरे बाधस्व दुच्छुनां स्वाहा ॥ इदमग्नये पवमानाय इदन्न मम ॥१॥

अर्थ--हे सर्वाधार, दुःखनाशक, सुख स्वरूप, प्रकाशस्वरूप भगवन् ! हमारे जीवनों को पवित्र करते तथा बढ़ाते

हो। हमें बल और अन्न प्रदान करो। राक्षसों को दूर भगाओ। मेरी यह वाणी सत्य हो। यह हवि पवित्र करने वाले अग्निस्वरूप प्रभु के लिये है, मेरे लिये नहीं ॥१॥

ओं भूर्भुव स्वः अग्निर्ऋषिः पवमानः पांचजन्यः पुरोहितः ॥ तमीमहे महागयं स्वाहा ॥ इदमग्नये पवमानाय इदन्न मम ॥२॥ ऋ० ९.६६.२०॥

अर्थः—अग्नि सब का देखने वाला, पवित्र करने वाला, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और आर्य वर्ण से बाहिर भी सब प्रजाओं के पालन करने वाला सब धार्मिक कार्यों में प्रमुख हो कर सहायता करने वाला, अत्यन्त बलवान्

है। उसे हम सब धर्म, कर्म की सफलता के लिये प्राप्त होते हैं ॥ २ ॥

ओं भूर्भुवः स्वः। अग्ने: पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम्। दधद्रयिं मयि पोषं स्वाहा। इदमग्नये पवमानाय इदन्न मम ॥३॥ ऋ० ९।६६।२१ ॥

अर्थः—हे सर्वाधार, दुःखापहारक, प्रकाशमान प्रभो! आप अच्छे कर्मों के अधिष्ठाता हैं। आप हम में तेज, पूर्ण बल, ऐश्वर्य, और पुष्टि मुझ में धारण करते हुए पवित्र करें ॥३॥

ओं भूर्भुवः स्वः। प्रजापते न त्वदे-तान्यन्यो, विश्वा जातानि परि ता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु,

वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥ इदं प्रजापतये इदन्न मम ॥४॥

ऋ० १० । १२१ । १० ॥

अर्थ—हे सब प्रजा के स्वामी परमात्मन् ! आप से भिन्न दूसरा कोई और इन सब उत्पन्न हुए जड़, चेतनादिकों को नहीं दबा कर रखता है । जिस २ पदार्थ की कामना वाले हम लोग आप का आश्रय लेवें, वह २ कामना हमारी सिद्ध हो, जिस से हम धन ऐश्वर्यों के स्वामी होवें ॥४॥

५. साधारण हवन में तथा अन्य संस्कारों में विशेष २ अवसर पर निम्न लिखित आठ आज्याहुतियां इन आठ मन्त्रों से दिया करें—

ओं त्वन्नो अग्ने वरुणस्य विद्वान्, देवस्य हेडो अवयासिसीष्ठाः । यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो, विश्वा द्वेषांसि प्रमुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा ॥ इदमग्नीवरुणाभ्याम्-इदन्न मम ॥१॥

ऋ० मं. ४ सू१ मं० ४। पार० का० । क० २ सू८

हे अग्ने ! सुखस्वरूप ! परमात्मन् ! आप कर्मों के फलदाता, वरुण के हमारे ऊपर क्रोध को जानने वाले ! आप उस क्रोध को दूर करने का उपाय करो, और यजन शील तथा यज्ञीय भागों को वहन करने वाले आप अत्यन्त दीप्त होकर हमारे सम्पूर्ण पापों को हम से पृथक् करो ॥ ११॥

ओं स त्वं नो अग्नेऽवमो भवोती

नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ अवयक्ष्व नो वरुणं रराणो, वीहि मृडीकं सुहवो न एधि, स्वाहा ॥ इदमग्नीवरुणाभ्यां इदन्न मम ॥२॥ ऋ० मं०४। सू० १। मं०५

हे अग्ने ! परमात्मन् ! हमारे सदा से रक्षक आप आज के प्रातःकाल की यज्ञादि की सिद्धि के लिए समीपवर्ती हूजिए । हम लोगों के लिए श्रेष्ठ उपदेशकों को दीजिए। और फिर इस प्रकार हमारे सुखदायक यज्ञीय भाग को प्राप्त कीजिए ॥२॥

ओं इमं मे वरुण श्रुधी, हवमद्या च मृडय । त्वामवस्युराचके स्वाहा । इदं वरुणाय–इदन्न मम ॥३॥

ऋ० मं० १ । सू० २५ । मं० १९ ॥

हे वरुण! तुम आज मेरी इस प्रार्थना को सुनो और मुझे सुखी करो। रक्षार्थ मैं तुम्हारी स्तुति करता हूं ॥२॥

ओ३म् तत्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः। अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुशंस, मा न आयुः प्रमोषीः स्वाहा। इदं वरुणाय—इदन्न मम ॥४॥ ऋ० मं० १। सू० १४ मं० ११

हे जगत्प्रभो! हविरादि देकर जिस आयु की, यजमान लोग तुम्हारा सत्कार करते हुए आशा करते हैं, उस ही प्रसिद्ध सौ वर्ष की आयु को मैं भी तुम से मांगता हूं। हे महाराज! उस सौ वर्ष की आयु में से कुछ भी कम मत कीजिए ॥४॥

ओं ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशाः वितता महान्तः । तेभिर्नो अद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा । इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे, विश्वेभ्यो, देवेभ्यो, मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यः-इदन्नमम ॥५॥

हे वरुण! यज्ञ के जो सैंकड़ों और हजारों बड़े २ विघ्न हैं, उनसे आप और विद्वान् लोग हम को दूर रखें ॥५॥

ओं अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यामत्त्व मयासि । अयानो यज्ञं वहास्ययया नो धेहि भेषज ७ स्वाहा । इदमग्नये अयसे—इदन्न मम ॥६॥

हे कल्याण कारक अग्ने! तुम सब

जगह व्यापक और कुत्सित कर्म करने वालों को पवित्र करनेवाले हो। हे अग्ने तुम हमारे यज्ञीय भागों को देवताओं के लिए वहन करते हो, हम को सुख-कारक औषधि दीजिए ॥६॥

ओं उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमम् विमध्यमं श्रथाय। अथा वयमादित्यव्रते तवानागसोऽदितये स्याम स्वाहा ॥ इदं वरुणायाऽऽदित्यायाऽदितये च-इदन्नमम ७

ऋ० मं० । सू० २४ । मं० १३ ॥

हे वरुण ! आप हमारे उत्तम, मध्यम और निकृष्ट बन्धन को ढीला कीजिए। और फिर हम लोग तुम्हारे शासन में पाप कर्मों से अलग रहकर मुक्ति-सुख के लिए यत्न करते रहें ॥७॥

ओ३म् भवतन्नः समनसौ सचेतसावरेपसौ । मा यज्ञꣳ हिꣳसिष्टं मा यज्ञपतिं, जातवेदसौ शिवौ भवतमद्य नः स्वाहा । इदं जातवेदोभ्यां–इदन्न मम ॥८॥

हे परमात्मन् ! समान मन वाले, एक दूसरे के सहायक तथा हमारे अनिष्ट चिन्तन से रहित हूजिए । हमारे यज्ञ तथा यज्ञपति को पीड़ा न पहुंचाइये, और हमारे लिए कल्याणकारक हूजिये ॥८॥

बृहद् हवन में शान्ति पाठ से पहले निम्न लिखित मन्त्रों से भी आहुति दी जा सकती है ॥
(इदमग्नये इदन्न मम) ॥१॥

ओं अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि, तच्छकेयं तन्मे राध्यताम् । इदमहमनृतात्सत्यमुपैमि स्वाहा ।

ओं वायो व्रतपते० स्वाहा
(इदं वायवे इदन्न मम) ॥२॥
ओं सूर्य व्रतपते० स्वाहा
(इदं सूर्याय इदन्न मम) ॥३॥
ओं चन्द्र व्रतपते० स्वाहा
(इदं चन्द्राय इदन्न मम) ॥४॥
ओं व्रतानां व्रतपते० स्वाहा
(इदमिन्द्राय व्रतपतये इदन्न मम) ॥४॥
मं० ब्र० १ । ६ । ९—१३ ॥

पूर्णाहुति मंत्रः ।

ओं पूर्णा दर्विपरापत, सुपूर्णा पुनरापत वस्नवविक्रीणावह, इषमूर्ज ँ शतक्रतो स्वाहा ॥१॥

ओं पूर्णमदः पूर्णमिदं, पूर्णात पूर्णमुदच्यते । पूर्णस्य पूर्णमादाय, पूर्णमेवाव-

शिष्यते स्वाहा ॥२॥ यजु० अ० २।४९

ओं सर्वं वै पूर्ण ँ स्वाहा।

इस मन्त्र को तीन बार पढ़ कर ३ आहुति देना।

शेष घृत छोड़ने का मन्त्र।

ओं वसोः पवित्रमसि शतधारं, वसोः पवित्रमसि, सहस्रधारं देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्षः ॥१॥

वामदेव्यगान-शुभ संस्कारों में सामवेद के निम्न लिखित मन्त्रों से वामदेव्यगान अवश्य करें (संस्कार विधि पृष्ठ ३१-३२

प्रार्थना मन्त्र।

ओं तेजोऽसि तेजो मयि धेहि। वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि। बलमसि बलं मयि धेहि। ओजोऽस्योजो मयि धेहि।

मन्युरसि मन्युं मयि धेहि । सहोऽसि सहो मयि धेहि ॥

यजु० अ० १९ मंत्र ९ ॥

ओं मयि मेधां मयि प्रजां, मय्यग्निस्तेजो दधातु । मयि मेधां मयि प्रजां, मयीन्द्र इन्द्रियं दधातु । मयिमेधां मयि प्रजां, मयि सूर्यो भ्राजो दधातु । यत्ते अग्नेतेजस्तेनाहं तेजस्वी भूयासम् । यत्ते अग्ने वर्चस्तेनाहं वर्चस्वी भूयासम् । यत्ते अग्ने हरस्तेनाहं हरस्वी भूयासम् ॥ तै०आर: अ४१

इन निम्न सात मन्त्रों से हविः शेष हाथ में लगा कर अग्नि में तपाकर मुखादि स्पर्श करना ।

ओं तनूपा अग्नेऽसि,तन्वं मे पाहि ॥१॥
ओं आयुर्दा अग्नेस्यायुर्मे देहि ॥२॥

ओं वर्चोदा अग्नेऽसि वर्चो मे देहि ॥३॥
ओं अग्ने यन्मे तन्वाऽऊनं तन्म आपृण ४
ओं मेधां मे सविता आददातु ॥ ५ ॥
ओं मेधांमे देवी सरस्वती आददातु ॥६
ओं मेधां मे अश्विनौ देवावाधत्तां पुष्करस्रजौ ॥ ७ ॥
ओं शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!

हवन के पश्चात् निम्नलिखित भजन गानें चाहियें ।

भजन नं १

आज मिल सब गीत गाओ उस प्रभु के धन्यवाद । जिसका यश नित गाते हैं गन्धर्व मुनिजन धन्यवाद ॥ मन्दिरों में कन्दरों में पर्वतों के शिखर पर, देते हैं

लगातार सौ २ वार मुनिवर धन्यवाद। करते हैं जंगल में मंगल पक्षिगण हर शाख पर। पाते हैं आनन्द मिल गाते हैं स्वर भर धन्यवाद। कूएं में तालाब में सिंधु की गहरी धार में। प्रेम रस में तृप्त हो करते हैं जलचर धन्यवाद। शादियों में जलसयों में यज्ञ और उत्सव के आद। मीठे स्वर से चाहिये करें नारिनर सब धन्यवाद॥ गान कर 'अमीचन्द' भजनानन्द ईश्वर स्तुति। ध्यान धर सुनते हैं श्रोता कान धर धर धन्यवाद॥

भजन नं० २

टेक—आज घर शान्ति होई॥

तुसी गाओ मंगलाचार आज घरशान्ति हई

स्वस्ति वाचन और शांन्ति पाठ सब,
सुन कर होवे प्रसन्न चित्त अब ।
धन २ हे करतार ॥ आज० ॥ १ ॥
हम सब को प्रभु शरण में लेओ,
सारे ही सुख हम को देओ ।
दुःख के मोचन हार ॥ आज० ॥ २॥
सुख दे हम को यह जग सारा,
दुःख होवे हम सब से न्यारा ।
तीनों ताप प्रभु टार ॥ आज० ॥ ३ ॥
सूर्य चन्द्र और यह तारे,
फूल वनस्पति और यह सारे ।
देवें सुख हर प्रकार ॥ आज० ॥ ४ ॥
अभयम् मित्रात् अभयमऽमित्रात्,
अभयं ज्ञातात् अभयं परोक्षात् ।
होवे अभय संसार ॥ आज० ॥ ५ ॥

द्यौः शांति अंतरिक्षम् शान्तिः,
द्यावा शान्ति पृथिवी शान्ति ।
शान्ति जल फुआर ॥ आज० ॥ ६ ॥
औषधि शान्ति वनस्पति शान्तिः
विश्वे देवा च ब्रह्म शान्तिः ।
शान्ति हो सौ बार ॥ आज० ॥ ७ ॥
पश्येम शरदः शतम् जीवेम शरदः शतम्
शुद्ध होवे व्यवहार ॥ आज० ॥ ८ ॥
शृणुयाम शरदः शतम् ।
होवें न लाचार ॥ आज० ॥ ९ ॥
सारे रल मिल आनन्द गाओ,
आज का दिन यह मुबारक पाओ ।
गल फूलों के हार ॥ आज० ॥ १० ॥

—:o:—

आरति।

जय जगदीश हरे, पिता जय जगदीश हरे। भक्त जनन के सङ्कट क्षण में दूर करे॥ १॥ जो ध्यावे फल पावे दुःख विनशे मन का। सुख सम्पति घर आवे कष्ट मिटे तन का॥ २॥ मातापिता तुम मेरे शरण गहूं किसकी। तुम बिन और न दूजा आस करूं जिस की॥ ३। तुम पूरण परमात्मा तुम अन्तर्यामी। पारब्रह्म परमेश्वर तुम सब के स्वामी॥ ४॥ तुम करुणा के सागर तुम पालनकर्त्ता। दीनदयाल कृपाल कृपा करो भर्त्ता॥५॥ तुम हो एक अगोचर सब के प्राणपति। किस विध मिलूं दयामय तुम को मैं कुमती॥ ६॥ दीन बन्धु दुःखहर्त्ता तुम रक्षक मेरे। अपने हाथ उठाओ द्वार

पड़ा तेरे ॥ ७ ॥ विषय विकार मिटाओ पाप हरो देवा। श्रद्धा भक्ति बढ़ाओ सन्तन की सेवा ॥ ८ ॥

आरती ।

धन्य दीनदयाल तू, प्रभु धन्य तू जग-दीश्वरा । धन्य है करुणा यह तेरी धन्य तू परमेश्वरा ॥१॥ धन्य दाया दीन पर दाता तू ही संसार दा। धन्य करुणा सिन्धु स्वामी, जो किसे न विसारदा ॥२ धन्य महिमा अकथ तेरी, अन्त कोई न पाँवदा। हार के पीछे रह जावे, कथन नूं जो ध्याँवदा ॥३॥ जीव सब संसार दे, गिनती न आखी जाँवदी। अन्न पानी दान करदा, होर सब मन भाँवदी ॥४॥ तेरी महिमा तू ही जाने, होर सब बड़ि-याइयाँ। क्षुद्र जन्तु आखे सोहि, मन

विषय जो आईयाँ ॥ ५ ॥ औखी बाट पहाड़ दी, क्यूं चढ़ सके पिपीलिका। अन्ध चाहे चन्द्र देखाँ, मुश्क हो गज डील का ॥ ६ ॥ भेक बैल न बन सके, पिङ्गल उलाँघे मेरु क्यूं । मूक वक्ता होवे नाहीं, रागी क्यूं कर गुंग हो ॥७॥ होवे कायर खेत माँगे, रचे ग्रन्थ न बावला। कहाँ क्यूं कर गुण मैं तेरे, बुद्धिहीन उतावला ॥८॥ हाथ जोड़ निवाय मस्तक चरण वन्दन करते हैं। धन्य प्रभु महिमा है तेरी, जिस रटे सुख देते हैं ॥९॥ सभी पूत कपूत तेरे, अन्त तैंनू लाज है । नाम धन हरि ! दान कीजे, सोहि हमरे काज है ॥ १० ॥

—:०:—

पितृयज्ञ।

ब्रह्मयज्ञ और देवयज्ञ का वर्णन पहले आचुका है। अब तीसरे 'पितृयज्ञ' का वर्णन किया जाता है।

१. पितृयज्ञ को 'श्राद्ध' और 'तर्पण' भी कहते हैं। श्राद्ध शब्द "श्रत्" धातु (root) से बना है, जो सत्य का वाचक है। जिस कृत्य से सत्य का ग्रहण किया जाय, वह 'श्रद्धा' और श्रद्धा से जो सेवा की जाय, वह "श्राद्ध" कहाता है। जिस कर्म से माता पितादि जीवित पितरों को तृप्त अर्थात् सुखयुक्त किया जाय, वह "तर्पण" है।

सूचना-तर्पण अथवा श्राद्ध विद्यमान

और प्रत्यक्ष पितरों का ही हो सकता है मृतकों का नहीं, क्योंकि मिलाप हुए बिना पूर्वोक्त सेवा नहीं हो सकती, और मिलाप जीतों का ही हो सकता है, मृतकों का नहीं। अतएव यहाँ पितर शब्द से जीवित पितरों का अर्थ ग्रहण किया गया है।

२–पितृ सेवा में यह प्रमाण है:—

ओं उर्ज्जं वहन्तीरमृतं घृतंपयः कीलालम् परिस्रुतम् स्वधास्थ तर्पयत मे पितृन् ॥

य० अ० २। मं० ३४ ॥

अर्थ–हे ईश्वर परमात्मन् ! (उर्ज्जं) बल पराक्रम (हवंतीः) देनेवाले (अमृतं) उत्तम रसयुक्त (घृतं) घी (पयः) दूध

(कीलालं) पकवान (परिस्रुतम्) रस चूते पके फल (मे) मेरे (पितॄन्) पितरों को (स्वधास्थ) प्राप्त करा के (तर्प्पयत) तृप्त करते रहो । जिससे वह सदा प्रसन्न होकर मुझको सत्योपदेश सुनाते रहें ।

३-पितर शब्द से पिता, माता तथा पितामह और मातामह आदि का आचार्य और विद्वानों का, और अवस्था तथा ज्ञानबृद्ध माननीय पुरुषों का ग्रहण होता है ।

४-एक महा पितृयज्ञ भी होता है, जिस में नीचे लिखे आठ प्रकार के पितरों की सेवा की जाती है ।

(१) सोमसद-अर्थात् ब्रह्मविद्या के वेत्ता।

(२) अग्निष्वात्त—अर्थात् कला कौशल विद्या के वेत्ता।

(३) बर्हिषदः— अर्थात खेती बाड़ी की विद्या के वेत्ता ।

(४) सोमपा—अर्थात् बनस्पतियों और औषधियों के गुणों के वेत्ता।

(५) हविर्भुजः—अर्थात् हवन विद्या के वेत्ता।

(६) आज्यपाः—अर्थात् दूध देने और भार उठाने वाले पशुओं का पालन पोषण और रोगनिवृत्ति की विद्या के वेत्ता।

(७) सुकालिका-अर्थात् ब्रह्मविद्या का उपदेश कराने वाला।

(८) यमराज—अर्थात् न्याय व्यवस्था बांधने वाले तथा पक्षपात छोड़कर न्याय करने वाले और आप शुद्धाचरण रखने वाले राज सम्बन्धी अधिकारी पुरुष।

॥ पितृयज्ञ समाप्त ॥

भूतयज्ञः ।

१. 'भूतयज्ञ' का नाम "बलिवैश्वदेव यज्ञ" भी है, अर्थात् विश्वदेव जो परमेश्वर है. उसके निमित्त बलि देने का यज्ञ।

२. इस में छः जीवों अर्थात् :—

(१) कुत्ते (२) पतित (३ भङ्गी आदि चण्डाल (४) कुष्टी आदि रोगी (५) कौवे (६) चिऊंटी आदि कृमि कीट के लिए लवणान्न जैसे दाल, भात, रोटी आदि की छः बलि दी जाती है।

३—बलिवैश्वदेव यज्ञ में यह प्रमाण है

अहरहर्बलिमित्ते हरन्तोऽश्वायेव तिष्ठते घासमग्ने । रायस्पोषेण समिषा मदन्तो, मा ते अग्ने प्रातिवेशा रिषाम, अथ० कां० १९ मनु ७ मं० ७ ॥

अर्थ—हे अग्ने परमेश्वर ! जिस प्रकार शुभ इच्छा से हम लोग घोड़े के आगे खाने योग्य घास धरते हैं, उसी प्रकार शुभ इच्छा से आपकी आज्ञानुसार नित्य प्रति बलिवैश्वदेव कर्म को प्राप्त होते हुए राज्य लक्ष्मी और घी, दूध आदि पुष्टि-कारक पदार्थों से हम आनन्दित रहें। हे परमगुरो ! अग्नि परमेश्वर ! हम लोग आप के विरुद्ध कभी न चलें और न अन्याय से किसी प्राणि को पीड़ित करें. किन्तु सब को अपना मित्र समझ कर उनका हित करते रहें।

४—पूर्वोक्त ६ प्राणियों के लिए निम्न-लिखित ६ मन्त्रों से ६ बलि भूमि पर धरें।

(१) ओ३म् श्वभ्यो नमः। (२) ओ३म् पतितेभ्यो नमः। (३) ओ३म् श्वपचेभ्यो

नमः । (४) ओ३म् पापरोगिभ्यो नमः । (५) ओ३म् वायसेभ्यो नमः । (६) ओ३म् कृमिभ्यो नमः ।

५—भोजन बनने पर घृत और मिष्टान्न मिश्रित भात, यदि भात न बना हो, तो खारी और लवणान्न के सिवाय जो कुछ ग्रास के समान हों, आगे लिखे दस मन्त्रों से अग्नि में डालें, जो वहाँ चूल्हे से निकाल कर अलग रक्खा हो ॥

(१) ओं अग्नये स्वाहा ।

अर्थ— अग्निभगवान् के निमित्त आहुति देते हैं ॥

(२) ओं सोमाय स्वाहा ।

अर्थ- शांतिस्वरूप ईश्वर के निमित्त० ॥

(३) ओं अग्नीषोमाभ्यां स्वाहा ।

अर्थ—अग्नि भगवान् जो जीवन काहेतु और दुःखविनाशक है उसके निमित्त० ॥

(४) ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा ।

अर्थ—विश्वपति और जगत् प्रकाशक ईश्वर के निमित्त आहुति देते हैं ।

(५) ओं धन्वन्तरये स्वाहा ॥

रोगविनाशक परमात्मा के लिये आहुति देते हैं ।

(६) ओं कुह्वै स्वाहा ॥

अमावसी यज्ञपति के निमित्त० ॥

(७) ओं अनुमत्यै स्वाहा ॥

पूर्णमासी यज्ञपति के निमित्त० ॥

(८) ओं प्रजापतये स्वाहा ॥

प्रजापति ईश्वर के निमित्त० ॥

(९) ओं द्यावा पृथिवीभ्यां स्वाहा ॥

सूर्यादि प्रकाशमान और पृथिवी आदि प्रकाश-रहित लोकों के साथ जो ईश्वर सदा वर्त्तमान होकर उनको धारण कर रहा है उसके निमित्त आहुति देते हैं।

(१०) ओं स्विष्टकृते स्वाहा ॥

इष्ट सुख के दाता ईश्वर के निमित्त० ॥

६-तत्पश्चात् निम्नलिखित सोलह मन्त्रों से सोलह दिशाओं आदि के लिये सोलह बलि पत्तल पर अथवा थाली में धरे। यदि बलि धरते समय कोई अतिथि आजाए तो उसी को देदे।

बलि के लिए सोलह मन्त्र ।

(१) ओं सानुगायेन्द्राय नमः ॥

अर्थ—इन्द्र-ईश्वर के अनुयायी ऐश्वर्य्य

युक्त पुरुषों को नमस्कार हो (पूर्व दिशा के लिये)

(२) ओं सानुगाय यमाय नमः ॥

अर्थ–यम ईश्वर के अनुयायी सांसारिक न्यायाधीशों को नमस्कार हो। (दक्षिण दिशा के लिए) ॥

(३) ओं सानुगाय वरुणाय नमः ॥

ईश्वर भक्तों को नमस्कार हो (पश्चिम दिशा के लिए)

(४) ओं सानुगाय सोमाय नमः ॥

पुण्यात्माओं को नमस्कार हो। (उत्तर दिशा के लिये) ॥

(५) ओं मरुद्भ्यो नमः ॥

प्राणपति ईश्वर को नमस्कार हो (द्वार के लिये) ॥

(६) ओं अद्भ्यो नमः ॥

सर्वव्यापक ईश्वर को नमस्कार हो (जल के लिये)॥

(७) ओं वनस्पतिभ्यो नमः ॥

बनस्पतियों के स्वामी ईश्वर को नमस्कार हो (मूसल और ऊखल के लिये)॥

(८) ओं श्रियै नमः ॥

सर्व पूजनीय और ईश्वर ऐश्वर्ययुक्त को नमस्कार हो (ईशान अर्थात् घर की छत के लिए)॥

(९) ओं भद्रकाल्यै नमः ॥

कल्याणकारक ईश्वरीय शक्ति को नमस्कार हो। नैर्ऋत्य अर्थात् दक्षिण और पश्चिम के बीच की दिशा के लिए)॥

(१०) ओं ब्रह्मपतये नमः ॥
वेद के स्वामी ईश्वर को नमस्कार हो ॥
(११) ओं वास्तुपतये नमः ॥
अर्थ—वास्तुपति ईश्वर को नमस्कार हो (इन दोनों मन्त्रों से मध्य के लिए) ॥
(१२) ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः ॥
अर्थ—विश्वपति और प्रकाशस्वरूप ईश्वर को नमस्कार हो ॥
(१३) ओं दिवाचरेभ्यो भूतेभ्यो नमः ॥
अर्थ—दिन में विचरने वाले प्राणियों का सत्कार हो ॥
(१४) ओं नक्तंचारिभ्यो भूतेभ्यो नमः ॥
रात्रि में विचरने वाले प्राणियों का

सत्कार हो (इन तीन मन्त्रों से आकाश के लिये)॥

ओं सर्वात्मभूतये नमः ॥

अर्थ–सर्व व्यापक, ईश्वरी सत्ता को नमस्कार हो (इससे पीछे की ओर) ।

(१६) ओं पितृभ्यः स्वधायिभ्यो नमः

अर्थ–ज्ञानियों और स्वधा–हविदान के अधिकारियों को नमस्कार हो ।

(दक्षिण की ओर के लिये)

अतिथि यज्ञ ।

१–अतिथियज्ञ को ही नृयज्ञ कहते हैं। विद्वान्, परोपकारी, जितेन्द्रिय, सत्यवादी छल कपट रहित, धार्मिक पुरुष देशाटन करता हुआ, अकस्मात् घर में आजाए वह "अतिथि" कहाता है ॥

२–ऐसे अतिथि का आदर सत्कार करके उससे सत्य उपदेश ग्रहण करने को "अतिथि यज्ञ" कहते हैं।

३–इसमें अनेक वैदिक प्रमाण हैं, परन्तु यहाँ सँक्षेप से केवल अथर्ववेद के दो मन्त्र लिखे जाते हैं:—

(१) ओं तद्यस्यैव विद्वान् व्रात्योऽतिथिर्गृहानागच्छेत् । अथर्व० कां० १५ । ११ अ० २ मं० १॥

तत् । यस्य एवं । विद्वान । व्रात्यः । अतिथिः । गृहान् । आगच्छेत् ॥

(२) ओं स्वयमेनमभ्युदेत्य ब्रूयाद् व्रात्य क्वावात्सीर्व्रात्योदकं व्रात्य तर्प्पयन्तु व्रात्य यथा ते प्रियं तथास्तु व्रात्य यथा ते वशस्तथास्तु । व्रात्य यथा ते निकामस्तथास्त्विति ॥ अथर्व० कां १५ वा० ११ अ० २ म० २॥

प०—स्वयं । एनं । अभि । उदेत्य । ब्रूयात् । व्रात्य । क्व । अवात्सीः । व्रात्य । तर्पयंतु । उदकम् । व्रात्य । तथा अस्तु निकामः । तथा । अस्तु ।

अर्थ—पूर्वोक्त दोनों मन्त्रों का अर्थ—जब पूर्वोक्त उत्तम गुणयुक्त विद्वान अकस्मात् घर में आजावे तब गृहस्थी स्वयं उठकर आदर सन्मानपूर्वक उस को

मिले, और उत्तम आसन पर बिठाकर पूछे कि "हे व्रात्य—उत्तम पुरुष! आप का निवास स्थान कहाँ है? हे व्रात्य! जल लीजिए, हाथ मुंह धोइये। हे व्रात्य हम लोग प्रेम भाव से आप को तृप्त करेंगे। हे व्रात्य! जो पदार्थ आप को प्रिय हो वही हम उपस्थित करेंगे। हे व्रात्य! जैसी आपकी इच्छा हो, वही हम पूर्ण करेंगे। हे व्रात्य जैसी आप की कामना हो वैसाही होगा।

ऐसे सत्यगुणी और सत्य कर्मा, अतिथि आजकल दुर्लभ हैं। इनके अभाव में जो विद्वान आर्य्यपुरुष घर में आजायें उनका श्रद्धापूर्वक यथायोग्य आदर सम्मान, पालन पोषण करके उनसे सत्य उपदेश ग्रहण करना चाहिये।

भक्ति भाजन से मिलाप

प्रातः और सायं सन्ध्या व हवन के पश्चात् प्रत्येक नर नारी को अपने भक्ति-भाजन परमेश्वर से मिलाप करना चाहिए । उस समय दिल खोलकर उस महाप्रभु से प्रार्थना करो, जो आपके रोम २ में रम रहा है। जैसे पुत्र पिता से अपने मन की प्रत्येक कामना प्रकट कर देता है, वैसे आप भी उस महा-पिता को साक्षात् करके उससे अपनी प्रत्येक शुभ इच्छा प्रकट करो, और जो कुछ मांगना है, उससे मांगो । वह आप की प्रत्येक शुभ इच्छा पूरी करेगा । सच्ची श्रद्धा और विश्वासयुक्त प्रार्थना से हृदय में शान्ति की धारा और

आत्मा में आनन्द की वृष्टि होगी और थोड़े काल के अभ्यास से ही आपको अनुभव हो जायगा कि आप के जीवन में दिन प्रतिदिन कितना शुभ परिवर्त्तन हो रहा है।

पाठकों की सुगमता के लिए दो चार प्रार्थनाएं नीचे लिखी जाती हैं। इस से अधिक आर्याभिविनय से देख सकते हैं।

ओं स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरꣳ शुद्धमपापविद्धम्। कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः ॥१॥
य० ४०।८॥

न तत्र चक्षुर्गच्छति न वाग्गच्छति नो मनः ॥२॥ केन० १।३॥

यस्यामतं तस्य मतं, मतं यस्य न वेद सः । अविज्ञातं विजानतां, विज्ञातमविजानताम् ॥ केन० २ । ३ ॥

त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ । अथा ते सुम्नमीमहे ॥४॥
ऋ० ७ । ९८ । ११ ॥

भगवन् ! आप हमारे परम पिता हो, हमको सर्वदा सुख देने वाले हो । दुष्टों के अत्याचार से बचाकर आप हमको स्थिर रहने वाला सुख प्रदान कीजिए। हमको उत्तम बुद्धि और पराक्रम प्रदान कीजिए, हम जो कुछ मांगेंगे, आप ही से मांगेंगे, क्योंकि सब सुखों के दाता आप ही हैं। हम को केवल मात्र आप का ही आश्रय है। हे दयामय ! आप ऐसी कृपा करें, कि हम आप को छोड़ कर और

किसी के द्वार पर न जायें, आप का स्वभाव है कि आप अपने शरणागत को नहीं त्यागते, वरन् सदैव रक्षा करते रहते हैं। हमें भी पूर्ण निश्चय है, कि आप हमारी प्रार्थना अवश्य स्वीकार करेंगे।

भगवन्! आप ऐसे कृपालु और दयालु हैं कि जो पुरुष तन मन और धन से आप की भक्ति करता है, आप उस को न केवल इस लोक में निहाल करते हैं, वरन् परलोकमें भी सुखप्रदान कर के उस को प्रसन्न करते हैं। आप अपने भक्त को ब्रह्मचर्य में स्थिर करके उस को ज्ञान विज्ञान आदि धन से पूर्ण करके लोक और परलोक की सिद्धि प्रदान करते हैं।

महाराज! आप ऐसी कृपा करें, कि आप हमारे हृदय से कभी न विसरें, ताकि हम निष्पाप होकर सदा आनन्दित रहें।

भगवन्! जो आप को आत्म-समर्पण करते हैं, वे सदा ही निष्पाप होकर आप के प्रदान किए हुए पूर्ण परमानन्द को चिरकाल तक भोगते हैं।

भगवन्! आप अनन्त कल्याणयुक्त गुणों से परिपूर्ण हो। आप इस सारे जगत् चक्र को चला रहे हो। दूर से दूर और निकट से निकट हो। अज्ञानी जन आप की शरण त्याग कर सारे जगत् में भटकते हैं।

भगवन्! आपकी कृपा से अनेक प्रकार के अन्न और फल, फूल, औषधियां

बनस्पतियाँ, अनेक प्रकार के खट्टे, मीठे, कड़ुवे कसैले रस हमारे लिए कल्याणकारी हों। हम इनको धर्म्म और न्याय से सञ्चित करते हुए आपके यश और कीर्ति का गान करते रहें। जो बल और पराक्रम इन के सेवन करने से हमारे सम्बन्धियों के मन, बाणी और शरीर में उत्पन्न हो, वह पाप के अर्पण न हो, बल्कि आप की आज्ञा पाकर जगत् के उपकार में लगे ताकि हम उत्तम और स्थिर रहने वाले यश और कीर्ति के भागी बनें।

आप की कृपा से हमारी बाणी सब को पवित्र करने वाली, और वेदोक्त कर्मों के प्रकट करने वाली हो। इस प्रयोजन के लिए हम वेदोक्त कर्म करते

हुए आप की स्तुति, प्रार्थना और उपासना करते रहें। क्योंकि उत्तम कर्मों में रुचि दिलाने वाले, और उन का फल देने वाले केवल मात्र आप ही हो।

हे सब के पालक और पोषक! जड़ और चेतन जगत् के रचने वाले विद्या-युक्त! जिस प्रकार आप अपने उत्तम ज्ञान से हमारी बुद्धि को निर्मल बनाते हैं उसी प्रकार हमारे शरीर की भी रक्षा कीजिए, और इस को सदा रोग रहित रखिए। ताकि आप का उत्तम ज्ञान हमारे मन, बाणी और शरीर द्वारा प्रकट होता रहे। आप निष्काम हो, हमें भी निष्काम बनाइए। हम वेदोक्त वैदिक कर्मों को इकठ्ठे मिलकर प्रीतिपूर्वक निष्काम होकर करते रहें। हम में वेद-

पाठी और तेजस्वी ब्राह्मण हों, जो हिंसक दुष्टस्वभाव वाले असुरों से हमारी रक्षा करते रहें। जिस से, कि हम सब प्रकार से निर्भय होकर आप की सेवा में तत्पर हों। हे व्रतपते! हे पूर्ण सर्वत्र व्यापक! सब के अन्तर्या-मिन्! आप सब के अन्तर्यामी, आप सब के मन के गुप्त भावों के जानने वाले हैं। हमारे सङ्कल्प सदा ही पवित्र रहें। हम उत्तम व्रतधारी हो कर यज्ञों की रक्षा करते रहें। हमारे व्रत भङ्ग कभी भी न हों। आप हमें सत्य प्रतिज्ञा पालन की पूर्ण शक्ति और सामर्थ्य प्रदान करते रहें, जिस से हम आपके राज्य में पूर्ण सुख को प्राप्त हों। हम में कोई भी

विरोधी, नास्तिक, डाकू, चोर, विश्वासघाती, विषयी और स्वार्थी न हो। हम पराये हितकारी कर्मों में विघ्नकारी न हों। महाराज! आप अकेले ही अपने सामर्थ्य से जगत् के रचने वाले, पालन, पोषण और रक्षा करने वाले हो। हम आप को छोड़ कर किसी और को जो आप के लिए नियत है, वह मान और अधिकार अर्पण न करें। हे अलख! आप सब से ऊंचे हो। आपकी महिमा अकथ है, आपका कोई वारपार नहीं पा सकता।

महाराज! आप हमको नाना प्रकार की विद्या सीखने का बल प्रदान करें। ताकि हमारी बुद्धि निर्मल हो, और हम अनेक प्रकार के पापों से रहित हों।

आप उच्च हैं, हमको इस लोक में उच्च पद प्रदान करें। हमारी विद्या महति और सामर्थ्य महान् हो। चतुराई और धैर्य भी महान् हो, शरीर और आत्मा महान् हो ताकि हमको किसी दुष्ट देह धारी से भय न रहे। हम सब के शुभ चिंतक बने रहें। हमारा जीवन सदा ही निर्दोष और धर्म्मयुक्त हो। हम हर एक के साथ यथायोग्य वर्त्ताव करते रहें। हे शान्तस्वरूप सर्वरक्षक प्रभो ! आप सब पापों से हमारी रक्षा करें। हम से पूर्ण हित और प्रीति करते रहें। क्योंकि आप का प्रेमी कभी पापी और दुःखी नहीं हो सकता। जिस प्रकार सूर्योदय होने पर स्थूल नेत्रों द्वारा हम आप की रक्षा को देखते हैं उसी प्रकार आप के

प्रदान किए हुए आत्मिक ज्ञान द्वारा समाधिस्थ होकर आत्मा में ही आपका नित्य दर्शन करते रहें ।

आपका दिया हुआ ऐश्वर्य हमारे लिए सुखकारी हो, आप की दी हुई प्रशँसा हमारे लिए सदैव सुखकारी हो । सँसार का धारण करने वाला, आकाश वायु प्राण, धन यह सब आनन्दायक हों । सत्य धर्म, कल्याणकारी नियम, प्रशंसा के योग्य गुण, सब ही शान्तिदायक हों । सूर्य, चन्द्र, वायु, अग्नि, जल, अन्न और बनस्पति सब ही हमारे लिए कल्याणकारी हों । आप का विद्या रूपी हाथ हमारे सिर पर सदा ही रहे । विद्वानों की सङ्गत से हम सुखी रहें और वह कल्याणकारी साधनों द्वारा हमारी रक्षा

करते रहें । हमारी आयु, हमारे प्राण, नेत्र, श्रोत्र, मन और आत्मा ब्रह्म विद्या ज्योति, सुख साधन और समस्त सामग्री सर्व हितकारक कर्मों के लिए अर्पण हों, तब ही आप हमें मोक्ष सुख प्रदान करेंगे।

महाराज ! आप हम पर ऐसी कृपा करें, कि जिस से पुत्र अपने पिता के पास आसानी से पहुँच जावें। हमारा आप के साथ बहुत निकट सम्बन्ध हो और हम आप के चरणों में सदा ही सीस झुकाते रहें।

हे महा बाहो ! किसी को किसी का भरोसा हो, कोई अपने बल, ज्ञान और भुजा शक्ति पर अभिमानी हो, परन्तु

हमको तो केवल आप का ही आश्रय है, हम निर्बलों के आप ही रक्षक और स्वामी हो आप ही हम को ग्रहण कर के परमसुख और परम शान्ति प्रदान करें ।

ओ३म् शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!

(५)

तदेजति तन्नैजति, तद्दूरे तद्वन्तिके।
तदन्तरस्य सर्वस्य, तदु सर्वस्यास्य
बाह्यतः ॥१॥ य० ४० । ४

दिव्योह्यमूर्तः पुरुषः स बाह्याभ्यन्तरो
ह्यजः। अप्राणो ह्यमनाः शुभ्रो ह्यक्षरा-
त्परतः परः ॥२॥ मुण्डक २ । २ ।

इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति, न चेदि-
हा वेदीन् महती विनष्टिः। भूतेषु भूतेषु
विचिन्त्य धीराः प्रेत्यास्माल्लोकादमृता
भवन्ति ॥३॥ केन २ । ५ ॥

भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्व-
संशयाः। क्षीयन्ते चास्य कर्माणि,
तस्मिन् दृष्टे परावरे ॥४॥ मुण्डक २ । ८।

प्रियं मा कृणु देवेषु, प्रियं राजसु मा कृणु । प्रियं सर्वस्य पश्यत, उत शूद्र उतार्ये ॥८॥ अ० १९।६२।१॥

भगवन् ! आप अनन्त कल्याण युक्त गुणों से परिपूर्ण हो । आप इस सारे जगत् के चक्र को चला रहे हो, और स्वयं एक रस सर्वत्र परिपूर्ण हो । दूर से दूर और निकट से निकट हो । आप की शरण त्याग कर जीव सारे जगत् में भटकते हैं, कहीं विश्राम नहीं मिलता । जो आप को भूले हुए हैं, उन से आप अत्यन्त दूर हैं, पर जो आपकी शरण में आन पड़े हैं उन के सदा निकट, हृदय के अन्दर ही विराजमान हो, वे अपने हृदय का द्वार खोल कर आत्मा द्वारा आपके दर्शन करते हैं ।

आप सब के अन्दर और बाहर हो, सब के भीतर और सब से न्यारे हो।

ज्ञान के देने वाले आप हो, बुद्धि को तृप्त करने वाले आप हो। हम अपनी रक्षा के लिए केवल आप को ही बुलाते हैं, हमारा भरोसा आप पर है। आप ने हमारा कभी त्याग नहीं किया, दुःख में पाप में, सब जगह आपकी रक्षा हमारे साथ रही है, हमारे नेत्र नहीं थे जो देखते कि आप दण्ड देकर हम को पाप से बचाना चाहते हैं, दुःख और विपद् भेज कर विषय-विष से बचाना चाहते हैं। अब आपकी शरण में आकर नेत्र खुल गए हैं। नेत्र खोलने से आप का प्यार कितना गहरा प्रतीत होता है।

भगवन्! आप की दया अनादि है, माता के पेट में आप ने हमारा पालन किया, माता की छाती में दूध के साथ प्रेम का सञ्चार किया, हमारे पूर्वजों पर आपकी ही दया थी। आप ने ही उनको बड़ा बनाया, आपने ही उनको सच्चा मार्ग दिखाया आपकी ही दया से उन के जीवन पवित्र और उच्च थे, आप ही की दया से वह पाप से परे और धर्म में वृद्ध थे।

प्रभो! हमारे इन देशवासियों को फिर वही जीवन प्रदान करो। अपनी दुर्बल सन्तानों की ओर प्रेम-दृष्टि से निहारो, आप को भूल कर हम दिन प्रतिदिन गिरते चले जाते हैं, दुःख हमारे ऊपर आता है आप के बिना और किस को पुकारें, दुर्बलों का और कौन बल दाता है?

हम दीन हैं, आप दीन दयालु हो। हम पापी हैं आप पापियों के परित्राता हो, हम गिरे हुए हैं, आप गिरे हुओं के सहारा हो। हमने आपकी आस धरी है हमारे सब कुछ आप ही हो, हमारे पास कोई बल नहीं, लाज से हमारा दुःख हरो। अपना धर्म और अपनी शरण देकर इस देश का संकट काटो। हे पुष्टि कारक! हम को बृद्धि और कल्याण दो, हमारे ऐश्वर्य और ज्ञान की रक्षा करो। हमारे देश को वही पहला जीवन दो, कि हम पाप को पददलित कर के दृढ़ होकर धर्म मार्ग पर चलें। जितेन्द्रिय हो कर आप की शरण में जावें। परस्पर की प्रीति और वृद्धि में आन-

न्दित हों, सारे देश में आप की महिमा का कीर्तन हों ।

ओं सहनाववतु, सह नौ भुनक्तु, सह वीर्य्यं करवावहै । तेजस्विनावधीतमस्तु, मा विद्विषावहै ॥

दया के भण्डार प्रभो ! आप की ही कृपा से मनुष्य परम आनन्द को प्राप्त होता है । आप सब की रक्षा करने हारे हैं । पिता ! आपके बिना रक्षा करने की और किस को सामर्थ्य है । यह आपही का सामर्थ्य है, कि सारे ब्रह्माण्ड का शासन कर रहे हो, तथा राजसिंहासन पर विराजमान हो ।

एक च्यूंटी से लेकर बड़े हाथी तक और यह सब तारागण, ग्रह, उपग्रह, चन्द्र, सूर्य्य, धूम्र केतु जो आकाशमें चक्कर

खारहे हैं, और सब जीव जन्तु पशु और मनुष्य तथा नाना प्रकार के फल फूल और वनस्पति आप के ही उत्पन्न किए हुए हैं। जल और पवन के स्थल सब आप की महती महिमा के ही शब्द गान कर रहे हैं।

जगत्-पितः ! वृक्ष के पत्ते, अपनी २ रेखा से जो उन के मुख हैं, तेरी अनादि शक्ति और तेरे अटल प्रताप की परम महिमा का उपदेश दे रहे हैं। इस लिये हम आप को ही ईश्वर और इष्टदेव कहते हैं, और अपना परम गुरु जानते हैं, जानेंगे, और यह ही उपदेश अपने अन्य भाइयों को देंगे।

क्या चक्षु द्वारा ही आप की लीला देखने में आती है ? नहीं। हे जगत्

पितः ! चक्षुरहित मनुष्य भी अपनी मधुर वाणी से तेरे गुणगान कर रहे हैं। बहरे भी तेरी दयालुता का धन्यवाद कर रहे हैं। गूंगे भी अपने दोनों हाथों को आकाश की ओर फैला कर साक्षी दे रहे हैं, कि आप सब के राजा हो, अन्तर्यामी हो, सब मनुष्य आप के भिक्षुक हैं।

स्वामिन् ! आप के बिना हमारा और कौन है। विपद् काल में आप ही तो आश्रय हो, आपही शान्ति दाता हो। ब्रह्माण्ड के नाना प्रकार के पदार्थ, और असंख्य जीव जन्तु ऐसे हैं, कि उनकी गणना भी नहीं हो सकती, फिर इनमें से एक का भी भेद जानना हमारी

सामर्थ्य से बहार है, चकित रह जाने का विषय है।

जब आप की रचना और आप की लीला ही चकित करने वाली है, तो आप कैसे होंगे ? आप परम ज्ञान स्वरूप हो प्रकाशमान हो, हृदय आप के ही चरणों में शान्त होता है, आप ऐसे दाता हो, कि मांगने से पहले ही दे देते हो। ऋषि, मुनि, राजा, प्रजा, और सकल संसार आप का ही दास है, हमारा आप को नमस्कार हो।

नमस्कार हो, उस अन्तर्यामी, अनाथों के नाथ को, जो क्लेशों को दूर करता है, और अपनी परमशक्ति से भोजन देता है। वन्दना और प्रणाम हो उस

नित्य शुद्धिदाता को, जिसकी दया से परम आनन्द प्राप्त होता है। बन्दना हो रोग विनाशक स्वामी, और सर्वान्तर्यामी महान् पिता को, जिस का राज्य अटल है, जिस की शक्ति अटल है, जिसका सामर्थ्य अटल है।

नमस्कर हो, जगदीश्वर परम गुरु, रोगविनाशक को जिस की रचना अगम है। जो विश्वनाथ है, सर्व जीवों का तात है।

परमात्मन्! हमारी वन्दना को स्वीकार कीजिये।

त्रिलोकी के नाथ! हम आप के पांव पड़ कर वरदान मांगते हैं, कि आप कृपा करके हमें शुद्ध मति दीजिये, सुबुद्धि अर्पण कीजिये, और मन में दृढ़ता दीजिय, कि जो दुःख जो कष्ट हमको पहुंचें

उनसे व्याकुल होकर हम शुद्ध और पवित्र मार्ग को न भूल जाँय ! चाहे जगत् हमारी दुर्दशा भी करे, चाहे हमारा मान भी घटे, परन्तु हमारी सदा यही अभिलाषा रहे, कि हम आप की आज्ञा को पालें, सन्मार्ग के यात्री हों, सत्य ही सुनें, सत्य ही कहें और सत्य ही बरतें, तब ही हम आप की कृपा सम्पादन करने के योग्य होंगे।

हे रोगविनाशक स्वामिन् ! सदैव हमारी श्रद्धा आपकी भक्ति में रहे, हम वैर को त्यागें, हमारी विद्या बढ़े, हमारा पढ़ा पढ़ाया सफल हो, और हम आप के दास बने रहे । प्रभु ! हमारी प्रार्थना को श्रवण कीजिये ॥

ओं शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!

(३)

सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् । स भूमिं विश्वतो वृत्वात्यतिष्ठद्दशांगुलम् ॥ १ ॥ श्वेता० ३।१४॥

यतो वाचो निवर्तन्ते । अप्राप्य मनसा सह ॥ आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान् ॥ न बिभेति कदाचन ॥ १ ॥॥ तैत्ति० १।४।२॥

अनाद्यनन्तं कलिलस्य मध्ये,
विश्वस्य स्रष्टारमनेकरूपम् ।
विश्वस्यैकं परिवेष्टितारं,
ज्ञात्वा देवं मुच्यते सर्वपाशैः ॥
॥३॥ श्वेता० ५।१३

यतो यतःसमीहसे, ततो नो अभयं कुरु ।

शन्नः कुरू प्रजाभ्योऽभयंनः पशुभ्यः॥
॥४॥य० ३६।२२॥

सख्ये त इंद्र वाजिनो मा भेम शवसस्पते
त्वामभिप्रणोनुमो जेतारमपराजितम्
॥५॥साम०

भगवन् ! आप निर्भय और निर्दोष हैं। आप सर्व शक्तिमान् हैं। सर्व कलाओं के स्वामी हैं। आप सत्य स्वरूप और सदा एक रस रहने वाले हैं। सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, बिजली, वायु, अग्नि जल और पृथिवी सभी आप की महिमा का गान कर रहे हैं। सब ही आपका सन्देश सुना रहे हैं, सब ही हाथ जोड़े आपकी स्तुति, कर रहे हैं। यह जीव, जन्तु, पक्षी, कीट, पतङ्ग सभी आपकी दया के

प्रशंसक है। सभी आप की पूजा में मग्न हैं। सबह आपके द्वार के भिक्षुक हैं। यह अनेक प्रकार के फल, फूल कन्दमूल अन्न, औषधियाँ सब ही मुक्त कण्ठ से आप के हित और दया को प्रकट कर रहे हैं। भगवन्! आप ही सब के इष्टदेव हो। आप ही पूजा के योग्य हो। पृथिवी से ले कर सूर्य पर्यन्त सब अद्भुत रचना आप ही के गुप्त हाथों से रची गई है।

आप इस जगत् को अपने स्वभाव और सामर्थ्य से अकेले ही रचते हैं, अकेले ही सब को नियम में बाँध रहे हैं, अकेले ही सब का पालन पोषण कर रहे हैं, अकेले ही सब के कामों में साक्षी हैं, अकेले ही सब के कामों का फल देते हैं,

और अकेले ही महा प्रलय करते हैं। भगवन्! जैसे आप महान् और विचित्र हैं, वैसे ही आप के काम महान् तथा विचित्र हैं। हे देवों के देव, महादेव! आप धर्म, न्याय और प्रेम के केन्द्र हैं, और यह रचना भी धर्म, न्याय और प्रेम को प्रकट कर रही है। यह सब कुछ आप के स्वभाव से हो रहा है। आप का ज्ञान पूर्ण और सदा एक रस रहने वाला है। आप की बुद्धि, आप की दया और आप के कार्य्य महान् हैं। कौन आप तक पहुँच सकता है? कौन आप का वारापार पा सकता है? भक्त जन यह शब्द करते हुए इस मृत्युलोक से गुजरे "सोचयाँ सोच न होवे, जे सोचें लखवार"

जब भक्त लोग ऐसा कहते हुए नाशवान् शरीर को त्याग गये तो हम जैसे निर्बल निर्बुद्धि, निस्तेज और महापापी की आप के द्वार तक कहाँ पहुंच है ?

आप का द्वार बहुत ही ऊंचा है। चाहे हम वहाँ तक पहुंचें या न पहुंचें, परन्तु हमें बल बुद्धि और तेज अवश्य प्रदान करें, जिस से कि हम आप के सच्चे सेवक बनें। हमें भी अपनी पूजा का अधिकार प्रदान करें, ताकि हमारा आत्मा भी शान्ति से इस नाशवान देह का त्याग करे। आप के ऊंचे मन्दिर तक पहुंचने के लिए इन्हीं साधनों की आवश्यकता है, और जब ये साधन आप के भक्तों में इकट्ठे होते हैं, तब आप अपने भक्तों का क्या कुछ नहीं बना देते?

महाराज ! आप का क्रोध हमारी मृत्यु और आप की प्रसन्नता हमारा जीवन है। हम भूल कर भी मन वाणी और कर्म से आप को अप्रसन्न न करें। सरलता, इन्द्रियदमन, विजय और समर्पण यह हमें बहुत बड़ी संख्या में प्रदान कीजिये, ताकि हम आप को सदा प्रसन्न करते रहें। भगवन् ! आप प्रतिदिन हमारी रक्षा करते रहें। हमें हर प्रकार के सुख भोग से भरपूर करते रहें। हम आप को भूल जाते हैं परन्तु आप हमारा कभी त्याग नहीं करते। दिन भर हमारे संग रहते हैं और रात्री के समय जब हम थक कर सो जाते हैं तो आप हमें हर प्रकार के रोगों से बचाते हैं। आप हमारे खोटे कर्मों का तत्काल ही दण्ड नहीं देते,

बल्कि अपनी अपार दयालुता से बार २ चेतावनी देते हैं । आप इस आत्मा के अन्दर विराजमान होकर पाप से बचे रहने का सत्य उपदेश प्रदान करते रहते हैं ।

महाराज ! हम पर कृपा करो, कि हम आत्मा की आवाज़ को ध्यान से सुनें, ताकि यह जीवन सदा ही निष्पाप रहे । आप की सौम्यमूर्ति का ही प्रकाश होता रहे । और हम आपके उपकार का सदा ही धन्यवाद करते रहें । महाराज ! आप के सेवक यह मांगते हैं, कि आज से यह मन बाणी, शरीर और आत्मा सब ही आप की पूजा में लगे रहें । हमारा समय, हमारी स्मरणशक्ति, हमारे कर्म, सब ही

उज्वल और स्वच्छ हों, और यह सब मिलकर हमारी आत्मा का कल्याण करने वाले हों। महाराज! आज से हम अपना अधिकार हटाकर इन सबों को आप के ही चरणों में समर्पण करते हैं। आप ही इन से यथायोग्य काम लें। आप ही हमारे परम गुरु, परम सहायक और परम रक्षक हैं। आप के द्वार को छोड़ कर अब कहाँ जाएं? आप ही हमारे रक्षक हैं। आप की रक्षा में आये हुए को दुःख और भय कहाँ हो सकता है? आपके चरणों में समर्पण किए हुए मन, बाणी और शरीरादि की विभूति को कौन चुरा सकता है? आप का क्रोध वहाँ ही होता है, जहाँ आप का अधिकार नहीं

माना जाता। बस ! आज से हम अपने आपको आपके पवित्र चरणों में समर्पण करके विनयपूर्वक प्रार्थना करते हैं कि आप हमें स्वीकार करें।

ओ३म् शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!



(४)

स विश्वकृद् विश्वविदात्मयोनिः,
ज्ञः कालकालो गुणी सर्वविद् यः।
प्रधानक्षेत्रज्ञपतिर्गुणेशः,
संसारमोक्षस्थितिबन्धहेतुः ॥१॥
श्वेता० ६।१६॥

बृहच्च तद्दिव्यमचिन्त्यरूपं,
सूक्ष्माच्च तत्सूक्ष्मतरं विभाति।
दूरात्सुदूरे तदिहान्तिके च,
पश्यत्स्विहैव निहितं गुहायाम् ॥
मुण्डक ३१

सर्वतः पाणिपादं तत्,
सर्वतोऽक्षिशिरो मुखम्।
सर्वतः श्रुतिमल्लोके,
सर्वमावृत्य तिष्ठति ॥३॥
श्वेताश्वेतर०

यो भूतञ्च भव्यञ्च, सर्वंयश्चाधितिष्ठति।
स्वर्य्यस्य च केवलं, तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ॥८॥

हे सर्वाधार परमात्मन् ! जो कुछ भूत भविष्यत् और वर्तमान में है, उस सब के अधिष्ठाता आप हो। वायु आप की आज्ञा में चलती हैं, और अग्नि आप के नियम में जलती है। आपके शासन में सूर्य और चन्द्रमा चमकते हैं, मेघ बरसता है। आप इन सब के जीवन दाता हो, जो आँख खोलता है, और साँस लेता है। आप सब के प्राणाधार और प्राणपति हो। आप इस सारे जगत् से परे केवल सुखस्वरूप हो, हमारा प्रणाम आप को है। आप सब

से ज्येष्ठ और सब से श्रेष्ठ हो, आप को प्रणाम है। हे हृदय के स्वामिन् ! आप राजाओं के अधिराज हो, आप के पास खाली हाथ किस तरह आवें, क्या लेकर आवें ? सब कुछ तो आप का दिया है, हमारा प्राण, हमारी इन्द्रियाँ सब आपकी दी हुई हैं। आत्मा के भी आप ही स्वामी हो, हमारा सब कुछ आप का है। प्रीति के पुष्प आप के चरणों में रखते हैं, और कृतज्ञ बन कर आप के निकट आते हैं। आप की भेंट के लिए जो हमारे पास है, वह आप से पाया है, आप की भेंट करते हैं। स्वीकार करो, और मुझे अपना अनुगत बनालो। हमारा सर्वस्व आपके कार्य्य में लगे। हमारा सारा परिवार आप की

इच्छा के अधीन हो । आप के सहवास में सच्चे सुख को भोगें । हमारे छोटे बड़े तरुण और शिशु, पिता और भ्राता सब आनन्द में रहें । हमारे प्यारे शरीरों को कभी क्लेश न हो । आप की इच्छा में हमारा हृदय एक हो और हम एक दूसरे को प्यार करें । पुत्र पिता का अनुगामी हो, माता का सेवक बने, पत्नी पति के प्रति मीठा और शान्ति युक्त व्यवहार करे । हम सब एक होकर आपके नाम की महिमा गावें, जिससे विद्वानों में द्वेष मिट जाता है, और सब एक परि-वार बन जाते हैं, वह आपका प्यारा उपदेश-वेद हमारे घर में हो । हम उन्नति के मार्ग में आगे बढ़ते हुए एक चित्त हो कर आपकी आराधना करें ।

हम परस्पर एक हों, और वैर विरोध से बचे रहें। हमारी बाणी में मिठास हो, दृष्टि में प्यार और हृदय में विश्वास हो। हमारा अन्न और जल एक हो, हम सब एक स्नेह पाश में बन्धे हुए तुम्हीं को अपनी पूजा का केन्द्र बनावें। सायं प्रातः अमृत की रक्षा करते हुए हृष्ट मन से तुम्हारे चरणों का आश्रय लें। हमारा सर्वस्व आप के अर्पण हो, हमारा सारा परिवार आप का बनकर रहे। आप की इच्छा में मृत्यु से पार हो कर, अमृत का लाभ करें, और आप की शरण पकड़ कर कहें "आप हमारे हो, हम आप के हैं"

ओ३म् शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!

भजन

दुख दूर कर हमारा संसार के रचैय्या।
जल्दीसे दो सहारा, मँझधार में है नैया ॥१॥
तुम बिन कोई हमारा रक्षक नहीं यहां पर।
ढूंढा जहान सारा तुमसा नहीं रखैया ॥२॥
दुनियां में खूब देखा आँखें पसार करके।
साथी नहीं हमारा मां बाप और भैया ॥३॥
सुख के सभी हैं साथी दुनिया के मित्र सारे
तेरा ही नाम प्यारा दुख दर्द के बचैया ॥४॥
दुनियां में फंस हमको हासिल हुआ न कुछ फल
तेरे बिना हमारा कोई नहीं सुनैया ॥५॥
चारों तरफ से हमपर गमकी घटा है छाई।
सुख का करो उजाला प्रकाश के करैया ॥
अच्छा बुरा है जैसा राज़ी मैं 'राम' रहता।
चेरा है यह तुम्हारा सुध लेउ सुध लिवैया ॥७

—०—

ईश्वरोपासना ।

मनुष्य को ईश्वर की उपासना नित्य करनी चाहिए। उपासना में सब मनुष्य अपने मन को उसी में स्थिर करें। मुक्ति का उत्तम साधन उपासना है। इसीलिए जो विद्वान लोग हैं, वह सब जगत् और सब मनुष्यों के हृदयों में व्याप्त ईश्वर की उपासना को रीति से अपने आत्मा के साथ सँयुक्त करते हैं। उपासना की विधि यह है, कि एकान्तस्थान में बैठ कर अपने मन को शुद्ध तथा आत्मा को स्थिर करें, और बारम्बार वेद मन्त्रों का अर्थ सहित मन में पाठ करके भगवान् की महिमा का गान

करें। और ऐसा अनुभव करें, कि मानों परमात्मा के सद्गुण हृदय में आरहे हैं। उपासना के कुछ मन्त्र अर्थ सहित नीचे दिए जाते हैं। अधिक देखना हो तो ऋषि दयानन्द के वेदभाष्य में देखें।

अष्टाविंशानि शिवानि, शग्मानि सह-योगं भजन्तु मे। योगं प्रपद्ये क्षेमं च, क्षेमं प्रपद्ये योगं च, नमोऽहोरात्राभ्या-मस्तु॥ अथ० २९।२।८।२॥

भूयानरात्याः शच्याः पतिस्त्वमिन्द्रासि विभूः प्रभूरिति त्वोपास्महे वयम् ॥९॥

नमस्ते अस्तु पश्यते मा पश्यते। अन्नाद्येन यशसा तेजसा ब्राह्मणवर्चसेन। १०

हे परमैश्वर्ययुक्त, मङ्गलमय, परमेश्वर! आपकी कृपा से मुझ को उपासना योग

प्राप्त हो तथा उस से मुझ को सुख भी मिले। इसी प्रकार आप की कृपा से दश इन्द्रिय, दश प्राण, मन, बुद्धि, चित्त अहँकार, विद्या, स्वभाव, शरीर और बल ये अट्ठाईस सब कल्याणों में प्रवृत्त होके उपासना योग को सदा सेवन करें, तथा हम भी उस योग के द्वारा रक्षा को और रक्षा के योग को प्राप्त हुआ चाहते हैं, इसीलिए हम लोग आपको नमस्कार करते हैं ॥८॥

हे जगदीश्वर ! आप सब प्रजा, वाणी और कर्म इन तीनों के पति हैं, तथा सर्वशक्तिमान् आदि विशेषणों से युक्त हैं, जिससे आप दुष्ट प्रजा, मिथ्या वाणी, और पाप कर्मों को नष्ट करने में अत्यन्त समर्थ हैं, तथा आप को सर्वव्यापक और सर्व सामर्थ्य वाले जानकर हम लोग आपकी

उपासना करते हैं ॥ ९ ॥ परमेश्वर सब मनुष्यों को उपदेश करता है, कि हे उपासक लोगो ! तुम मुझ को प्रेम भाव से अपने आत्मा में सदा देखते रहो, तथा मेरी आज्ञा और वेदविद्या को यथावत् जान कर उसी रीति से आचरण करो। फिर मनुष्य भी ईश्वर से प्रार्थना करें, कि हे परमेश्वर ! आप कृपा दृष्टि से हम को सदा देखिये, इसलिए हम लोग आप को सदा नमस्कार करते हैं ॥१०॥ अन्न आदि ऐश्वर्य्य, सब से उत्तम कीर्त्ति, भय से रहित और सम्पूर्ण विद्या से युक्त, हम लोगों को कर के, कृपा से देखिए, इस लिए हम लोग सदा आप की उपासना करते हैं ॥११॥

अम्भो अमो महः सह इति त्वो-

पास्महे वयम् ॥ १२ ॥ अम्भो अरुण रजतं रजः सह इति त्वोपास्महे वयम् ॥ १३ ॥ उरुः पृथुः सुभूर्भुव इति त्वोपास्महे वयम् ॥ १४ ॥ प्रथो परो व्यचो लोक इति त्वोपास्महे वयम् ॥ १५ ॥ अ० १३ । ४ । ४८ ।– ५१, ५२ ॥

हे भगवन् ! आप सब में व्यापक, शान्त स्वरूप और प्राण के भी प्राण हैं, तथा ज्ञान स्वरूप और ज्ञान को देने वाले हैं। सबके पूज्य, सबके बड़े और सबके सहन करने वाले हैं, इस प्रकार का आप को जान के हम लोग सदा उपासना करते हैं ॥९२॥ आप प्रकाशस्वरूप, सब दुःखों के नाश करने वाले, तथा प्रीति के परम हेतु, आनन्दस्वरूप सब लोगों के ऐश्वर्य्य

से युक्त और सहनशक्ति वाले हैं, इस लिए हम लोग आप की उपासना निरन्तर करते हैं ॥१३॥ आप सब बल वाले आदि अन्त रहित, तथा सब पदार्थों में अच्छे प्रकार से वर्तमान और अवकाशस्वरूप से सब के निवासस्थान हैं, इस कारण हम लोग उपासना कर के आप के ही आश्रित रहते हैं ॥ १४ ॥ हे परमात्मन् ! आप सब जगत् में प्रसिद्ध और उत्तम हैं, अर्थात् सब प्रकार से इस जगत् का धारण, पालन और वियोग करने वाले तथा विद्वानों के देखने अर्थात् जानने के योग्य केवल आप ही हैं, दूसरा कोई नहीं ॥ १५ ॥

भजन

पितु मातु सहायक स्वामी सखा,
तुम्हीं इक नाथ हमारे हो।
जिन के कछु और अधार नहीं,
तिन के तुमही रखवारे हो॥ १॥
सब भान्ति सदा सुखदायक हो,
दुःख दुर्गुण नाशन हारे हो।
प्रतिपाल करो सिगरे जग को,
अतिशय करुणा उर धारे हो॥ २॥
भूले हैं हम ही तुम को, तुमतो;
हमरी सुधि नाहिं विसारे हो।
उपकारन का कछु अन्त नहीं,
छिन ही छिन जो विस्तारे हो॥ ३॥
महाराज महा महिमा तुम्हरी,
समझे विरले बुद्धि वारे हो।

शुभ शान्तिनिकेतन, प्रेम निधे,
मन-मन्दिर के उजियारे हो ॥ ४ ॥
यही जीवन के तुम जीवन हो,
इन प्राणन के तुम प्यारे हो।
तुम सों प्रभु पाय प्रताप हरी,
किहि के अब और सहारे हो ॥५॥

भजन

पिता जी करूं तुम्हें मैं प्यार।
तुम ही देव हमारे मन के,
तन के तुम आधार ॥ १ ॥
फूलों की रजगन्ध तुम्हीं हो।
विद्या के आगार ॥ २ ॥
तरणि तेज के त्राता तुम हो।
वेदों के सुविचार ॥ ३ ॥
जीवन दीन हीन के ही तुम।
सकल जगत् के सार ॥ ४ ॥

प्रलय समय में एक तुम्हीं, बस
करते दया अपार ॥ ५ ॥
जल, थल, नभ में वास तुम्हारा
तन, मन में सञ्चार ॥ ६ ॥
लोक लोक में सत्य तुम्हारा
कण कण में विस्तार ॥ ७ ॥
पिता जी करूं तुम्हें मैं प्यार ॥

स्वाध्याय ।

स्वाध्यायाद् योगमासीत, योगात्स्वाध्यायमाभनेत् । स्वाध्याययोगसम्पत्त्या परमात्मा प्रकाशते ॥१॥

योग०, व्यास भाष्य १ । २८॥

अर्थ—स्वाध्याय से मनुष्य योग को धारण करे । योग से स्वाध्याय का मनन करे । दोनों को पालन करने से परमात्मा अन्तःकरण में प्रकाशित होते हैं ॥१॥

यथा यथा हि पुरुषः शास्त्रं समधिगच्छति । तथा तथा विजानाति विज्ञानं चास्य रोचते ॥२॥ मनु० ४ । २०॥

ज्यों २ पुरुष शास्त्र को समझता जाता है, त्यों २ विशेष जानता जाता है और

उसको विज्ञान रुचिकर होता है ॥१॥

वेद का स्वाध्याय नित्यप्रति प्रातः समय जिस प्रकार भी हो सके, थोड़ा समय निकाल कर अवश्य करना चाहिये। स्वाध्याय बुद्धि को तीव्र और आत्मा को उज्वल बनाता है। स्वाध्याय के लिए कुछ वेद मन्त्र नीचे दिए जाते हैं। अधिक देखना हो, तो वेदों और उपनिषदों का अध्ययन करें।

प्रजापतिश्चरति गर्भे अन्तरजायमानो बहुधा विजायते। तस्य योनिं परिपश्यन्ति धीरास्तस्मिन् ह तस्थुर्भुवनानि विश्वा ॥१६॥ य० ३१ ॥

जो प्रजा का पति अर्थात् सब जगत् का स्वामी है, वही जड़ और चेतन के

भीतर और बाहर अन्तर्यामी रूप से सर्वत्र व्याप्त हो रहा है। जो सब जगत् को उत्पन्न करके अपने आप सदा अजन्मा रहता है, जो उस परब्रह्म की प्राप्ति का कारण, सत्य का आचरण, और सत्य विद्या है, उस को विद्वान् लोग ध्यान से देख कर परमेश्वर को सब प्रकार से प्राप्त होते हैं, जिस में ये सब भुवन अर्थात् लोक ठहर रहे हैं, उसी परमेश्वर में ज्ञानी लोग भी सत्य निश्चय से मोक्ष सुख को प्राप्त हो के, जन्म, मरण आदि आने जाने से छूट के आनन्द में सदा रहते हैं ॥१९॥

यो देवेभ्य आतपति, यो देवानां पुरोहितः। पूर्वो यो देवेभ्यो जातो, नमो रुचाय ब्राह्मये०॥२०॥ य० ३१।

जो परमात्मा विद्वानों के लिए सदा प्रकाशस्वरूप है, अर्थात् उनके आत्माओं को जो प्रकाशमय कर देता है और वही उनका पुरोहित अर्थात् अत्यन्त सुखों से धारण और पोषण करने वाला है, इस से वह फिर दुःख सागर में कभी नहीं गिरते। जो सब विद्वानों से आदि विद्वान् और जो विद्वानों के ही ज्ञान से प्रसिद्ध अर्थात् प्रत्यक्ष होता है, उस अत्यन्त आनन्दस्वरूप और सत्य में रुचि कराने वाले ब्रह्म को हमारा नमस्कार हो, और जो उन विद्वानों से वेद विद्यादि को यथावत् पढ़ के धर्मात्मा अर्थात् ब्रह्म को पिता के समान मान कर प्रेम-प्रीति युक्त सेवा करने वाला है,

उसको हम लोग नमस्कार करते हैं ॥२०॥

रुचं ब्राह्मं जनयन्तो देवा अग्रे तद्-ब्रुवन्। यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्तस्य देवा असन् वशे ॥२१॥ य० ३१।

जो ब्रह्म का ज्ञान है, वही अत्यन्त आनन्द करने वाला, और उस मनुष्य की उसमें रुचि को बढ़ाने वाला है जिस ज्ञान को विद्वान् लोग अन्य मनुष्यों के आगे उपदेश करके उनको आनन्दित कर देते हैं, जो मनुष्य इस प्रकार से ब्रह्म को जानता है उसी विद्वान् के सब मन आदि इन्द्रिय वश में हो जाते हैं, अन्य के नहीं ॥२१॥

श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे, पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्

इष्णन्निषाणामुं म इषाण, सर्वलोकं म इषाण ॥२२॥ य० अ० ३१ ॥

हे परमेश्वर ! जो आप की अनन्त शोभारूप श्री और जो अनन्त शुभ लक्षण युक्त लक्ष्मी है, वे दोनों स्त्री के समान हैं। अर्थात् जैसे स्त्री पति की सेवा करती है, इसी प्रकार आप की सेवा आप ही को प्राप्त होती है, क्योंकि आप ने ही सब जगत् को शोभा और शुभ लक्षणों से युक्त कर रखा है। सब पदार्थ ईश्वर के अधीन होने से उन के विषय में जैसे पत्नी शब्द को रूपकालङ्कार से वर्णन किया है, वैसे ही जो दिन और रात्रि ये दोनों बगल के समान हैं। तथा सूर्य और चन्द्र भी

दोनों आप के बगल के समान वा नेत्र स्थानीय हैं, और जितने वे नक्षत्र हैं वे आप के रूपस्थानीय हैं, और द्यौ जो सूर्य आदि का प्रकाश और विद्युत अर्थात् बिजुली ये दोनों मुखस्थानीय हैं, तथा होंठ के तुल्य और जैसा खुला मुख होता है इसी प्रकार पृथिवी और लोक के बीच में जो पोल हैं, मुख के सदृश है। हे परमेश्वर! आप की दया से परलोक जो मोक्ष सुख है, उस को हम लोग प्राप्त होते हैं। इस प्रकार की कृपादृष्टि से हमारे लिए इच्छा करो, तथा मैं सब सँसार में सुखों से युक्त होके सब लोकों के सुखों का अधिकारी जैसे होऊं वैसी कृपा करो और उस जगत् में मुझको सर्वोत्तम शोभा, और

लक्ष्मी से सदा युक्त कीजिए। यह आप से हमारी प्रार्थना है सो आप कृपा कर पूरी कीजिए ॥२२॥

यत्परममवमं यच्च मध्यमं प्रजापतिः ससृजे विश्वरूपम्। कियता स्कम्भः प्रविवेश तत्र यन्न प्राविशत् कियत्तद्बभूव ॥१॥ अथ० १०।४।८॥

जो उत्तम मध्यम और नीच स्वभाव से तीन प्रकार का जगत् है, उस सब को परमेश्वर ने ही रचा है। उसने इस जगत् में नाना प्रकार की रचना की है, और वही इस सब रचना को यथावत् जानता है, और इस जगत् में जो कोई विद्वान् होते हैं, वे भी कुछ २ परमेश्वर की रचना के गुणों को जानते हैं। वह

परमेश्वर सब को रचता है, और आप रचना में कभी नहीं आता ॥२॥

देवाः पितरो मनुष्या गन्धर्वाप्सरसश्च ये । उच्छिष्टाज्जज्ञिरे सर्वे दिवि देवा दिवि श्रिताः ॥२॥

अथ० ११।२४।४।२७ ॥

विद्वान् अर्थात् पण्डित लोग और सूर्य्य लोक भी यथार्थ विद्या को जानने वाले, विचार करने वाले, गानविद्या को जानने वाले सूर्य्यादि लोक और इन सब की स्त्रियाँ ये सब लोक और दूसरे लोक भी उसी ईश्वर के सामर्थ्य से उत्पन्न हुए हैं । जो प्रकाश करने वाले और प्रकाशस्वरूप सूर्य्यादि लोक और चन्द्र तथा पृथिवी आदि प्रकाश

रहित लोक हैं, ये भी उसी के सामर्थ्य से उत्पन्न हुए हैं ।।२।।

वेदों में इस प्रकार के सृष्टि-विधान करने वाले मन्त्र बहुत हैं, परन्तु ग्रन्थ अधिक न हो जाय, इसलिए संक्षेप से लिखा है ।

सुभाषित रत्नावली

१. सत्यं वद ॥ सत्य बोल ॥ १ ॥

२. धर्म्मं चर ॥ धर्म्म पर चल ॥२॥

३. मा गृधः ॥ लालच मत कर ॥३॥

४. ओं क्रतो स्मर ॥ हे जीव ! ओ३म् का जाप कर ॥ ४ ॥

५. क्लिवे स्मर ॥ ओम् का जाप शक्ति के लिये कर ॥ ५ ॥

६. कृतं स्मर ॥ किये हुए काम को याद कर ॥ ६ ॥

७. मनः सत्येन शुध्यति ॥ मन सच बोलने से शुद्ध होता है ॥७॥

८. वर्जयेत मधु माँसं च ॥ मांस और शराब छोड़ दो ॥८॥

९. अश्मा भव ॥ पत्थर की नाईं दृढ़ हो ।

१०. परशुर्भव ॥ कुल्हाड़े के समान हो १०

११. अश्मानं तन्वं कृधि॥ अपने शरीर को व्यायाम से पत्थर बना ले ॥ ११ ॥

१२. घृतेन तन्वं वर्धस्व ॥ घी से शरीर को बढ़ाओ ॥ १२ ॥

१३. विद्या धर्मेण शोभते ॥ विद्या धर्म से शोभा देती है ॥१३॥

१४. विद्या विहीनः पशुभिः समानः ॥ विद्या के बिना मनुष्य पशु समान है

१५. क्षमा वीरस्य भूषणम् ॥ क्षमा वीर पुरुष का आभूषण है ॥१५॥

१६. पुरा जरसा मा मृथाः ॥ बुढ़ापे से पहले मत मरो ॥१६॥

१७. यतेमहि स्वराज्ये ॥ स्वराज्य प्राप्ति में हम यत्न करें ॥१७॥

१८. सत्यं वक्ष्यामि नानृतम् ॥ सत्य ही सदा बोलूंगा, झूठ कभी नहीं ॥१८॥

१९. सत्यमेव जयति नानृतम् ॥ सदा सत्य की जय होती है, झूठ की नहीं॥

२०. यतो धर्मस्ततो जयः ॥ जहाँ धर्म है, वहीं जय है ॥२०॥

२१. न ।रिष्येत्त्वावतः सखा ॥ हे प्रभो ! आप का सखा कभी नष्ट नहीं होता

२२. वयं जयेम त्वया युजाः ॥ हम आप के साथ मिले हुए ही जीत पावें ॥

२३. तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ॥ उस सर्व श्रेष्ठ परब्रह्म के लिए नमस्कार ॥ २३ ॥

२४. ईशावास्यमिदं सर्वम् ॥ ईश्वर सब जगह व्यापक है ॥ २४ ॥

२५. पशून् पाहि ॥ पशुओं की रक्षा करो ॥ २५ ॥

२६. गाँ मा हिन्सीः ॥ गौ को मत मार।

२७. अविं मा हिन्सीः ॥ भेड़ वा बकरी को मत मार ॥ २७ ॥

२८. इमं मा हिन्सीर्द्धिपादं पशुम् ॥ दो खुर वाले पशु को मत मार ॥ २८ ॥

२९. माँसं नाश्नीयात् ॥ कोई भी माँस न खावे ॥ २९ ॥

३०. अश्वं मा हिन्सीः ॥ घोड़े को मत मार ॥ ३० ॥

३१. कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ॥ सारे संसार को आर्य बना दो ॥ ३१ ॥

३२. अस्तु मयि श्रुतम् ॥ मैं वेदपाठी बनूं ॥ ३२ ॥

३३. संश्रुतेन गमेमहि ॥ हम वेदानुसार चलें ॥ ३३ ॥

३४. मा श्रुतेन विराधिषि ॥ वेद का विरोध मत करो ॥ ३४ ॥

३५. सपत्ना अस्मदधरे भवन्तु ॥ शत्रु हमारे अधीन होवें ॥ ३५ ॥

३६. अहं भूयासमुत्तमः ॥ मैं सब से उत्तम बनूं ॥ ३६ ॥

३७. वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥ हम धन के स्वामी बनें ॥ ३७ ॥

३८. अभयं पशुभ्यः ॥ हमें पशुओं से अभय हो ॥ ३८ ॥

३९. सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ॥ सब दिशाएँ और आशाएँ मेरी मित्र हों।

४०. अक्षैर्मा दीव्यः ॥ जूआ मत खेल॥४०

४१. कृषिं कृषष्व ॥ खेती बाड़ी करो ॥

४२. यतोऽभ्युदयनिश्रेयससिद्धिः स धर्मः ॥ जिस काम से इस लोक तथा उस लोक का सुधार हो, वह धर्म है ॥ ४२ ॥

४३. ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत। ब्रह्मचर्य और तप से विद्वानों ने मौत को जीता ॥ ४३ ॥

४४. नाऽनाश्रान्ताय श्रीरस्ति ॥ बिना कष्ट उठाये धन ऐश्वर्य्य नहीं मिलता।

४५. इन्द्र इच्चरतः सखा ॥ परिश्रमी पुरुष की प्रभु आप सहायता करता है ॥ ४५ ॥

उत्तम स्वास्थ्य के लिए उत्तम नियम

जल

१. युवा अवस्था तथा स्वास्थ्य में सदा शीतल जल से स्नान करो ।

२. केवल रुग्ण अवस्था तथा निर्बलता में कोसे जल से नहाओ ।

३. खाने से तत्काल पहले या तत्काल पीछे जल मत पीओ, भोजन में कम जल पीओ, यदि भोजन के एक घण्टा बाद जल पीवें, तो अधिक लाभ होता है ।

४. ग्रीष्म काल में बर्फ तथा सोडा मत पीवो, इन से प्यास तथा खुशकी बढ़ती है । पाचनशक्ति कम होती है।

५. हैजे के दिनों में कूएँ का जल बिना उबाले मत पीओ ।

६. जुकाम तथा खाँसी में, विशेष कर शीत ऋतु में सदा उष्ण जल सेवन करो।

७. स्वभाव से चाय मत पीओ । यह भूख प्यास और नींद बन्द करती है, अण्डकोषों को निर्बल बनाती तथा पेशाब अधिक लाती है॥

वायु

१. खुली हवा में प्रतिदिन नियम से व्यायाम करो।

२. खुले मैदान और बाग़ में जाकर गहरा श्वास लो।

३. तंग गली कूचों में रहना छोड़ दो।

४. सोते समय रोशन दानों को खुला रक्खो।

५. सख्त सरदी में सिर ढाँप लो, मगर

मुँह और नाक श्वास लेने के लिए खुला रखो।

६. रोगी के कमरे में बहुत देर तक मत सोओ।

७. सोते जागते सदा श्वास नाक से लिया करो।

भोजन

१. भोजन शनैः २ चबाकर खाओ।

२. स्वादु भोजन आवश्यकता से अधिक मत खाओ।

३. अजीर्ण होनेपर भोजन तथा मिठाइयां मत खाओ। कभी २ उपवास लाभ-दायक होता है।

४. कब्ज़ में मोटे आटे की रोटी तथा सबज़ी वा फल खाओ।

५. भोजनशाला स्वच्छ, सुन्दर और खुली होनी चाहिए।
६. गर्म पदार्थ खाकर तत्काल ठण्डी चीज़ खाना दांतों तथा गले के लिए हानिकारक है।
७. खटाई और दूध एक साथ मत खाओ
८. मूली, दही और पनीर एक साथ मत खाओ ।
९. भोजन करने से पूर्व तथा बाद हाथ जिह्वा, दांत तथा गला पानी से साफ़ कर लिया करो।
१०. भोजन के तत्काल पीछे व्यायाम, स्त्री के साथ भोग, स्नान, चिन्ता अथवा क्रोध करना अत्यन्त हानिकारक है।

निद्रा

१. सोने से तीन घण्टे पूर्व भोजन कर लो

२. सोते समय जल, दूध या मिठाई आदि मत खाओ ।

३. पीठ के बल न सोवो, अपितु पहलू के बल सोया करो, विशेष कर जबकि 'स्वप्नदोष' का रोग हो ।

४. सोने से पन्द्रह मिनट पहले दिमाग़ी काम छोड़ दो, चिन्ता, क्रोध निराशा तथा रोग की वार्तादि छोड़ दो ।

५. सोने से पहले थोड़े से गहरे श्वास खुले स्थान तथा वायु में लेकर 'प्राणायाम' करो तथा कहो, कि "मैं आज खूब गहरी नींद सोऊंगा। सोना मेरा स्वाभाविक अधिकार है ।

६. साधारण प्राणायाम तथा शरीर पर तेल की मालिश अच्छी नींद लाती है ।

७. सोने से पहले शौच, पेशाबादि अवश्य कर लेना चाहिए ।

जीवनदाता।

महर्षि दयानन्द निःसन्देह इस युग के जीवनदाता हैं। भारतवर्ष में इस समय जो कुछ जागृति प्रतीत होती है, यह सब उन्हीं का पुण्यप्रताप है। लोग पक्षपात के कारण इस बात को मानें या न माने, परन्तु सत्य तो यह है, कि उनके प्रचार से सब कपोलकल्पित मत मतान्तर अपनी नींव से हिल चुके हैं, और प्रत्येक पन्थ यत्न कर रहा है, कि वह अपने माने हुए सिद्धान्तों को ऋषि की बतलाई सचाईयों के अनुकूल सिद्ध करे। ऐसी अवस्था में वह समय दूर नहीं, जबकि सारे भारतवर्ष के नर नारी मुक्त कण्ठ से ऋषि को अपना जीवनदाता

स्वीकार करके उनके लिए श्रद्धा और भक्ति प्रकट करेंगे।

ईसाई और यवन आदि कुछ काल के लिए उनको अपना जीवन दाता स्वीकार करने में संकोच करें तो करें, परन्तु किसी आर्य्य (हिन्दू) बच्चे को तो क्षण भर के लिये भी संकोच नहीं होना चाहिए, क्योंकि ऋषि ने वास्तव में मृत्यु के निकट पहुंची हुई आर्य्य-जाति को नया जीवन प्रदान किया है । ऋषि से पूर्व किसी हिन्दू में यह साहस न था, कि वह अपने धर्म, अपने वेदशास्त्र और अपने महापुरुषों के लिए अभिमान कर सके, क्योंकि वैदिक-धर्म के शत्रुओं ने उन सबको दूषित और कलङ्कित कर रक्खा था। इसी कारण सहस्रों आर्य्य बालक

दिन प्रतिदिन ईसाईयों और यवनों के ग्रास हो रहे थे। परन्तु जीवनदाता ऋषि दयानन्द ने अपने तपोबल से हीन और दीन आर्य जाति को नया जीवन प्रदान किया। स्वामीजी ने आर्यजातिके सिंहपुत्रों को, जो अविद्या से भेडों में मिले हुए थे, इस सत्य का बोध कराया कि वे शेर हैं। हिन्दू अपने वेदशास्त्रों के नाम तक को भूल गए थे। स्वामी जी ने उनका पुनः प्रचार करके आर्यों को इस योग्य बनाया कि वे अपने धर्म, वेदशास्त्रों और अपने ऋषि मुनियों के लिए अभिमान कर सकें। उन के ही प्रयत्न का फल है, कि आज कोई हिन्दू धम के कारण पतित नहीं होता। ऐसी अवस्था में क्या प्रत्येक आर्य्य बच्चे (चाहे उसने आर्यसमाज में

प्रवेश किया हो या नहीं) कर्त्तव्य नहीं है, कि वह स्वामी दयानन्द के उपकारों का स्मरण करके उनके प्रति श्रद्धा और भक्ति के भाव हर समय बनाए रक्खे ? आर्य्य समाज और उन की संस्थाओं में प्रवेश करने वालों के लिए तो यह अत्यन्त आवश्यक है, कि उन्हें महर्षि के पवित्र चरित्र और उन के उपकारों का बोध हो।

ऋषि के जीवन और काम को विस्तार पूर्वक जानने के लिए प्रत्येक आर्य्य को उनका सम्पूर्ण जीवन चरित्र पढ़ना चाहिए। परन्तु यहां उनके सम्बन्ध में दो चार आवश्यक बातें लिखकर पुस्तक को समाप्त किया जाता है।

स्वामी दयानन्द का जन्म सन् १७२४ ई० को गुजरात काठियावाड़ प्रान्त के "टङ्कारा" नगर में पण्डित कृष्ण जी तिवारी के घर हुआ था। उनका जन्म नाम मूलशंकर था। वह प्रायः "मूलजी" कहलाया करते थे। तेरह चौदह वर्ष की आयु में ही उन्होंने बहुत सी विद्या प्राप्त कर ली थी। उनके मनकी प्रवृत्ति खोजकी ओर अधिक रहती थी। शिव के उपासक होने के कारण शिवरात्रि के दिन पण्डित कृष्णजी ने अपने पुत्र मूलशंकर को भी शिवरात्रि का व्रत रखवाया, और उसे कहा कि शिवालय में जाग कर शिव को प्रसन्न करना होगा। मूलशङ्कर ने स्वीकार किया। परन्तु जब आधी रात हो चुकी, तो वह क्या देखता है, कि मंदिर

के पुजारी, उनके पिता और अन्य उपासक सब सो गए। इतने में एक चूहा निकला, और पत्थर के शिव पर धरी हुई सब मिठाई चट कर गया। इस घटना को देख बालक मूलशङ्कर चकित रह गया, कि क्या यही शिव है, जिस का वर्णन पिताजी इतनी बड़ाई के साथ किया करते थे? क्या इसी शिव की उपासना के लिए रात्रि जागरण और व्रत रखवाया गया है, जो एक चूहे से भी अपनी रक्षा नहीं कर सकता है? पिता से मन का सन्देह दूर करना चाहा परन्तु सन्तोषजनक उत्तर न मिला। उसी दिन से सच्चे शिव का पता लगाने का प्रण कर लिया। उसके दो तीन वर्ष

पश्चात् उनकी भगिनी और चचा की मृत्यु हो गई। इन दृश्यों को देख कर उन्हों ने मृत्यु का पता लगाने का सँकल्प कर लिया। यह दो घटनाएं थीं, जिन्हों ने मूलशङ्कर के मन पर चोट लगाई, उन्हें घर-बार छोड़ने पर मजबूर किया, और इन्हीं के कारण मूलशङ्कर ने दयानन्द बनकर इतनी उच्च पदवी को प्राप्त किया।

सच्चे शिव की खोज में मूलशङ्कर ने सारे बन पर्वत छान मारे। परन्तु मनको शान्ति प्राप्त न हुई। दिन रात इसी चिंता में फिरते २ उन्हें पता चला, कि मथुरा में एक प्रज्ञाचक्षु (अन्धे) दण्डी स्वामी विरजानन्द नामी रहते हैं, वह वेद के विद्वान् हैं। मूलशङ्कर ने, जो उस समय तक सन्यास लेकर दयानन्द बन चुके थे,

मथुरा पहुँच कर स्वामी विरजानन्द का दरवाज़ा खटखटाया । दण्डीजी के उपदेशों और वेदशास्त्रों के स्वाध्याय से स्वामी दयानन्द के वह सँशय दूर होगए जिन्हों ने घर से निकलने के लिए उन्हें मजबूर किया था । जब दण्डी ने देखा, कि दयानन्द विद्वान् हो गया है तो एक दिन समावर्तन के लिए नियत किया । दयानन्द के साथ तीन और विद्यार्थी भी पढ़ा करते थे । चारों गुरुजी को दक्षिणा देने के लिए कुछ भेंट लेने गए । दयानन्द को कुछ लौंग मिले । उसने हाथ जोड़ कर गुरुजी की भेंट किए, और कहा "महाराज" जो कुछ मिला, श्रद्धापूर्वक आप की सेवा में उपस्थित करता हूँ" । स्वामी विरजानन्द बोले "बेटा ! मुझे इन लौंगों की आव-

श्यकता नहीं है। मैं कुछ और चाहता हूँ, यदि दे सकते हो, तो दो"। दयानन्द ने, जो हाथ बांधे खड़ा था, कहा, 'भगवन्! आज्ञा दीजिए'। गुरुजी बोले, 'संसार में अन्धकार फैल रहा है, मत मतान्तरों के पाखण्ड से मनुष्य पीड़ित हो रहे हैं। बेटा! मैंने जो ज्ञान तुम्हें दिया है, उस को फैलाकर तिमिर का नाश करो। मैं तुमसे यही दक्षिणा मांगता हूँ। क्या तुम में से कोई यह दक्षिणा देने को तैयार है।

गुरु जी के यह वचन सुन कर शेष तीन शिष्य तो चुप हो गए परन्तु दयानन्द कुछ सोच कर बोलेः—

"भगवन्! तथास्तु। मैं अपना जीवन आप को दक्षिणा में देता हूँ, आप की

आज्ञा का पालन करते हुए आयु भर वेदों का प्रचार करूंगा"।

स्वामी विरजानन्द ने आशीर्वाद दिया, और दयानन्द उनसे विदा हुए। चार वर्ष तक पुष्कर, ग्वालियर आदि स्थानों में प्रचार कर हरिद्वार के कुम्भ के मेले पर चले गये, और वहां पाखण्डखण्डिनी-पताका लगा कर पौराणिक मतों का खूब खण्डन किया। परिणाम यह हुआ, कि पाखण्डी लोग उनके शत्रु बन गये, और उन्होंने स्वामी जी को मार डालने का निश्चय कर लिया। प्रथम बार उन्हों ने स्वामी जी की जगह भूल से किसी और मनुष्य को गङ्गा में डुबो दिया। दूसरी बार पान में विष दिया। तीसरी बार कर्णवास में राव कर्णसिंह ने तलवार

का वार किया। परन्तु स्वामी जी के तेज से उन की तलवार गिर गई। जब सब वार निष्फल गये तो पण्डितों ने मिल शास्त्रार्थ की ठानी। काशी आदि स्थानों पर शास्त्रार्थ में भी बड़े २ धुरन्धर पण्डित परास्त हुए। अब स्वामी जी की विद्वत्ता और बल का डंका सारे भारतवर्ष में बज गया और उन्हों ने भारत के बड़े २ नगरों में फिर कर प्रचार किया। आर्य–समाज के सम्बन्ध में जितनी भी संस्थाएं और जितने भी काम दिखाई देते हैं, वह उस ऋषि के तपोबल का ही परिणाम है।

मृत्यु से कुछ दिन पूर्व स्वामी जी जोधपुर गए और वहाँ के राजा को उपदेश दिया। राजा उनका शिष्य बन गया।

परन्तु स्वामी जी ने सुना कि राजा ने वेश्या रक्खी हुई है। एक दिन उसी वेश्या की पालकी दरबार में आई। स्वामी जी से रहा न गया, और दरबार में ही स्पष्ट कह दिया, कि शेर को कुत्तियों का सङ्ग नहीं करना चाहिये। राजा पर तो इसका अच्छा प्रभाव पड़ा, परन्तु वह वेश्या स्वामी जी की शत्रु बन गई और उस ने मन्त्रियों को अपने साथ मिला कर किसी आदमी से उनको विष दिला दिया। ग़ज़ब यह हुआ, कि जो डाक्टर उनके इलाज के लिए नियत हुआ, वह भी इस शत्रु मण्डली से मिला हुआ था, जिससे बजाय आराम के दिन प्रति दिन अवस्था बिगड़ती ही गई। वहाँ से स्वामी जी उसी अवस्था में पालकी पर

अजमेर लाये गये। अब उनको निश्चय हो गया, कि उनका अन्तकाल आपहुंचा है। जिस प्रकार राजा के पास जाने के लिए विशेष तैयारी की जाती है, उसी प्रकार जिस दिन स्वामी जी ने अपने परम पिता प्रभु की गोद में जाना था, उस दिन हजामत कराई, शरीर को साफ़ किया, वेद मन्त्रों का उच्चारण किया, और अन्त में यह कह कर शरीर को छोड़ दिया—

"ईश्वर! तेरी इच्छा पूर्ण हो"

स्वामी जी ने सन् १८८३ ई० में परलोक गमन किया। उस समय उनकी अवस्था ५९ वर्ष की थी।

ऋषि ! सदा वह सुना गया तू,
कि दुनिया भर को गुञ्जा गया तू ।
वह जामे वहदत पिला गया तू,
तपिश दिलों की बुझा गया तू ॥

बना जिन हरफ़ों से नाम तेरा,
बतावें ख़लक़त को काम तेरा ।
है सच तो यह कि उन्हीं के दम से,
मुख़ालिफ़ों को हिला गया तू ॥२॥

दया अगर थी तो 'दाल' से थी,
हर एक जाति के लाल से थी ।
कि देके वेदों को सब के हाथों,
वह राहे रहमत दिखा गया तू ॥३॥

अगर यतीमों का दिल टटोला,
अगर ग़रीबों का हाल पूछा ।
मिला था "ये" से यह वस्फ़ेयारी,

करोड़ों बच्चे बचा गया तू ॥४॥
अलिफ़ से पहले वतन को अपने,
सुनाए तोहीद के वह नग़मे ।
कूल्बे तौहमात किए मुसफ्फा,
कुफ़र का नकशा मिटा गया तू ॥५॥
है फूंकी सारों में रूहे उलफ़त,
कि 'नून' से सब मिटाई नफ़रत ।
बुला बुला कर गले लगाकर,
करोड़ों बिछड़े मिला गया तू ॥६॥
निहाल ऐसा लगाया "नूं" से,
कि जिसको सींचा जिगर के खूं से ।
कि जिसके साये में आर्य्यों को,
इकट्ठा करके बिठा गया तू ॥७॥
है "दाल" से की धर्म्म की रक्षा,
बदौलत उसकी थी तुझ में दृढ़ता ।

किले जेहल को उलू में बारूद,
से धुआँ सा उड़ा गया तू ॥८॥
दिल में अपने न थी हरारत,
अजाओं अपने में थी न हरकत ।
थे ज़िन्दा लेकिन बमिस्ले मुर्दा,
कि गोया मुर्दे जिला गया तू ॥९॥
निकाला कलमा जो था दहन से,
निभाया बाणी, बचन से, मन से ।
झुकायें सरकश भी आज सब सर,
कि जो २ नुकते बता गया तू ॥१०॥
वजूद माहो महर है जब तक,
ज़हूर बाग़े दहर है जब तक ।
फ़कीर जाहिर करें गो नफ़रत,
दिलों में लेकिन समा गया तू ॥११॥

भजन।

दयानन्द के वीर सैनिक बनेंगे।
दयानन्द का काम पूरा करेंगे॥

उठाये ध्वजा धर्म की हम फिरेंगे।
उसी के लिए हम जियेंगे मरेंगे॥
गुंजायेंगे वेदों के हम गीत गाकर।
दिखायेंगे दुनिया पुरानी बनाकर॥
उजाड़ेंगे शहरों को जङ्गल बसाकर।
बितायेंगे जीवन को सच्चा बनाकर॥
उठायेंगे ऋषियों की आवाज़ को हम॥
बनायेंगे फिर स्वर्ग संसार को हम॥
मिटायेंगे सब सम्प्रदायों को, मत को।
बनायेंगे फिर आर्य सारे जगत् को॥
वही प्रेम गङ्गा यहाँ फिर बहेगी।
जो संसार की ताप-माला हरेगी॥

कहेगा जगत् फिर से इकस्वर में सारा
वही वृद्ध भारत गुरु है हमारा ॥

भजन ।

वेदों का डंका आलम में,
बजवा दिया ऋषि दयानन्द ने ।
हर जगह ओ३म् का झंडा फिर,
फहरा दिया ऋषि दयानन्द ने ॥१॥

अज्ञान अविद्या की हरसू,
घनघोर घटायें छाई थीं ।
कर नष्ट उन्हें जग में प्रकाश,
फैला दिया ऋषि दयानन्द ने ॥२॥

सर पर तूफ़ान बला का था,
नज़रों से दूर किनारा था ।
बन कर मल्लाह किनारे पर,
पहुंचा दिया ऋषि दयानन्द ने ॥३॥

घुस गये लुटेरे घर में थे,
सब माल लूट कर ले जाते।
सद्शुक्र हाय सोतों को पकड़,
बिठला दिया ऋषि दयानन्द ने ॥४॥
मक्कारी, दग़ा, फ़रेबों से,
जो माल मुफ्त का खाते थे।
सब पोल खोल कर दिल उनका,
दहला दिया ऋषि दयानन्द ने ॥५॥
उड़ गए होश मतवालों के,
मैदान छोड़ कर रफ़ू हुए।
हथ्यार तर्क का निकाल जब,
चमका दिया ऋषि दयानन्द ने ॥६॥
कब्रों में सर को पटकते थे,
कई दैरो हरम में भटकते थे।
दे ज्ञान उन्हें मुक्ति का मार्ग,
दिखला दिया ऋषि दयानन्द ने ॥७॥

करते थे हमेशा चीख़ चीख़,
तौहीन वेदे अकदस की जो।
सर उन का वेदों के आगे,
झुकवा दिया ऋषि दयानन्द ने ॥८॥
सब छोड़ चुके थे धर्म कर्म,
गौरव गुमान ऋषि मुनियों का।
फिर सन्ध्या, हवन, यज्ञ करना,
सिखला दिया ऋषि दयानन्द ने ॥९॥
विद्यालय, गुरुकुल खुलवाये,
कायम हर जगह समाज किये।
आदर्श पुरातन शिक्षा का,
बतला दिया ऋषि दयानन्द ने ॥१०॥
बलिदान किया बलि वेदी पर,
जीवन प्रकाश हँसते हँसते।
सच्चे रहबर बन कर सब को,
चेता दिया ऋषि दयानन्द ने ॥११॥

आर्य समाज के नियम।

१—सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।

२—ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर अभय नित्य, पवित्र, और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।

३—वेद सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना पढ़ाना, और सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

४—सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।

५—सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार कर करने चाहियें।

६—संसार का उपकार करना अर्य्य-समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

७—सब से प्रीति पूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य बर्त्तना चाहिए।

८—अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।

९—प्रत्येक को अपनी उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिये, किन्तु सब की

उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये ।

१०–सब मनुष्यों को सामाजिक सर्व-हितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिये, और प्रत्येक हित-कारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें ।

आर्य समाज के उपनियम।

१—इस समाज का नाम आर्य समाज है।

२—इस समाज के उद्देश्य वही हैं, जो इसके नियमों में वर्णन किये गये हैं।

३—जो लोग आर्य्य समाज में नाम लिखाना चाहें और समाज के उद्देश्य के अनुकूल आचरण स्वीकार करें, वे आर्य्य समाज में प्रविष्ट हो सकते हैं। परन्तु उन की अठारह वर्ष से न्यून आयु न हो।

४—जो लोग आर्य समाज में प्रविष्ट हों, वे आर्य्य कहलावेंगे।

५—जो आर्य्य समाज के उद्देश्य के विरुद्ध काम करेगा, वह न तो

आर्य्य और न आर्य सभासद गिना जावेगा।

६—यह सभा प्रत्येक सप्ताह में कम से कम एक वार हुआ करेगी।

७—समाज के सब कार्यों के प्रबन्ध के लिये एक अन्तरङ्गसभा नियुक्त की जावेगी और इस में तीन प्रकार के सभासद् होंगे, अर्थात् (१) प्रतिनिधि (२) प्रतिष्ठित, और (३) अधिकारी।

८—अधिकारी पाँच प्रकार के होंगे:—
(१) प्रधान, (२) उपप्रधान, (३) मन्त्री (४) कोषाध्यक्ष (५) पुस्तकाध्यक्ष।

९—सब आर्य्य और आर्य्य सभासदों को संस्कृत वा आर्य्यभाषा (हिन्दी) जाननी चाहिए।

१०-सब आर्य्य और आर्य्य सभासदों को उचित है कि लाभ और आनन्द समयों में समाज पर भी दृष्टि रक्खें।

११-सब आर्य्य और आर्य्य सभासदों को उचित है कि, शोक और दुःख के समय में परस्पर सहायता करें, और आनन्द उत्सव में निमन्त्रण पर सहायक हों और छोटाई बड़ाई न गिनें।

आर्य समाजों के सत्संग के नियम।

१—यह सत्सँग प्रातः काल रविवार को हुआ करे।

२—पहले सब मिल कर संध्या वा अन्य वेद मन्त्र उच्च स्वरसे मिलकर पढ़ें।

३—फिर हवन यज्ञ हो।

४—फिर ईश्वर स्तुति, प्रार्थना उपासना के भजन हों।

५—तत्पश्चात् वेद तथा अन्य आर्य्य ग्रन्थों का पाठ हुआ करे।

६—पुनः उपदेश हो।

७—भजन तथा ऋग्वेद के अन्तिम सूक्त के इन ४ मन्त्रों का पाठ हो।

सं सामिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ

इलस्पदे समिध्यसे स नो वसून्या भर
ऋ० १०।१९१।१॥

हे (वृषन्) बलवान् और (अर्य) श्रेष्ट (अग्ने) तेजस्वी ईश्वर! तुम (विश्वानि) सब पदार्थों को (इत्) निश्चय से (सं सं आ-युवसे) एकत्रित करके संमिलित करते हो और (इलः पदे) भूमि अथवा बाणी के स्थान में (सं—इध्यसे) उत्तम प्रकार से प्रकाशित हो। इसलिये (स) वह तुम (नः) हम सब के लिये (वसूनि) सब प्रकार के निवास साधक धन (आरम्भ) प्राप्त कराओ ॥१॥

सं गच्छध्वं सं वदध्वं, सं वो मनांसि जानताम् । देवा भागं यथा पूर्वे, सं जानाना उपासते ॥ ऋ. १०।१९१।२॥

हे भक्तो! तुम सब (संगच्छध्वं) एक होकर प्रगति करो। (वः मनांसि) तुम सब के मन (सं जानतां) उत्तम संस्कारों से युक्त हों। तथा (पूर्वे) पूर्वकालीन (सं जानाना देवाः) उत्तम ज्ञानी और व्यवहार चतुर लोग (यथा) जिस प्रकार (भागं) अपने कर्तव्य का भाग (उप-आसते) करते आये हैं उसी प्रकार तुम भी अपना कर्तव्य करते जाओ ॥ २ ॥

समानो मन्त्रः समितिः समानी, समानं मनः सह चित्तमेषाम्। समानं मंत्रमभि मंत्रये वः, समानेन वो हविषा जुहोमि ॥
ऋ. १०।१९१।३॥

तुम सबका (मन्त्रः) विचार (समानः) एक हो। (समितिः) तुम्हारी सभा (समानी) सबकी एक जैसी हो। (मनः समानं) तुम सब का मन एक विचार से युक्त हो। (एषां चित्तं सह) इन सब का चित्त भी सब के साथ ही हो। (वः) तुम सब को (समानं मन्त्रं) एक ही विचार से (अभि मंत्रये) युक्त करता हूं और (वः) तुम सब को (समानेन हविषा) एक प्रकार अन्न और उपभोग (जुहोमि) देता हूं ॥३॥

समानीव आकूतिः, समाना हृदयानि वः
समानमस्तु वोमनो, यथा वःसुसहासति ॥
ऋ. १०।१९४।४॥

(वः आकूतिः) तुम सब का ध्येय

समान ही हो । (वः हृदयानि) तुम सब के हृदय समान हों । (वः मनः) तुम सब का मन (समानं अस्तु) समान हो । (यथा) जिससे (वः) तुम सब (सह सु आसति) समान होंगे ॥४॥

८—आवश्यक सूचना इत्यादि देकर शान्ति पाठ से सभा समप्त हो ।

विवाह के समय गाने योग्य

शुद्ध छन्द

भूमिका ।

माताओ, बहिनों, देवियो मैं छन्द सुनाऊं आज।
प्रभुका मनमें ध्यान धरो सुफल होवे सब काज॥
सदा क्रोध कर दूर दया से हर एक का सत्कार करो।
वैदिकधर्म की हर रीती को, चिमन कहे स्वीकार करो।

पहला छन्द

पहला छन्द आनन्द पूर्वक सुनो ध्यान लगाये।
वही सतवन्ती नार है जो नाम पति का ध्याये॥
सिर अपना जो चरण पति पर प्रेम सहित निवाये।
लोक और परलोक में वही सदा सुख पाये।

दूसरा छन्द

छन्द दूसरा कहूं सुनो तुम, वेदों का प्रचार करो।
सत्यधर्म पर तन और मन धन सबकुछ तुम निसार करो

पढ़ सीता के चरित्र को, अपने शुभ आचार करो।
दमयन्ती के नक्शे क़दम चल, भारत का उद्धार करो॥

तीसरा छन्द

छन्द तीसरा कहूं शान्ति से, सुनो ज़रा मन लाये।
करो धर्म की रक्षा बहिनो, सत्ययुग फिर आ जाये॥
नम्र भाव हो जाओ सभी तुम मान, अपमान मिटाये।
कर्म करो ऐसे तुम, भरत बैकुण्ठ बन जाये॥

चौथा छन्द

चौथा छन्द सुनो जरा तुम, करे, अर्ज यह दास।
जो चाहो आयु बढ़े तुम्हारी, करो योगाभ्यास॥
परमेश्वर सम समझ पति को करो इज्जत का पास।
कीर्ति तुम्हारी यूं बढ़े, ज्यूं तीज चन्द्र प्रकाश॥

पांचवां छन्द

छन्द पांचवां प्रेम पूर्वक, सुनो मेरी माताओ।
भजन सच्चिदानन्द का, हर पल छिन तुम गाओ॥

पतिव्रता स्त्री बन के जरा दिखलाओ ।
लाज रखेगा प्रभु तुम्हारी, उसी का नाम ध्याओ ॥

छठा छन्द

छटा छन्द सुनने से ही तो, आये तुम्हें ज्ञान ।
सास सुसर की सेवा कीजो, यही तीर्थ अशनान ॥
श्रेष्ठ गुरु है पति तुम्हारा यही भाव इक ठान ।
करे गुरु धारण जो नारी, वह मूर्ख नादान ॥

सातवां छन्द

छन्द सातवां कहूं मैं बहिनो, करो प्रण यह आज ।
करके वैदिक आचरण हम ले लेंगी स्वराज्य ॥
खद्दर पहन के रख लेवेंगी भारत मात की लाज ।
सिर दे अपना कौम की खातिर चिमन करेंगे राज ॥

(डाक्टर चिमनलाल रावलपिंडी)

शुद्धि-प्रवेश-पद्धति।

श्रीमद्दयानन्द जन्म शताब्दी सभा गुरुकुल भूमि बृन्दाबन ने जो प्रवेश (शुद्धि) पद्धति विद्वानों से निर्माण कराई है, उसे नीचे लिखते हैं। उसी के अनुसार प्रवेश (शुद्धि) संस्कार करना उचित है। जिस जन्म के वैदिकधर्म को न माननेवाले पुरुष व स्त्री को आर्यसमाज यानि आर्य जाति में प्रवेश करना हो, उसको अपने २ देश में प्रचलित रीति से हजामत कराके (यदि स्त्री हो तो क्षौर न करावें) खूब भली भान्ति स्नान कराके (स्त्री हो तो सिर सहित स्नान करावें) विल्कुल स्वच्छ वस्त्र पहना के, वेदि (यज्ञ करने के

लिए यजमानादि के बैठने का स्थान) पर आने से पहले सब लोगों के बीच में उससे नीचे के मन्त्रों का पाठ कराया जाय। और अर्थ भी सुना दिया जाय। ये हो मन्त्र बोलकर आचार्य उसके ऊपर कुछ जल का छींटा भी दे दे। वे मन्त्र ये हैं :—

पुनंतु मा देवजनाः पुनन्तु मनसाधियः ।
पुनन्तु विश्वा भूतानि, जातवेदः पुनाहि म

यजुः १९ । ३९ ॥

(देवजनाः) हे सब विद्वान् और श्रेष्ठ पुरुषो! आप (मा) मुझको (पुनन्तु) पवित्र कीजिये अर्थात् समझिये आप (मनसा) मन के साथ (धियः) बुद्धियों या कर्मों को भी अब (पुनन्तु) पवित्र समझिये।

(विश्वा) सब (भूतानि) प्राणी अर्थात् पुरुष स्त्री आपकी कृपा से मुझे (पुनन्तु) पवित्र करें, यानी समझें। (जातवेदः) हे ज्ञानी आचार्य! आप भी (मा) मुझे इन सब के सामने (पुनीहि) पवित्र कीजिये अर्थात् कह दीजिए, पवित्रता की उपाधि मुझे प्रदान कीजिये ॥१॥

पवित्रेण पुनीहि मा, शुक्रेण देव दीद्यत्।
अग्ने क्रत्वा क्रतूं २ ॥ रनु ॥

यजुः० १९। ४० ॥

(देव) हे शुभगुणयुक्त (अग्ने) हे ज्ञान के प्रकाश कारक आचार्य! आप (दीद्यत्) अति दीप्यमान होते हुए [यह रूप यङ्-लुगन्त 'दिव' धातु का है]। (शुक्रेण) शुद्ध (पवित्रेण) पवित्र कर्म से (मा)

मुझे (पुनीहि) पवित्र करें । (क्रतून् अनु) और मेरे यज्ञों को ध्यान में रख कर (क्रत्वा) यज्ञ कर्म से मुझको पवित्र कीजिये ॥ २ ॥

यत्ते पवित्रमर्चिष्यग्ने विततमन्तरा ।
ब्रह्म तेन पुनातु मां ॥ यजुः १९।४१

अग्ने ! हे ज्ञान से तेजस्वी आचार्य ! (ते) आप की (अर्चिषि) अग्नि की लपट के तुल्य चमकदार बुद्धिके (अन्तरा) अन्दर (यत्) जो (पवित्रं) शुद्ध (ब्रह्म) वेदज्ञान (विततं) फैला या भरा है (तेन) उससे (मा) मुझे (पुनातु) पवित्र कीजिये अर्थात् उसका उपदेश कीजिये, ताकि अपना आचरण वेदानुकूल कर सकूं ॥ ३ ॥

पवमानः सोअद्य नः पवित्रेण विच-

र्षणिः । यः पोता स पुनातु मा ॥

यजुः १९ । ४२ ॥

(पवमानः) वेद का उपदेश करके पवित्र करने वाला (विचर्षणिः) किये तथा न किये हुए सब को जानने वाला है (स) वह परमात्मा (अद्य) आज (नः) हमें या मुझे (पवित्रेण) हमेशा पवित्र कर्म करने से (पुनातु) पवित्र करे । और(यः) जो (पोता) स्वभाव अर्थात् बिना स्वार्थ वाले कारण से ही पवित्र करने वाला है (सः) वह परमात्मा (मा) मुझे पवित्र करे अर्थात् आज मैं सब के सामने परमात्मा से यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि कभी वेद विरुद्ध कार्य न करूँगा, जिस से कि अपवित्र होऊँ ॥ ४ ॥

इन मन्त्रों के पाठ के बाद वेदि में आसन पर बैठ कर आचार्य 'शन्नो देवी' मन्त्र से उसे आचमन करावे और "यज्ञोपवीत" पहनावे तथा "गायत्री मन्त्र" का उच्चारण करावे, संक्षेप में अर्थ भी सुना देना उचित है। फिर यथा विधि प्रार्थना मन्त्र स्वस्ति, शान्तिवाचन और सामान्य प्रकरण के सम्पूर्ण हवन को समाप्त करके पूर्णाहुति 'सर्वं वै पूर्ण ॐ स्वाहा' से पहले नीके के मन्त्रों से आहुति देनी चाहिए।

यद्देवा देवहेडनं देवासश्चकृमा वयं आग्नि-र्मा तस्मादेनसो, विश्वान्मुञ्चत्व ॐ हसः

(देवः देवासः) हे विद्वानो ! (वयं) हम ने (यत्) जो (देवहेडनं) विद्वानों का

अपराध (चकृमा) किया है । (अग्नि) यह यज्ञ की भौतिक अग्नि या ज्ञानी आचार्य या प्रकाश रूप परमात्मा (तस्मात्) उस (पापात्) पाप से (मा) हमें या मुझे (मुञ्चतु) छुड़ावे और (विश्वात्) समस्त (अहंसा) पाप से छुड़ावे ॥२॥

यदि दिवा यदि नक्तमेन ँ सि चकृमा वयम् । वायुर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व ँ हसः ॥ २ ॥

(यदि) अगर (दिवा) दिन में (यदि) अगर(नक्तं) रात में (वयं) हमने (एनांसि) पाप (चकृम) किए हैं तो (वायुः) भौतिक वायु या अपने ज्ञान से सर्वत्र पहुंच सकने वाला आचार्य या ईश्वर (आगे पहले की तरह) ॥२॥

यदि जाग्रद् यदि स्वप्न, एनांसि चकृमा वयम् । सूर्यो मा तस्मादेनसो, विश्वान्मुञ्चत्व ऽहसः ॥३॥

(यदि) (जाग्रत) जागने की हालत में (यदि) (स्वप्ने) सोने की हालत में (वयं एनाँसि चकृम) (सूर्य) भौतिक सूर्य या ज्ञान का प्रकाशक आचार्य या परमात्मा (आगे पहले की तरह) ॥३॥

यद् ग्रामे यदरण्ये यत्सभायां यदिन्द्रिये । यच्छूद्रे यदर्ये यदेनश्चकृमा वयं यदेकस्याधिधर्मणि, तस्यावयजनमसि ॥ यजु० २० । १७ ॥ ४ ॥

(यत्) जो (ग्रामे) गांव में (यत) (अरण्ये) जङ्गल में (यत्) (सभायां) सभा में पक्षपातादि (यत्) (इन्द्रिये) इन्द्रिय में

परनिन्दा, परनारी दर्शनादि (यत् शूद्रे) शूद्र के मुतल्लिक (यत्) जो देवों के मुतल्लिक (एनः) पाप को (वयं) हम (चकृम) कर चुके हैं। (एकस्य) स्त्री पुरुष दोनों में से एक के भी (अधि धर्मणि) कर्मके मुतल्लिक (तस्य) उस पापके हे आचार्य! आप (अवयजनं) नाशक (असि) हैं॥

अगर कोई जन्म से वेदविरोधी न हो, किसी कारण वश पतित (वेदविरोधी ईसाई यवन आदि मत में प्रविष्ट) हो गया हो और वह वैदिक धर्मियों में प्रविष्ट होना चाहे तो उस से नीचे के मन्त्र का पाठ भी कराया जाय। हमारी राय में जन्म के पतित से भी इस मन्त्र का पाठ कराना अनुचित नहीं:—

यद् विद्वांसो यद् विद्वांस, एनांसि चकृमा वयं । यूयं न तस्मान्मुञ्चत, विश्वेदेवाः सजोषसः ॥

अथर्व ६ । ११५ । १ ॥

(विद्वांसः विद्वांसः) हे हे विद्वानो ! (वयं) हमने (यत् यत्) जो जो (एनांसि) पाप (चकृम) किये हैं। (यूयं) आप (विश्वेदेवाः) सब विद्वान (सजोषसः) प्रीति के साथ (तस्मात) उस पाप समुदाय से (नः) हमको (मुञ्चत) पृथक कर दो ।

इस के बाद अर्थ सहित गायत्री का पाठ भी उससे कराना चाहिये । फिर नीचे के मन्त्र से एक आहुति देकर पूर्णा

हुति (ओं सर्वं वै पूर्ण ँ स्वाहा) करा दी जाय।

ओं अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्। इदमहमनृतात्सत्यमुपैमि। यजु० १।५॥

(व्रतपते, अग्ने) व्रतों के पालक हे विद्वद्गण या ईश्वर! मैं (व्रत) प्रण का (चरिष्यामि) पालन करूंगा (तत्) उस को करने में (शकेयं) आप की सहायता से समर्थ होऊं(मे) मेरा (तत्) वह (राध्यतां) पूरा हो (अहं) मैं (अनृतात्)झूठ से (इदं सत्यं) इस सत्य को (उपैमि) प्राप्त करता हूँ ॥ इति॥

———

आर्य समाचार पत्रों की सूची

नाम	भाषा	समय	स्थान
आर्य्य	हिन्दी	साप्ताहिक	लाहौर
अर्यजगत्	,,	,,	,,
अर्जुन	,,	,,	देहली
आर्य मार्तण्ड	,,	,,	अजमेर
आर्य्यमित्र	,,	,,	आगरा
आर्य्यसेवक	,,	,,	नरसिंहपुर
आर्य्यजीवन	,,	,,	पटना
सत्यवादी	,,	,,	शिकारपुर
अलंकार	,,	मासिक	गुरुकुलकां०
प्रभात	,,	,,	मेरठ
वैदिकधर्म	,,	,,	औंध (सितारा)
वैदिक मार्तण्ड	,,	,,	बड़ोदा

प्रकाश	उर्दु अर्ध	साप्ताहिक	लाहौर
आर्य्यगज़ट	,,	,,	,,
आर्य वीर	,,	,	रावलपिण्डी
जातपात तोड़क	,,	मासिक	लाहौर
आर्यवीर	उर्दु	साप्ताहिक	अफ़रीका
आर्यप्रकाश	गुजराती	,,	बम्बई
प्रताप	उर्दु	दैनिक	लाहौर
मिलाप	,,	,,	,,
तेज	,,	,,	देहली
वैदिक मैगज़ीन	अंग्रेजी	मासिक	लाहौर
डी० ए० वी० कालेज मैगज़ीन	,,		,,

आर्य समाज के कामका विस्तार

(१) समस्त दुनिया में १५१० के लगभग समाजें हैं ।

(२) ८३४ समाजों के अपने मन्दिर हैं ।

(३) आर्य सभासदों की संख्या ६४८००० के लगभग है । इस में जन-संख्या करने वालों के भ्रम तथा अनेक आर्यों को विना पूछे ही किसी दूसरी श्रेणी में लिख लेने के कारण कुछ संख्या रह भी गई है । इस के अतिरिक्त मनुष्य गणना के पीछे संख्या में और भी वृद्धि हुई है।

(४) १६५ सवेतन, २२८, निर्वेतन, १३० संन्यासी और ४०० स्वतन्त्र व्याख्याता तथा भजनीक प्रचार करते हैं ।

(५) ७ कालेज, २०० हाई स्कूल, १५० अङ्गरेज़ी मिडिलस्कूल, १९२ प्राइमरी स्कूल और १४२ रात्रि स्कूल हैं।

(६) २८ गुरुकुल, ३०० संस्कृत पाठशालायें और ३ कन्या गुरुकुल हैं।

(७) १ कन्या कालेज, २ कन्या हाईस्कूल और ७०० कन्या पाठशालायें हैं।

(८) ५० अनाथालय, ४० विधवाश्रम और १४ मुफ्त दवा बांटने के औषधालय हैं।

(९) आर्यों के निजी अथवा समाधीन ३० प्रेस और १०० पुस्तक विक्रयालय हैं।

(६) लखनऊ में एक आर्यन कोवापरेटिव बैंक है।

(११) २ योगमण्डल तथा २ सन्यासी पाठशालायें हैं।

(१२) हिन्दी, उर्दू, अङ्गरेज़ी, गुजराती, तैलगू, सिन्धी आदि भिन्न भिन्न भाषाओं के दैनिक साप्ताहिक, पाक्षिक और मासिक ४० से ऊपर समाचारपत्र हैं।

(१३) डी० ए० वी० कालेज, गुरुदत्त भवन, दयानन्द ब्राह्ममहा विद्यालय, वैदिक आश्रम लाहौर के विशाल तीन पुस्तकालयों में रिसर्च (अनुसन्धान) का कार्य होता है।

(१४) भारत तथा बाहर के देशों में प्रान्त वार आर्यप्रतिनिधि सभायें हैं,- जिन का काम आर्य संस्थाओं का प्रबन्ध करना, उपदेशकों, पुस्तकों

और समाचार पत्रों द्वारा प्रचार करना, तथा प्रत्येक समाज पर निरीक्षण करना आदि है। प्रान्तवार उन के केन्द्रस्थानों के नाम ये हैं:—
लाहौर (पंजाब) आगरा (यू० पी०) कलकत्ता (बङ्गाल विहार) नरसिंहपुर (सी० पी०) अजमेर (राजपूताना) बम्बई (बम्बई) हैदराबाद (निज़ाम राज्य) हैदराबाद (सिन्ध) रंगून (ब्रह्मा) पोर्ट लोईस (मोरिशस द्वीप) जेकोब्स (दक्षिणी अफ्रीका) इन के अतिरिक्त विद्या तथा जीविका प्राप्ति या सैर के लिए गए हुए भारतीय, दुनियां के सभी दशों यथा संयुक्त राज्य अमरीका, कैनेडा, बृटिशगायना, इङ्गलैण्ड, जर्मनी, फ्रान्स, अराक, अरब, तिब्बत, चीन,

जापान, आस्ट्रेलिया, और मलाया आ. द में आर्य समाजें स्थापित कर रहे हैं ॥

× × × ×

पिछले पृष्ठों में आपने वैदिक धर्म के सौन्दर्य और मनुष्य जन्म सफल करने वाले साधनों का स्वाध्याय कर लिया है। अब यदि आप समझें कि यह धम आप के लिये कल्याणकारी है तो :४४५ पृष्ठ पर लिखित प्रवेशपत्र भर कर आर्य समाज को दे दें ॥

आर्य्यसमाजसम्बन्धि विशेष घटनाएं।

सन् १७९७—स्वामी विरजानन्दजी का जन्म
१८२४—स्वामी दयानन्दजी का जन्मटंकारा (रियासत मोरवी में)
१८३६—स्वामी विरजानन्द का मथुरा में वास आरम्भ।
१८३८—स्वामी दयानन्दकी बोधशिवरात्रि
८४०—स्वामी दयानन्द की बहन का देहान्त
१८४५—स्वामी दयानन्द का गृह त्याग।
१८४७—मूलशङ्कर का सन्यास धारण कर दयानन्द बनना।
११८५४—महात्मा मुंशीराम (स्वामी श्रद्धानन्द) का जन्म।
१८५७—स्वामी विरजानन्द की प्रतिज्ञा ऋषिकृत ग्रन्थ पढ़ाने विषयक।
१८५८—पंडित लेखराम का जन्म।

१८६०—स्वामी दयानन्द की स्वामी विरजानन्द द्वारा शिक्षा।

१८६३—स्वामी दयानन्द का स्वामी विरजानन्द से आज्ञा प्राप्त कर सत्य का प्रचार करना।

१८६४—पंडित गुरुदत्त का जन्म।

१८६६—स्वामी दयानन्द की स्वामी विरजानन्द से पुनः भेंट।

१८६७—स्वामी दयानन्द का हरिद्वार कुम्भ पर पाखण्ड खण्डनी पताका गाड़ना।

१८६८—स्वामी दयानन्द को प्रथम वार विष दिया गया।

१८६८—स्वामा विरजानन्दजी का देहान्त

१८६९—स्वामी दयानन्द का काशो शास्त्रार्थ

१८७२—स्वामी दयानन्द का म० केशवचन्द्र सेन व म० देवेन्द्रनाथ से वार्तालाप।

१८७५—आर्यसमाज की बम्बई में स्थापना
१८७७—आर्यसमाज लाहौर की स्थापना।
१८७८—आर्यसमाज मेरठ की स्थापना।
१८८१—पंडित लेखरामकी दयानन्द से भेंट
१८८२—पंडित गुरुदत्त को स्वामी दयानन्द का दर्शन प्राप्त। स्वामी दयानन्द का देहान्त दीपावली के दिन अजमेर में।
१८८६—दयानन्द कालेज लाहौर की स्थापना
१८८९—पंडित गुरुदत्त का देहान्त।
१८९७—पंडित लेखराम का एक मुसलमान द्वारा बलिदान ६ मार्च लाहौर में।
१९०१—गुरुकुल-वृन्दाबन की स्थापना सिकन्दरा बाद में।
१९०२—गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना।
१९०५—कांगड़ा दुर्भिक्ष में आर्य्यसमाज की सहायता।

१९२१—मोपला विद्रोह के पश्चात् मालाबार में आर्यसमाज का कार्य वा कालीकट(मद्रास)में आर्यसमाजकी स्थापना।

१९२३—म० रामचन्द्र का जम्मू रियासत में अछूतोद्धार कार्य के कारण बलिदान

१९२५—मथुरा में दयानन्द शताब्दीमहोत्सव

१९२६—टंकारा में दयानन्द शताब्दी उत्सव

१९२६—स्वामी श्रद्धानन्द का एक मुसलमान अबदुलरशीद द्वारा बलिदान २३ दिसम्बर को देहली में

१९२७—म० राजपाल पर २६ सितम्बर को खुदाबख्श का आक्रमण।

१९२७—स्वामी सत्यानन्दजी पर ९ अक्तूबर को अब्दुलअजीज़ का लाहौर में आक्रमण।

१९२७—४-५ नवम्बर को देहली में भारत के आर्य्यों की कान्ग्रेस।

प्रवेश पत्र ।

श्री युत् मन्त्री जी आर्य समाज,

....नमस्ते

महाशय जी ! मैं प्रसन्नता पूर्वक आर्य्य समाज के उद्देश्यों के (जैसा कि दस नियमों में वर्णन किए गए हैं) अनुकूल आचरण करना स्वीकार करता हूं । मेरा नाम आर्य्य-समाजके सभ्यों में लिख लेवें ।

हस्ताक्षर ________________

आर्य्य-समाज में प्रवेश चाहने वाले नीचे लिखे प्रश्नों का उत्तर दें:—

१—नाम

२—पिता का नाम

३—जाति आदि

४—आयु (उमर)

५—निवास स्थान

६—क्या काम करते हैं ?

७—पूरा पता

८—आमदनी (अगर किसी विशेष कारण से न लिखना चाहें तो न लिखें)

९—मासिक वा वार्षिक कितना चन्दा देना चाहते हैं, या नहीं देना चाहते।

१०–कौन सी भाषा जानते हैं (संस्कृत या आर्य्य भाषा)

११–विवाह हुआ या नहीं

१२–यदि सन्तान हो तो उन के नाम और उमर

१३–स्त्रियाँ भी आर्य्य समाज की सभासद् हो सकती हैं।

नोट—उपनियम अनुसार चन्दा १/१०० हिस्सा आमदनी का दें।

शान्तिपाठ

ओ३म्

द्यौः शान्तिः । अन्तरिक्षँ शान्तिः ।
पृथिवी शान्तिः । आपः शान्तिः ।
औषधयः शान्तिः । वनस्पतयः शान्तिः ।
विश्वेदेवा शान्तिः । ब्रह्म शान्तिः ।
सर्वँ शान्तिः । शान्तिरेव शान्तिः ।
सा मा शान्तिरेधि ॥

ओ३म् शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!

विषय	मन्त्र सूची ।	पृष्ठ

विषय **भजन सूची**	पृष्ठ

भक्ति मार्ग की पुस्तकें

ओंकार उपासना ≡) कल्याण मार्ग ≡) मुक्ति सोपान ॥=) सरल योगाभ्यास ।–) प्राणायामविधि =) सत्य उपदेश माला १) आनन्द संग्रह १) भक्ति दर्पण ॥~) आत्म दर्शन १॥) गीता गुटका ॥) प्रार्थना पुस्तक ≡) गीतामृत २) आर्य्याभिविनय ।–) ईशोपनिषद् का स्वध्याय ॥।=) सन्ध्या योग ।~) सन्ध्या रहस्य ।≡) सन्ध्या प्रदीपिका ॥=) भजनामृत ॥)

इनके अतिरिक्त वैदिक धर्म सम्बन्धी सब पुस्तकें हम से मिल सकती हैं।

राजपाल–मैनेजर

आर्य्य पुस्तकालय, लाहौर।